श्री शिवसागर ग्रन्थमाला पुष्प २८

श्रमणचर्या

सम्पादक :

आर्यिका १०५ श्री विशुद्धमती माताजी

प्रकाशक :

श्री आचार्य शिवसागर दिगम्बर जैन ग्रन्थमाला

शान्तिवीरनगर, श्रीमहावीरजी (राज०)

'श्रमणचर्या' के प्रकाशन का सम्पूर्ण व्ययभार स्वर्गीय श्रीमान् श्रीचन्दजी बगड़ा, गौहाटी (आसाम) की पुण्य स्मृति में उनकी धर्मपत्नी श्रीमती लाड़ाबाई जैन एवं उनके सुपुत्रों श्री सुमेरचन्द, श्री वीरेन्द्र और श्री नरेन्द्र ने वहन किया है, एतदर्थ वे हार्दिक धन्यवाद के पात्र हैं। — प्रकाशक

卐 卐 卐

श्रमणचर्या

सम्पादक : आर्यिका विशुद्धमतीजी

संस्करण : द्वितीय, १००० प्रतियाँ

प्रकाशन तिथि : मकर संक्रान्ति, १४-१-१९९०

मुद्रक : हिन्दुस्तान आर्ट प्रिन्टर्स, जोधपुर (राजस्थान)

दो शब्द

जगत् के सभी कार्य बाह्याभ्यन्तर कारणों की पूर्णता होने पर ही सम्पन्न होते हैं। कारणों की पूर्णता का अर्थ है निमित्त-उपादान का अनुकूल प्रवर्तन, बाधक कारणों का अभाव, समय एवं विधि-विधान आदि की पूर्णता। इनमें अभ्यन्तर कारण (उपादान की जाग्रति आदि) हमारी बुद्धि एवं पुरुषार्थ के विषय नहीं हैं किन्तु बाह्य कारण पुरुषार्थ-प्रधान हैं। बाह्य कारणों की पूर्णता हो जाने पर भी कार्य की पूर्णता भजनीय है अर्थात् कार्य पूर्ण हो भी और न भी हो किन्तु यह निश्चित है कि बाह्य प्रवृत्ति (कारणों) की अनुकूलता एवं पूर्णता के बिना कार्य कदापि पूर्ण नहीं होगा, इसी कारण आचार्यों ने अभ्यन्तर की सँभाल के साथ-साथ साधु एवं श्रावक दोनो को बाह्य क्रियाएँ पूर्ण करने का आदेश दिया है। परम पूज्य स्वर्गीय दिगम्बराचार्य शिवसागर महाराजजी अपने शिष्यवर्ग से कहा करते थे कि नाटक के रंगमंच पर आने वाला पात्र यदि राजा बनकर आया है तो वह उसका निर्वाह तभी कर सकता है जब राजा के अनुरूप वस्त्राभूषण, चाल-ढाल एव बोलचाल आदि का व्यवहार पूर्ण रूप से करेगा, उसमें कमी होने पर वह सफल नहीं हो सकता; इसी प्रकार आप लोगो ने गृहादि त्याग कर आत्मकल्याण हेतु साधुपद स्वीकार किया है, अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए आलस्य आदि का त्यागकर बाह्य क्रिया-विधान को आगम की आज्ञानुसार यथाकाल और यथायोग्य करने की चेष्टा करते रहना चाहिए, क्योंकि बाह्य क्रिया-विधान की पूर्णता हो जाने पर अभ्यन्तर (लक्ष्य) की पूर्णता हो भी और न भी हो किन्तु इसकी पूर्णता के बिना लक्ष्य कदापि पूर्ण नहीं हो सकता, कारण कि मिथ्यात्व के बाद प्रमाद ही आत्मा का प्रबल शत्रु है। इसके जीवित रहते मोक्ष-मार्ग पर निर्दोषरीत्या गमन नहीं हो सकता तथा आलस्य को निर्बल करने का सबल साधन है षड़ावश्यक आदि क्रियाओं को उत्साहपूर्वक यथायोग्य, यथासमय और यथाकाल तक करना, अतः सभी कल्याणेच्छु भव्यात्माओं का कर्त्तव्य है कि वे आगम के आदेशानुसार ही अहोरात्रि की अपनी सम्पूर्ण क्रियाएँ यथाविधि सम्पन्न करें।

अहोरात्रि की पूर्ण क्रियाएँ करते हुए भी यदि आलस्य आदि के कारण कृतिकर्म-विधि में कमी रह जाती है तो वे क्रियाएँ अथवा कृतिकर्म अपने पूर्ण फल को देने में समर्थ नही हो पाते, इसी बात को लक्ष्य में रखकर श्रमणचर्या का संकलन प्रारम्भ किया था। भावना यही

थी कि कृतिकर्म की दण्डक आदि की पूर्ण विधि अट्ठाईस बार ही लिखूंगी, किन्तु पुस्तक का कलेवर बढ़ जाने के भय से भावना पूर्ण नहीं हो सकी। उच्चारण-सुविधा के लिए लम्बे-लम्बे सामासिक-पदों को मैंने हाइफन लगा कर विभक्त किया है।

कृतिकर्म आदि की पूर्ण विधि का मुझे ज्ञान नहीं है, मूलाचार प्रदीप, अनगार, चारित्रसार एवं क्रियाकलाप आदि ग्रन्थों के आधार से मैंने अपने विवेक से लिख दिया है। "को न विमुह्यति शास्त्र-समुद्रे" के अनुसार त्रुटियाँ रहना सम्भव है अतः साधुजन उन त्रुटियों को सुधार कर ही क्रियाविधि सम्पन्न करें, ऐसी मेरी विनम्र प्रार्थना है।

"श्रमणचर्या" का प्रथम संस्करण वीरनिर्वाण संवत् २५०६ मे प्रकाशित हुआ था। दस वर्ष बाद यह दूसरा संस्करण प्रकाशित हो रहा है। प्राचीन हस्तलिखित प्रामाणिक सामग्री की उपलब्धि के अभाव में इसमें विशेष संशोधन तो सम्भव नहीं हुए है तथापि गतवर्ष भीण्डर वर्षायोग में आचार्य श्री अजितसागरजी के सान्निध्य में प्रथम संस्करण में रही त्रुटियों का परिमार्जन किया गया है और मुद्रण सम्बन्धी जो भूलें रह गई थीं, उनको दूर किया गया है। उपयोगी जानकर श्री माघनन्दि आचार्य विरचित शास्त्रसार-समुच्चय और अध्यात्मध्यानसूत्राणि भी ग्रन्थ के अन्त मे संकलित किए गए हैं।

श्रीमती लाड़ाबाई जैन एवं उनके सुपुत्रों सर्वश्री सुमेरचन्द, वीरेन्द्र और नरेन्द्र जैन (गौहाटी) ने इसके प्रकाशन का व्ययभार वहन किया है, उन्हें आशीर्वाद।

दिनाङ्क १-१-९०

—आर्यिका विशुद्धमती

अनुक्रम

कृपया पृ. स. ६२ पर पंक्ति संख्या १५ में आपराह्निक के स्थान पर माध्याह्निक पढ़ें ।

भक्तियाँ कहाँ-कहाँ हैं ?

卐

तृणं वा रत्नं वा रिपुरथ परं मित्रमथवा,
स्तुतिर्वा निन्दा वा मरणमथवा जीवितमथ ।
सुखं वा दुःखं वा पितृवनमहो सौधमथवा,
स्फुटं निर्ग्रन्थानां द्वयमपि समं शान्तमनसाम् ।।

卐

देहे निर्ममता गुरौ विनयता नित्यं श्रुताभ्यासता,
चारित्रेऽस्खलिता च मोहशमता संसारनिर्वेगता ।
अन्तर्बाह्य-परिग्रहत्यजनता धर्मज्ञता साधुता,
साधो ! साधुजनस्य लक्षणमिदं संसारविक्षेपणम् ।।

श्रमणचर्या

❀ मंगलाचरण ❀

संसार–सागर–तरण–हेतु वज्रसेतु समान हैं,
 कर्मघाता मोक्षदाता सकलसिद्धि निधान हैं।
पार्श्व जिन, माता सरस्वति परम गुरु वन्दन करूँ,
 चारित्रसाधक भवनिवारक श्री 'श्रमणचर्या' लिखूँ ।।

"सम्यक्-यताः पापक्रियाभ्यो निवृत्ताः संयताः" जो हिंसादि पापाचरणों से सदा के लिए निवृत्त हो जाते हैं उन्हें संयत, साधु एवं श्रमण कहते हैं। साधुओं का मूल साध्य विषय रत्नत्रय है। रत्नत्रय को साधन करने के उपाय यम और नियम हैं, इन यम और नियमों के माध्यम से साधु जीवन पर्यन्त पंच महाव्रत, पंच समिति, पंच इन्द्रियरोध, छह आवश्यक-क्रिया, लोच, आचेलक्य, स्नानत्याग, भूमिशयन, अदन्तधावन, खड़े-खड़े आहार और दिन में एक बार आहार, इन अट्ठाईस मूलगुणों का पालन करते हैं।

अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और परिग्रहत्याग महाव्रत के भेद से महाव्रत पाँच होते हैं। यथाः—प्रमाद के वशीभूत होकर प्राणियों के इन्द्रिय, बल, आयु और श्वासोच्छ्वास प्राणों का घात नहीं करना अर्थात् समस्त प्राणियों पर दया भाव रखना **अहिंसा महाव्रत** है।

प्रमादवश राग, द्वेष, मोह, चुगली, ईर्षा, मात्सर्य आदि दोषों से भरे हुए असत्य भाषण का तथा जिस सत्य भाषण से प्राणियों को पीड़ा पहुँचे ऐसे भाषण का त्याग करना **सत्य महाव्रत** है।

प्रमादवश, किसी भी स्थान पर पड़े हुए, भूले हुए, रखे हुए द्रव्य को तथा पुस्तक, उपकरण एवं शिष्य आदि परद्रव्यों को बिना दिये ग्रहण नहीं करना **अचौर्य महाव्रत है** ।

मनुष्यिनी, तिर्यंचिनी और देवाङ्गनाओं में तथा इनकी फोटो, चित्र एवं मूर्ति आदि में स्त्रीजन्य राग परिणामों का त्याग करना **ब्रह्मचर्य महाव्रत** है ।

धन-धान्यादि दस प्रकार के बाह्य और मिथ्यात्व, क्रोध, मान, माया, लोभ एवं नौ नोकषाय इन चौदह प्रकार के अभ्यन्तर परिग्रह में तथा संयम, ज्ञान एवं शौच के साधनभूत पीछी, कमण्डलु, शास्त्र आदि में ममत्व (मूर्छा) नहीं रखना **परिग्रहत्याग महाव्रत है** ।

ईर्या, भाषा, एषणा, आदाननिक्षेपण और प्रतिष्ठापन के भेद से समितियाँ पाँच प्रकार की हैं। यथा :-शास्त्राध्ययन, तीर्थयात्रा, गुरुवन्दना आदि धार्मिक कार्यों के लिए तथा आहार, निहार आदि के लिए सूर्योदय के बाद चित्त की एकाग्रतापूर्वक चार हस्त प्रमाण जमीन देखकर चलना, **ईर्या समिति** कहलाती है ।

पशून्य, हास्य, कर्कश, युद्धप्रवर्धक, परनिन्दा, आत्मप्रशंसा स्त्री-कथा, भोजनकथा, चोरकथा, राजकथा तथा अन्य भी रागद्वेषोत्पादक भाषा का त्याग कर हित, मित, प्रिय भाषा बोलना **भाषा समिति** कहलाती है ।

असातावेदनीय कर्म के तीव्र उदय से उत्पन्न होने वाली क्षुधा को शान्त करने हेतु तथा वैयावृत्त्यादि के लिये साधु जो नवकोटि (मन, वचन, काय × कृत, कारित, अनुमोदना = ९) से निर्दोष, छयालीस (१६ उद्गम, १६ उत्पादन, १० एषणा और ४ अंगार) दोषों से रहित तथा शीत, उष्ण, लवण, मधुर, रुक्ष, स्निग्धादि आहार में रागद्वेषरहित आहार ग्रहण करते हैं, उसे **एषणा समिति** कहते हैं ।

ज्ञानोपधि (शास्त्र आदि), संयमोपधि (पिच्छिका आदि), शौचोपधि (कमण्डलु आदि) एवं चटाई, फलक, तृण आदि पदार्थ लेते या

रखते समय प्रयत्नपूर्वक प्रवृत्ति करनी चाहिए। इस प्रकार की प्रवृत्ति को **आदान-निक्षेपण समिति** कहते हैं।

जहाँ असंयमीजनों का आना-जाना न हो ऐसे एकान्त स्थान में वनस्पतिकायिक एवं द्वीन्द्रियादिक जीवों से रहित अचित्त प्रदेश में, नगरादि से दूर, विस्तीर्ण, बिलादि से रहित एवं जहाँ किसी का निषेध न हो ऐसे प्रदेश में यत्नाचार पूर्वक शोधन कर मल-मूत्रादि का क्षेपण करना **प्रतिष्ठापन समिति** कहलाती है।

चेतन-अचेतन पदार्थों से उत्पन्न हुए मृदु, कठोर, स्निग्ध, रुक्ष, हल्के, भारी, ठण्डे और उष्ण स्पर्श में आनन्द एवं खेद नहीं करना **स्पर्शनेन्द्रियनिरोध मूलगुण** है।

खाद्य, स्वाद्य, लेह्य और पेय के भेद से आहार चार प्रकार का होता है। यह आहार तीखे, कडुवे, कसायले, आम्ल और मधुर (मीठा और लवण) इन पाँच रसों में से किन्हीं-न-किन्हीं रसों के सम्मिश्रण से तैयार किया जाता है। ऐसे (प्रासुक, योग्य एवं पापास्रवके कारणों से रहित) आहार को ग्रहण करते समय मन में गृद्धता एवं ग्लानि अर्थात् मधुर आदि आहार में राग और कडुवे आदि आहार में द्वेष नहीं करना **रसनेन्द्रियनिरोध मूलगुण** है।

जीवात्मक (कस्तूरी, गोरोचन आदि) और अजीवात्मक (चन्दन, फूल, मिट्टी का तेल आदि) पदार्थों में स्वभावतः तथा सम्मिश्रण से प्राप्त होने वाली सुगन्ध में राग और दुर्गन्ध में द्वेष नहीं करना **घ्राणेन्द्रियनिरोध मूलगुण** है।

ज्ञान-दर्शनोपयोगात्मक चैतन्ययुक्त सचित्त (देव, मनुष्य, स्त्री आदि) पदार्थों के, अचित्त (देव, मनुष्य, स्त्रियों आदि के प्रतिबिम्बों) पदार्थों के तथा घट-पटादि अजीव पदार्थों के संस्थान, वर्ण और क्रिया आदि को देखकर उनमें राग-द्वेष तथा अभिलाषा आदि नहीं करना, **चक्षु-इन्द्रियनिरोध मूलगुण** है।

चेतन, अचेतन पदार्थों के प्रिय, अप्रिय शब्दों को सुनकर राग-द्वेष आदि नहीं करना **कर्णेन्द्रियनिरोध मूलगुण** है ।

आधि (मानसिक पीड़ा), व्याधि (शारीरिक पीड़ा) से ग्रस्त हो जाने पर भी इन्द्रियों के वशीभूत न होकर जो दिन और रात्रि के आवश्यक कार्य साधुओं को करने ही चाहिए, उन्हीं कार्यों को **आवश्यक** कहते हैं। सामायिक, चतुर्विंशतिस्तव, वन्दना, प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान और कायोत्सर्ग। इस प्रकार आवश्यककर्म छह प्रकार के होते हैं ।

जीवन - मरण, लाभ - अलाभ आदि में समान परिणाम होना अथवा त्रिकाल देववन्दना करना **सामायिक मूलगुण (आवश्यक)** है ।

वीतराग, सर्वज्ञ और हितोपदेशी ऋषभ, अजित, सम्भव आदि चौबीस तीर्थंकरों के अथवा भूत, भविष्यत्, वर्तमान सम्बन्धी तीर्थंकरों के गुणों का भक्तिपूर्वक महत्त्व (गुण) वर्णन करना, **चतुर्विंशतिस्तव मूलगुण (आवश्यक)** है ।

कर्म रूपी वन को भस्म करने के लिए अग्नि सदृश पंच परमेष्ठियों अथवा चौबीस तीर्थंकरों में से किसी भी एक पूज्य आत्मा की मन, वचन, काय की शुद्धि एवं कृतिकर्म पूर्वक स्तुति तथा नमस्कार आदि करना **वन्दना मूलगुण (आवश्यक)** है ।

प्रमाद आदि के वश, व्रतों में जो दोष उत्पन्न हो गये हों उनसे आत्मा को बचाना अर्थात् निन्दा-गर्हा द्वारा उनका नाश करना **प्रतिक्रमण मूलगुण (आवश्यक)** है ।

भविष्य में पाप-कर्मों का निवारण करने के लिए रत्नत्रय स्वरूप मोक्षमार्ग के विरोधी—नाम, स्थापना, द्रव्य (उपधि एवं आहार), क्षेत्र, काल तथा भाव रूप छहों अयोग्य विषयों का त्याग करना अथवा वर्तमान और भविष्यत् काल सम्बन्धी अतिचारों को दूर करना **प्रत्याख्यान मूलगुण (आवश्यक)** है ।

प्रतिक्रमण और प्रत्याख्यान में अन्तर—भूतकाल में उत्पन्न हुए दोषों का त्याग करना **प्रतिक्रमण** और वर्तमान एवं **भविष्यत्काल में**

द्रव्यादिक के दोषों का त्याग करना **प्रत्याख्यान** है ।

निमित्त–नैमित्तिक क्रियाओं में सत्ताईस एवं एक सौ आठ आदि उच्छ्वास संख्या आगम में जिस काल में कही गई है उस काल में जिनेन्द्रदेवादिकों के गुण-चिन्तन सहित जो शरीर के ममत्व का त्याग किया जाता है, वह **कायोत्सर्ग मूलगुण (आवश्यक)** है ।

उत्कृष्टतः दो माह में, मध्यम तीन माह में, जघन्य चार माह में, उपवासपूर्वक दिन में हाथों से मस्तक, दाढ़ी और मूंछ के बाल उखाड़ना **लोच** नामक **मूलगुण** है । ('करोड़ों रोग व क्लेश होने पर भी पाँचवें महीने में लोच नहीं करना चाहिए ।)

कपास, ऊन, रेशम आदि से बने वस्त्र, हरिण आदि की चर्म, वृक्ष आदि की छाल, शुष्क आदि पत्ते एवं तृण आदि से अपना शरीर न ढकना और हार, मुकुट, विलेपन आदि से शरीर को अलंकृत नहीं करना **आचेलक्य (नग्नत्व) मूलगुण** है ।

जिस मल से सर्व अंग ढक जाते हैं उस मल को जल्ल, जिससे शरीर का एकादि भाग व्याप्त होता है उसे मल्ल तथा रोमछिद्रों से जो जल बाहर निकलता है उसे स्वेद कहते हैं । इन जल्लादि मलों को साफ कर शरीर को साफ और सुन्दर बनाने के उद्देश्य से जल में प्रवेश कर स्नान करने, सुगन्धित उबटन आदि लगाने, आँखों में अंजन आदि डालने तथा अंगों को जल आदि से धोने का त्याग करना **अस्नानव्रत मूलगुण** है ।

जहाँ स्त्री, पशु, नपुंसक एवं असयमी जीवों का आवागमन न हो तथा जहाँ संक्लेश परिणामों के कारणभूत जीव-हिंसा, मर्दन, कलह आदि न हों ऐसे गृहस्थयोग्य शय्या और संस्तर आदि से रहित चारित्रयोग्य प्रासुक भूमि पर अथवा अपने शरीर प्रमाण तृणादि के संस्तर पर अथवा काष्ठ के फलक आदि पर दण्ड के समान अथवा धनुष के

---

१. तुर्य्यामासान्तरे लोचः कर्तव्यो मुनिभिः सदा ।
रोग-क्लेशादि-कोटीभिः पंचमे मासि जातु न ॥२३५॥ मू. प्रदीप, अ. ४

समान एक बगल से सोना (नीचे और ऊपर मुख करके नहीं सोना) **भू-शयन नामक मूलगुण** है।

इन्द्रियसंयम के रक्षण हेतु हाथ की अंगुली, नख, नीम-बबूल आदि की लकड़ी, पत्थर, वृक्ष की छाल, खप्पर, चांवलों का भूसा, आटा एवं अन्य भी तृण विशेष आदि के द्वारा दाँतों को साफ-स्वच्छ नहीं करना **अदन्तधावन मूलगुण** है।

साधु दीवार एवं खम्भे आदि के आश्रय खड़े होकर, बैठकर, लेटकर अथवा तिरछे लेटकर आहार नहीं लेते। जहाँ तीन भूमि-प्रदेश (जिस स्थान पर साधु आहार के लिए खड़े होते हैं, जहाँ उच्छिष्ट पदार्थ गिरता है और जहाँ दाता खड़ा होता है ऐसे तीन भूमिप्रदेश जहाँ) शुद्ध हों वहाँ दोनों पैरों के बीच चार अंगुल का अन्तर रखते हुए दीवार आदि के आश्रय बिना खड़े होकर अंजुलिपुट अर्थात् हाथों में आहार लेना **स्थितिभोजन नामक मूलगुण** है।

सूर्योदय से तीन घड़ी, मध्याह्न सामायिक काल और सूर्यास्त के पूर्व की तीन घड़ी छोड़कर मध्यकाल में एक बार आहार ग्रहण करना **एकभक्त नामक मूलगुण** है।

साधु के ये उपर्युक्त मूलगुण अट्ठाईस ही होते हैं, अट्ठाईस से कम या अधिक नहीं होते। सामान्यतः तो ये अट्ठाईस मूलगुण यम रूप से अर्थात् जीवनपर्यन्त ही पालन किये जाते हैं, किन्तु विशेष यह है कि इन अट्ठाईस मूलगुणों में महाव्रतादि तो यम रूप अर्थात् आजन्म पालन किये जाते है और सामायिक एवं प्रतिक्रमण आदि (चूंकि जीवन-पर्यन्त पालन किये जाते हैं किन्तु प्रतिदिन में वे) नियम रूप अर्थात् अल्पकाल की अवधि लिये हुए होते हैं।

उपर्युक्त अट्ठाईस मूलगुणों का विधिवत् पालन करते हुए रोग, उपसर्ग, मार्ग-परिश्रम आदि से पीड़ित होने पर भी इन्द्रियों के आधीन न होकर साधुओं के द्वारा अहोरात्रि (२४ घण्टों) में जो सामायिक एवं प्रतिक्रमण आदि छह कार्य किये जाते हैं वे तथा अन्य

स्वाध्याय आदि और भी कुछ आवश्यक कार्य किये जाते हैं, वे सब कृतिकर्म पूर्वक ही होने चाहिए ।

कृतिकर्म का लक्षण

पापविनाशन के उपाय को **कृतिकर्म** कहते हैं। अथवा जिन अक्षरसमूहों से या जिन परिणामों से अथवा जिन क्रियाओं से आठ प्रकार के कर्म काटे (छेदे) जाते हैं, उसे **कृतिकर्म** कहते है। अर्थात् दो अवनति (भूमि स्पर्श करके नमस्कार), बारह आवर्त्त और चार शिरोनति पूर्वक जो सामायिक स्तव, कायोत्सर्ग और चतुर्विंशतिस्तव का (मन, वचन, काय की शुद्धिपूर्वक) प्रयोग किया जाता है, उसे **कृतिकर्म** कहते हैं ।

साधुजनों को अहोरात्रि (२४ घण्टों) में निम्नलिखित अट्ठाईस कृतिकर्म अवश्य करने योग्य हैं। यथा—एक काल की सामायिक में चैत्य एवं पञ्चगुरुभक्ति सम्बन्धी दो कृतिकर्म (कायोत्सर्ग) होते हैं। अतः पूर्वाह्न, मध्याह्न और अपराह्न के (३×२)=६ कृतिकर्म हुए। एक काल सम्बन्धी प्रतिक्रमण में सिद्ध, प्रतिक्रमण, निष्ठितकरण वीर और चतुर्विंशति तीर्थंकर भक्तिजन्य चार अर्थात् दोनों काल के (४×२) =८ कृतिकर्म हुए। पूर्वाह्न, अपराह्न, पूर्वरात्रि और अपररात्रि सम्बन्धी चार काल स्वाध्याय के (एक काल सम्बन्धी ३ कृतिकर्म अतः) १२ कृतिकर्म हुए। रात्रियोग प्रतिष्ठापन का एक और निष्ठापन का एक, इस प्रकार (६+८+१२+२=२८) कृतिकर्म हैं, जो मुनि-आर्यिकाओं के लिये अवश्य ही करणीय हैं ।

इस प्रकार अब षड़ावश्यक, २८ कृतिकर्म, अभिषेक, आहार एवं दीर्घशंका आदि अहोरात्रि की समस्त क्रियाएँ किस विधि से करनी चाहिए ? उसका विवेचन किया जाता है ।

साधुजन अहोरात्रि में किये गये ध्यान-अध्ययन और तपश्चरण आदि के द्वारा उत्पन्न हुए शरीर के खेद को दूर करने के लिये जो अल्प

निद्रा लेते हैं उसे क्षणयोग निद्रा कहते हैं, क्योंकि **"इन्द्रियात्ममनोमरुतां सूक्ष्मावस्था स्वाप:"** अर्थात् इन्द्रिय, आत्मा, मन और प्राण इनको सूक्ष्म अवस्था विशेष को निद्रा कहते हैं। योग में भी इन चारों की सूक्ष्म अवस्था हुआ करती है और इस अवस्था का काल अल्प है अत: साधुओं की निद्रा को क्षणयोग निद्रा कहते हैं। साधुओं की निद्रा का काल अधिक से अधिक चार घड़ी अर्थात् अर्धरात्रि (१२ बजे) के दो घड़ी (४८ मिनट) पहले से अर्धरात्रि के दो घड़ी (४८ मिनट) बाद तक माना गया है। इस प्रकार साधु को अधरात्रि के दो घड़ी बाद निद्रा का त्याग कर १०८ बार अथवा ९ बार णमोकार मन्त्र का जाप्य कर, पंच परमेष्ठियों को नमस्कार करना चाहिए। इसके बाद यदि प्रकाश हो तो ईर्यापथशुद्धिपूर्वक और यदि अन्धकार हो तो भूमि-मार्जन करते हुए अर्थात् जिस भूमिका शोधन दिन को कर लिया गया था उसे पुन: पीछे से मार्जन करके (यदि अंधकार हो तो हथेली के पिछले भाग के स्पर्श से) प्रासुक एवं निर्जन्तु भूमि का निर्णय कर लघु-शकादि की क्रिया से निवृत्त हो, यथायोग्य शुद्धि कर कायोत्सर्ग करना चाहिए। इसके बाद योग्य स्थान पर बैठकर निम्नलिखित विधि अनुसार अपर रात्रि स्वाध्याय का प्रतिष्ठापन (प्रारम्भ) कर स्वाध्याय प्रारम्भ कर देना चाहिये किन्तु यदि प्रकाश न हो तो ध्यान व चिन्तन करना चाहिए।

स्वाध्यायविधिविज्ञापनम्

अथ विज्ञापनम्

अथ अपर-रात्रि-स्वाध्यायप्रतिष्ठापन-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीश्रुतभक्तिकायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

ऐसी प्रतिज्ञा करके भूमिस्पर्श करते हुए नमस्कार करें, पश्चात् तीन आवर्त और एक शिरोनति करके निम्नलिखित सामायिक दण्डक पढ़ें—

अथ सामायिकस्तवः

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं,
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।

चत्तारि मंगलं—अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा—अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि—अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलि-पण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ।

अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णरस-कम्म-भूमिसु, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, आदियराणं, तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं, सिद्धाणं, बुद्धाणं, परिणिव्वुदाणं, अंतयडाणं, पार-

गयाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसयाणं, धम्म-णायगाणं, धम्म-वर-चाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहिदेवाणं, णाणाणं, दंसणाणं, चरित्ताणं, तवाणं सया करेमि किरियम्मं ।

करेमि भंते ! सामाइयं सव्व-सावज्ज-जोगं पच्चक्खामि जावजीवं (यावत्-कालं) तिविहेण–मणसा वयसा काएण, ण करेमि, ण कारेमि, अण्णं करंतं पि ण समणुमणामि । तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि अप्पाणं, जाव अरहंताणं, भयवंताणं पज्जुवासं करेमि तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

(यहाँ तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करके २७ उच्छ्वास पूर्वक कायोत्सर्ग करे । पश्चात् भूमि-नमस्कार करके पुनः तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करें । पश्चात् निम्नलिखित चतुर्विंशतिस्तव पढ़ें–)

चतुर्विंशतिस्तवः

थोस्सामि हं जिणवरे, तित्थयरे केवली अणंतजिणे ।
णर-पवर-लोय-महिए, विहुय-रय-मले महप्पण्णे ।। १ ।।

लोयस्सुज्जोययरे, धम्मं तित्थयरे जिणे वंदे ।
अरहंते कित्तिस्से, चउवीसं चेव केवलिणो ।। २ ।।

उसह-मजियं च वंदे, संभव-मभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे ।। ३ ।।

सुविहिं च पुप्फयंतं, सीयल सेयं च वासुपुज्जं च ।
विमल-मणंतं भयवं, धम्मं संतिं च वंदामि ।। ४ ।।

कुंथुं च जिण वरिंदं, अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वंदे अरिट्ठणेमिं, तह पासं वड्ढमाणं च ॥ ५ ॥
एवं मए अभित्थुआ, विहुय-रय-मला पहीण-जर-मरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु ॥ ६ ॥
कित्तिय वंदिय महिया, एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा ।
आरोग्ग-णाण-लाहं, दिंतु समाहिं च मे बोहिं ॥ ७ ॥
चंदेहिं णिम्मलयरा, आइच्चेहिं अहिय-पया-संता ।
सायरमिव गंभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥ ८ ॥

(इसके पश्चात् तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करके निम्नलिखित श्रुतभक्ति पढ़ें–)

लघुश्रुतभक्तिः

अर्हद्-वक्त्र-प्रसूतं, गणधर-रचितं द्वादशाङ्गं विशालं,
चित्रं बह्वर्थ-युक्तं, मुनिगण-वृषभै-र्धारितं बुद्धिमद्भिः ।
मोक्षाग्र-द्वार-भूतं, व्रत-चरण-फलं, ज्ञेय-भाव-प्रदीपं,
भक्त्या नित्यं प्रवंदे, श्रुतमह-मखिलं सर्व-लोकैक-सारम् ॥

जिनेन्द्र-वक्त्र-प्रति-निर्गतं वचो,
यतीन्द्र-भूति-प्रमुखै-र्गणाधिपैः ।
श्रुतं धृतं तैश्च पुनः प्रकाशितं,
द्वि-षट्-प्रकारं प्रणमाम्यऽहं श्रुतम् ॥ २ ॥

कोटी-शतं द्वादश चैव कोट्यो,
लक्षाण्यशीतिस् त्र्यधिकानि चैव ।
पंचाशदष्टौ च सहस्र-संख्या-
मेतच्छ्रुतं पञ्चपदं नमामि ॥ ३ ॥

अरहंत-भासियत्थं, गणहर-देवेहिं गंथियं सम्मं ।
पणमामि भत्तिजुत्तो, सुदणाण-महोवहिं सिरसा ।। ४ ।।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! सुदभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं अंगो-वंगपइण्णए पाहुडय परियम्म-सुत्त-पढमाणिओग पुव्वगय-चूलिया चेव सुत्तत्थय-थुइ-धम्म-कहाइयं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

अथ विज्ञापनम्

अथ अपर-रात्रि-स्वाध्याय-प्रतिष्ठापन-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीआचार्यभक्तिकायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(ऐसी प्रतिज्ञा करके नमस्कार करें, पश्चात् तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करके सामायिक दण्डक (**णमो अरहंताणं** से **पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि** पर्यन्त) पढ़ें। पश्चात् तीन आवर्त्त और एक शिरोनति कर २७ श्वासोच्छ्वासपूर्वक कायोत्सर्ग करे, पश्चात् नमस्कार करके तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करें, इसके बाद चतुर्विंशतिस्तव (**थोस्सामि हं जिणवरे** से **मम दिसंतु** पर्यन्त) पढ़ें। इसके पश्चात् पुनः तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करें, बाद में निम्नलिखित आचार्यभक्ति पढ़ें—)

लघुआचार्यभक्तिः

प्राज्ञः प्राप्त-समस्त-शास्त्र-हृदयः, प्रव्यक्त-लोक-स्थितिः,
प्रास्ताशः प्रतिभापरः प्रशमवान्, प्रागेव दृष्टोत्तरः ।
प्रायः प्रश्नसहः प्रभुः पर-मनोहारी परा-निन्दया,
ब्रूयाद् धर्मकथां गणी गुणनिधिः, प्रस्पष्टमिष्टाक्षरः ।1।

श्रुत-मविकलं, शुद्धा वृत्तिः, पर-प्रति-बोधने,
परिणतिरुरु—द्योगो मार्ग-प्रवर्तन-सद्विधौ ।
बुध-नुति-रनुत्सेको लोकज्ञता, मृदुता-स्पृहा,
यति-पति-गुणा, यस्मिन्नन्ये, च सोऽस्तु गुरुः सताम् ।२।

श्रुतजलधि-पारगेभ्यः,स्व-पर-मतविभावना-पटुमतिभ्यः ।
सुचरित-तपो-निधिभ्यो, नमो गुरुभ्यो गुण-गुरुभ्यः ।३।

छत्तीस-गुण-समग्गे, पञ्चविहाचार-करण-संदरिसे ।
सिस्साणुग्गह-कुसले, धम्मा-इरिए सया वंदे ।४।

गुरुभत्ति-संजमेण य, तरंति संसार-सायरं घोरम् ।
छिंदंति अट्ठ-कम्मं, जम्मण-मरणं ण पावेंति ।५।

ये नित्यं व्रत-मन्त्र-होम-निरता, ध्यानाग्नि-होत्राकुलाः,
षट्-कर्माभिरतास्तपोधन-धनाः, साधुक्रिया-साधवः ।
शील – प्रावरणागुण – प्रहरणाश्चन्द्रार्कतेजोऽधिकाः,
मोक्ष-द्वार-कपाट-पाटन-भटाः, प्रीणन्तु मां साधवः ।६।

गुरवः पान्तु वो नित्यं, ज्ञान-दर्शन-नायकाः ।
चारित्रार्णव – गम्भीरा, मोक्ष – मार्गोपदेशकाः ।७।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! आइरिय-भत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं पंचविहाचाराणं आइरियाणं, आयारादि-सुद-णाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं, ति-रयण-गुण-पालण-रयाणं सव्वसाहूणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ, बोहि-

लाहो सुगइगमरणं समाहि-मरणं जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

।। इति स्वाध्यायप्रतिष्ठापन (प्रारम्भ) विधिः समाप्ता ।।

(इस प्रकार उपर्युक्त विधि सम्पन्न कर स्वाध्याय प्रारंभ करे और जब सूर्योदय होने में दो घड़ी शेष रहे तब निम्नलिखित क्रिया पूर्वक स्वाध्याय समाप्त कर देवें ।)

अथ विज्ञापनम्

अथ अपर-रात्रि-स्वाध्याय-निष्ठापन (समाप्ति) क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री-श्रुतभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(इस प्रकार प्रतिज्ञा कर नमस्कार करें, फिर तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करके सामायिक दण्डक पढ़ें। पश्चात् तीन आवर्त्त और एक शिरोनति कर २७ श्वासोच्छ्वास पूर्वक कायोत्सर्ग करें, पश्चात् भूमि-स्पर्श करते हुए नमस्कार करें। इसके बाद चतुर्विशतिस्तव पढ़ कर अन्त में फिर तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करें। पश्चात् **अर्हंद्-वक्त्र-प्रसूतं** से **जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं** पर्यन्त लघुश्रुतभक्ति बोल कर शास्त्रजी को नमस्कार कर विधिपूर्वक स्थान आदि का सम्मार्जन करते हुए शास्त्रजी को योग्य स्थान पर विराजमान कर देवें।)

।। इति स्वाध्यायनिष्ठापनविधिः समाप्ता ।।

स्वाध्याय समाप्त करने के बाद साधुगण प्रमादवश रात्रि में लगे हुए दोषों का परिमार्जन करने के लिए रात्रिक प्रतिक्रमण करें ।

रात्रिकं (दैवसिकं) प्रतिक्रमणम्

जीवे प्रमाद-जनिताः प्रचुराः प्रदोषाः,
यस्मात् प्रतिक्रमणतः प्रलयं प्रयान्ति ।
तस्मात् तदर्थ-ममलं मुनि-बोधनार्थं,
वक्ष्ये विचित्र-भव-कर्म-विशोधनार्थम् ॥१॥

पापिष्ठेन दुरात्मना जडधिया, मायाविना लोभिना,
रागद्वेष-मलीमसेन मनसा, दुष्कर्म यन्निर्मितम् ।
त्रैलोक्याधिपते जिनेन्द्र ! भवतः, श्री-पाद-मूलेऽधुना,
निन्दा-पूर्वमहं जहामि सततं, वर्वर्तिषुः सत्पथे ॥२॥

खम्मामि सव्व-जीवाणं, सव्वे जीवा खमंतु मे ।
मित्ती मे सव्व-भूदेसु, वेरं मज्झं ण केण वि ॥३॥

राय–बंध–पदोसं च, हरिसं दीण–भावयं ।
उस्सुगत्तं भयं सोगं, रदि-मरदिं च वोस्सरे ॥४॥

हा ! दुट्ठ-कयं हा ! दुट्ठ-चिंतियं, भासियं च हा ! दुट्ठं ।
अंतो–अंतो डज्झमि, पचछत्तावेण वेयंतो ॥५॥

दव्वे खेत्ते काले, भावे य कदावराह सोहणयं ।
णिदण-गरहण-जुत्तो, मण-वय-काएण पडिक्कमणं ॥६॥

ए-इंदिया, वे-इंदिया, ते-इंदिया, चउ-इंदिया, पंचिंदिया, पुढविकाइया, आउकाइया, तेउकाइया, वाउकाइया, वणप्फदिकाइया, तसकाइया, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

वद-समिदिंदिय-रोधो, लोचावासय-मचेल-मण्हाणं ।
खिदि-सयरण-मदंतवणं, ठिदि-भोयरण-मेयभत्तं च ॥१॥
एदे खलु मूलगुणा, समणाणं जिणवरेहि पण्णत्ता ।
एत्थ पमाद-कदादो, अइचारादो रिणयत्तो हं ॥२॥

छेदोवट्ठावरणं होदु मज्झं ।

पञ्चमहाव्रत-पञ्चसमिति-पञ्चेन्द्रियरोध-षडावश्यक-क्रिया-लोचादयो अष्टाविंशति-मूलगुणाः, उत्तम-क्षमामार्दवार्जव-शौच-सत्य-संयम-तपस्-त्यागाकिञ्चन्य ब्रह्मचर्याणि, दश-लाक्षणिको धर्मः, अष्टादश-शील-सहस्राणि, चतुरशीति-लक्षगुणाः, त्रयोदश-विधं चारित्रं, द्वादश-विधं तपश्चेति सकलं सम्पूर्णं अर्हत्-सिद्धाचार्योपाध्याय–सर्व–साधु–साक्षिकं, सम्यक्त्व–पूर्वकं, दृढव्रतं सुव्रतं समारूढं मे भवतु ।

अथ सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं रात्रिकं (दैवसिकं) प्रतिक्रमण-क्रियायां, कृतदोष-निराकरणार्थं पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं भावपूजा-वन्दना-स्तवसमेतं आलोचना-सिद्धभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(यहाँ नमस्कार कर तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करके निम्नलिखित सामायिक दण्डक पढ़ें–)

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं,
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।

चत्तारि मंगलं–अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा–अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू

लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो। चत्तारि सरणं पव्वज्जामि—अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलि-पण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि।

अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णरस-कम्म-भूमिसु, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, आदियराणं, तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं, सिद्धाणं, बुद्धाणं, परिणिव्वुदाणं, अंतयडाणं, पार-गयाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसयाणं, धम्मणायगाणं, धम्म-वर-चाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहिदेवाणं, णाणाणं, दंसणाणं, चरित्ताणं, तवाणं, सया करेमि किरियम्मं। करेमि भंते! सामाइयं सव्व-सावज्ज-जोगं पच्चक्खामि जावजीवं तिविहेण मणसा वचसा काएण, ण करेमि, ण कारेमि, अण्णं करंतं पि ण समणुमण्णामि। तस्स भंते! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि अप्पाणं, जाव अरहंताणं, भयवंताणं पज्जुवासं करेमि तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि।

(यहाँ तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करके २७ श्वासोच्छ्वास पूर्वक कायोत्सर्ग करें। पश्चात् भूमि-नमस्कार कर पुनः तीन आवर्त्त और एक शिरोनति कर चतुर्विंशतिस्तव पढ़ें—)

थोस्सामि हं जिणवरे, तित्थयरे केवली अणंतजिणे।
णर-पवर-लोय-महिए, विहुय-रय-मले महप्पण्णे ॥१॥
लोयस्सुज्जोययरे, धम्मं तित्थयरे जिणे वंदे।
अरहंते कित्तिस्से, चउवीसं चेव केवलिणो ॥२॥

उसह-मजियं च वंदे, संभव-मभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे ॥३॥
सुविहिं च पुप्फयंतं, सीयल सेयं च वासुपुज्जं च ।
विमल-मणंतं भयवं, धम्मं संतिं च वंदामि ॥४॥
कुंथुं च जिणवरिंदं, अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वंदे अरिट्ठ-णेमिं, तह पासं वड्ढमाणं च ॥५॥
एवं मए अभित्थुआ, विहुय-रय-मला पहीण-जर-मरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु ॥६॥
कित्तिय वंदिय महिया, एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा ।
आरोग्ग-णाण-लाहं, दिंतु समाहिं च मे बोहिं ॥७॥
चंदेहिं णिम्मलयरा, आइच्चेहिं अहिय-पया-संता ।
सायरमिव गंभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥८॥

(यहाँ तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करके निम्नलिखित मुख्यमङ्गलम् पढ़ें–)

मुख्यमङ्गलम्

श्रीमते वर्धमानाय, नमो नमित-विद्विषे ।
यज्ज्ञानान्तर्गतं भूत्वा, त्रैलोक्यं गोष्पदायते ॥१॥

सिद्धभक्तिः

तव-सिद्धे णय-सिद्धे, संजम-सिद्धे चरित्त-सिद्धे य ।
णाणम्मि दंसणम्मि य, सिद्धे सिरसा णमस्सामि ॥२॥

इच्छामि भंते ! सिद्धभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण—सम्मदंसण—सम्मचरित्त-जुत्ताणं, अट्ठविह-कम्म-विप्पमुक्काणं, अट्ठगुण-संपण्णाणं उड्ढलोय-मत्थयम्मि पयट्ठियाणं, तव-सिद्धाणं,

णय-सिद्धाणं, संजम-सिद्धाणं, चरित्त-सिद्धाणं, अदी-दाणागद-वट्टमाण-कालत्तय-सिद्धाणं, सव्व-सिद्धाणं णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि वंदामि णमस्सामि दुक्ख-क्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइ-गमणं समाहि-मरणं जिण-गुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

आलोचना

इच्छामि भंते ! चरित्तायारो तेरसविहो, परि-हाविदो, पंच-महव्वदाणि, पंच-समिदीओ ति-गुत्तीओ चेदि । तत्थ पढमे महव्वदे, पाणादिवादादो वेरमणं से पुढविकाइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, आउकाइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, तेउकाइया जीवा असंखेज्जा-संखेज्जा, वाउकाइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, वण-प्फदिकाइया जीवा अणंताणंता, हरिया, वीया, अंकुरा, छिण्णा, भिण्णा, एदेंसि उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणु-मण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

वे-इंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा कुक्खि-किमि-संख-खुल्लय, वराडय, अक्ख, रिट्ठगण्डवाल-संबुक्क-सिप्पि, पुलवियाइया एदेंसि उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

ते इंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, कुंथुद्देहिय विच्छिय-गोभिद-गोजुव-मक्कुण-पिपीलियाइया एदेंसि उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा,

कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

चउ-इंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, दंस-मसयमक्खि-पयंग-कीड-भमर-महुयर, गोमक्खियाइया, एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पंचिंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, अंडाइया, पोदाइया, जराइया, रसाइया, संसेदिमा, सम्मुच्छिमा, उब्भेदिमा, उववादिमा, अवि चउरासीदिजोणि-पमुह-सदसहस्सेसु, एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं, उव-घादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

अथ प्रतिक्रमणपीठिकादण्डकम्

इच्छामि भंते ! राइयम्मि (देवसियम्मि) आलोचेउं, पंच-महव्वदाणि तत्थ पढमं महव्वदं पाणा-दिवादादो वेरमणं, विदियं महव्वदं मुसावादादो वेर-मणं, तिदियं महव्वदं अदिण्णादाणादो वेरमणं, चउत्थं महव्वदं मेहुणादो वेरमणं, पंचमं महव्वदं परिग्गहादो वेरमणं, छट्ठं अणुव्वदं राइ-भोयणादो वेरमणं । इरिया-समिदीए, भासा-समिदीए, एसणा-समिदीए, आदाण-णिक्खेवण-समिदीए, उच्चार-पस्सवण-खेल-सिंहाणय-वियडि-पइट्ठावणिया समिदीए । मणगुत्तीए, वयगुत्तीए, कायगुत्तीए । णाणेसु, दंसणेसु, चरित्तेसु,

बावीसाए परीसहेसु, पणवीसाए भावणासु, पणवीसाए किरियासु, अट्ठारस-सील-सहस्सेसु, चउरासीदि-गुण-सय-सहस्सेसु, बारसण्हं संजमाणं, बारसण्हं तवाणं, बारसण्हं अंगाणं, चउदसण्हं पुव्वाणं, दसण्हं मुंडाणं, दसण्हं समण-धम्माणं, दसण्हं धम्मज्झाणाणं, णवण्हं बंभचेर-गुत्तीणं, णवण्हं णोकसायाणं, सोलसण्हं कसायाणं, अट्ठण्हं कम्माणं, अट्ठण्हं पवयण-माउयाणं, अट्ठण्हं सुद्धीणं, सत्तण्हं भयाणं, सत्तविह-संसाराणं, छण्हं जीवणिकायाणं, छण्हं आवासयाणं, पंचण्हं इंदि-याणं, पंचण्हं महव्वयाणं, पंचण्हं समिदीणं, पंचण्हं चरित्ताणं, चउण्हं सण्णाणं, चउण्हं पच्चयाणं, चउण्हं उवसग्गाणं, मूलगुणाणं, उत्तरगुणाणं, दिट्ठियाए, पुट्ठियाए, पदोसियाए, परिदावणियाए, से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, राएण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हासेण वा, भएण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पेम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, एदेसिं अच्चासादणाए, तिण्हं दण्डाणं, तिण्हं लेस्साणं, तिण्हं गारवाणं, तिण्हं अप्पसत्थ-संकिलेस-परिणामाणं, दोण्हं अट्ट-रुद्द-संकिलेस-परिणामाणं, मिच्छाणाण-मिच्छादंसण-मिच्छाचरित्ताणं, मिच्छत्त-पाउग्गं, असंजम-पाउग्गं, कसाय-पाउग्गं, जोग-पाउग्गं, अपाउग्ग-सेवणदाए, पाउग्ग-गरहणदाए, एत्थ मे जो कोइ राइओ (देवसिओ) अदिक्कमो, वदिक्कमो, अइचारो, अणाचारो, आभोगो, अणाभोगो; तस्स भंते ! पडिक्कमामि मए पडिक्कंतं तस्स मे सम्मत्त-

मरणं, पंडिय-मरणं, वीरिय-मरणं, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसंपत्ति होदु मज्झं ।

वद-समिदिंदियरोधो, लोचावासय-मचेल-मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदंतवणं, ठिदि-भोयण-मेयभत्तं च ॥१॥
एदे खलु मूलगुणा, समणाणं जिणवरेहि पण्णत्ता ।
एत्थ पमाद-कदादो, अइचारादो णियत्तो हं ॥२॥

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं ।

अथ सर्वातिचार-विशुद्धयर्थं रात्रिक (दैवसिक) प्रतिक्रमण-क्रियायां कृतदोषनिराकरणार्थं पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तवसमेतं श्रीप्रतिक्रमणभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(ऐसी प्रतिज्ञा करके भूमिस्पर्श करते हुए नमस्कार करे, पश्चात् तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करके निम्नलिखित सामायिक दण्डक पढ़ें–)

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं,
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।

चत्तारि मंगलं—अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा—अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि—अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलि-पण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ।

अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णरस-कम्म-भूमिसु, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, आदियराणं, तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं, सिद्धाणं, बुद्धाणं, परिणिव्वुदाणं, अंतयडाणं, पारगयाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसयाणं, धम्मणायगाणं, धम्म-वर-चाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहिदेवाणं, णाणाणं, दंसणाणं, चरित्ताणं तवाणं सया करेमि, किरियम्मं। करेमि भंते! सामाइयं सव्व-सावज्ज-जोगं पच्चक्खामि जाव-जीवं तिविहेण मणसा वयसा काएण, ण करेमि, ण कारेमि, अण्णं करंतं पि ण समणुमण्णामि। तस्स भंते! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि अप्पाणं, जाव अरहंताणं, भयवंताणं, पज्जुवासं करेमि तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि।

(यहाँ तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करके २७ श्वासोच्छ्वास पूर्वक कायोत्सर्ग करें। फिर भूमि-नमस्कार कर तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करें, पश्चात् चतुर्विशतिस्तव पढ़ें—)

थोस्सामि हं जिणवरे, तित्थयरे केवली अणंतजिणे।
णर-पवर-लोय-महिए, विहुय-रय-मले महप्पण्णे ॥१॥
लोयस्सुज्जोययरे, धम्मं तित्थयरे जिणे वंदे।
अरहंते कित्तिस्से, चउवीसं चेव केवलिणो ॥२॥
उसह-मजियं च वंदे, संभव-मभिणंदणं च सुमइं च।
पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे ॥३॥
सुविहिं च पुप्फयंतं, सीयल सेयं च वासुपुज्जं च।
विमल-मणंतं भयवं, धम्मं संतिं च वंदामि ॥४॥

कुंथुं च जिणवरिंदं, अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वंदे अरिट्ठ-णेमिं, तह पासं वड्ढमाणं च ॥५॥
एवं मए अभित्थुआ, विहुय-रय-मला, पहीण-जर-मरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु ॥६॥
कित्तिय वंदिय महिया, एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा ।
आरोग्ग-णाण-लाहं, दिंतु समाहिं च मे बोहिं ॥७॥
चंदेहिं णिम्मलयरा, आइच्चेहिं अहिय-पया-संता ।
सायरमिव गंभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥८॥

(यहाँ तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करके निम्न-लिखित निषिद्धिका दण्डक पढ़ें—)

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं,
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।
णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं,
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।
णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं,
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।

णमो जिणाणं, णमो जिणाणं, णमो जिणाणं, णमो णिस्सिहीए, णमो णिस्सिहीए, णमो णिस्सिहीए, णमोत्थु दे, णमोत्थु दे, णमोत्थु दे । अरहंत ! सिद्ध ! बुद्ध ! णीरय ! णिम्मल ! सममण ! सुभमण ! सुसमत्थ ! समजोग ! समभाव ! सल्लघट्टाणं सल्लघत्ताण ! णिब्भय ! णीराय ! णिद्दोस ! णिम्मोह ! णिम्मम ! णिस्संग ! णिस्सल्ल ! माण-माया-मोसमूरण ! तवप्पहाण ! गुणरयण ! सीलसायर ! अणंत ! अप्पमेय !

महदि-महावीर-वड्ढमाण-बुद्ध-रिसिणो चेदि णमोत्थु दे, णमोत्थु दे, णमोत्थु दे ।

मम मंगलं—अरहंता य, सिद्धा य, बुद्धा य, जिणा य, केवलिणो, ओहिणाणिणो, मणपज्जवणाणिणो, चउदस-पुव्वगामिणो, सुद-समिदि-समिद्धा य, तवो बारहविहो तवस्सी य, गुणा गुणवंतो य, इड्ढि महरिसी य, तित्थं तित्थयरा य, पवयणं पवयणी य, णाणं णाणी य, दंसणं दंसणी य, संजमो संजदा य, विणओ विणीदा य, बंभचेर बंभचारी य, गुत्तीओ गुत्तिमंतो य, मुत्तीओ मुत्तिमंतो य, समिदीओ समिदिमंतो य, ससमय-परसमयविदू, खंति खंतिवंतो य, खवगा य, खीणमोहा खीणवंतो य, बोहिय-बुद्धा य, बुद्धिमंतो य, चेइय-रुक्खा य, चेइयाणि ।

उड्ढ-मह-तिरिय-लोए, सिद्धायदणाणि णमस्सामि । सिद्ध-णिसीहियाओ, अट्ठावय-पव्वए, सम्मेदे, उज्जंते, चंपाए, पावाए, मज्झिमाए, हत्थिवालिय-सहाए, जाओ अण्णाओ काओ विणिसीहियाओ, जीवलोयम्मि, इसिपब्भार-तल-गयाणं, सिद्धाणं, बुद्धाणं, कम्म-चक्क-मुक्काणं, णीरयाणं, णिम्मलाणं, गुरु-आइरिय-उवज्झायाणं, पव्वत्ति-थेर-कुलयराणं, चाउवण्णो य, समणसंघो य, दससु भरहेरावएसु, पंचसु महाविदेहेसु । जे लोए संति साहवो, संजदा, तवस्सी, एदे मम मंगलं पवित्तं । एदेहं मंगलं करेमि भावदो विसुद्धो सिरसा अहिवंदिऊण सिद्धे काऊण अंजलिं मत्थयम्मि, तिविहं तियरण-सुद्धो ।

पडिक्कमामि भंते ! राइयस्स (देवसियस्स) अइचारस्स, अणाचारस्स, मण-दुच्चरियस्स, वय-दुच्चरियस्स, कायदुच्चरियस्स, णाणाइचारस्स, दंसणा-इचारस्स, तवाइचारस्स, वीरियाइचारस्स, चरित्ताइ-चारस्स, पंचण्हं महव्वयाणं, पंचण्हं समिदीणं, तिण्हं गुत्तीणं, छण्हं आवासयाणं, छण्हं जीवणिकायाणं, विरा-हणाए, पीडं कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणु-मण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पडिक्कमामि भंते ! अइगमणे, णिग्गमणे, ठाणे, गमणे, चंकमणे, उव्वत्तणे, परियत्तणे, आउंचणे, पसा-रणे, आमासे, परिमासे, कुइदे, कक्कराइदे, चलिदे, णिसण्णे, सयणे, उव्वट्टणे, परियट्टणे, एइंदियाणं, बेइंदि-याणं, तेइंदियाणं, चउइंदियाणं, पंचिंदियाणं, जीवाणं, संघट्टणाए, संघादणाए, उद्दावणाए, परिदावणाए, विराहणाए, एत्थ मे जो कोइ राइओ (देवसिओ) अदिक्कमो, वदिक्कमो, अइचारो, अणाचारो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पडिक्कमामि भंते ! इरियावहियाए, विराह-णाए, उड्ढमुहं चरंतेण वा, अहोमुहं चरंतेण वा, तिरिय-मुहं चरंतेण वा, दिसिमुहं चरंतेण वा, विदिसिमुहं चरंतेण वा, पाणचंकमणदाए, बीयचंकमणदाए, हरिय-चंकमणदाए, उत्तिंग-पणय-दय-मट्टिय-मक्कडय-तंतु-सत्ताण-चंकमणदाए, पुढविकाइय-संघट्टणाए, आउ-काइय-संघट्टणाए, तेउकाइय-संघट्टणाए, वाउकाइय-

संघट्टणाए, वणप्फदि-काइय-संघट्टणाए, तसकाइय-संघट्टणाए, उद्दावणाए, परिदावणाए, विराहणाए, एत्थ मे जो कोइ इरियावहियाए, अइचारो, अणाचारो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पडिक्कमामि भंते ! उच्चार-पस्सवण-खेल-सिंहाणय-वियडि-पइट्ठावणियाए, पइट्ठावंतेण जे के वि पाणा वा, भूदा वा, जीवा वा, सत्ता वा, संघट्टिदा वा, संघादिदा वा, उद्दाविदा वा, परिदाविदा वा, एत्थ मे जो कोइ राइओ (देवसिओ) अइचारो अणाचारो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पडिक्कमामि भंते ! अणेसणाए, पाणभोयणाए, पणयभोयणाए, बीयभोयणाए, हरियभोयणाए, आहाकम्मेण वा, पच्छाकम्मेण वा, पुराकम्मेण वा, उद्दिट्ठयडेण वा, णिद्दिट्ठयडेण वा, दयसंसिट्ठयडेण वा, रस-संसिट्ठयडेण वा, परिसादणियाए, पइट्ठावणियाए, उद्देसियाए, णिद्देसियाए, कोदयडे, मिस्से, जादे, ठविदे, रइदे, अणसिट्ठे, बलिपाहुडदे, पाहुडदे, घट्टिदे, मुच्छिदे, अइमत्तभोयणाए एत्थ मे जो कोइ गोयरिस्स अइचारो अणाचारो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पडिक्कमामि भंते ! सुमिणिंदियाए, विराहणाए, इत्थि-विप्परियासियाए, दिट्ठिविप्परियासियाए, मण-विप्परियासियाए, वय-विप्परियासियाए, काय-विप्परियासियाए, भोयण-विप्परियासियाए, उच्चावयाए, सुमिण-दंसण-विप्परियासियाए, पुव्वरए, पुव्वखेलिए,

णाणा-चिंतासु, विसोतियासु एत्थ मे जो कोइ राइओ (देवसिओ) अइचारो अणाचारो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पडिक्कमामि भंते ! इत्थिकहाए, अत्थकहाए, भत्तकहाए, रायकहाए, चोरकहाए, वेर-कहाए, पर-पासंड-कहाए, देसकहाए, भासकहाए, अकहाए, विकहाए, णिट्ठुल्लकहाए, पर-पेसुण्णकहाए, कंदप्पियाए, कुक्कुच्चियाए, डंबरियाए, मोक्खरियाए, अप्पपसंसणदाए, पर-परिवादणदाए, पर-दुगुंछणदाए, पर-पीडाकराए, सावज्जाणुमोयणियाए, एत्थ मे जो कोइ राइओ (देवसिओ) अइचारो अणाचारो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पडिक्कमामि भंते ! अट्टज्झाणे, रुद्दज्झाणे, इह-लोय-सण्णाए, पर-लोय-सण्णाए, आहारसण्णाए, भय-सण्णाए, मेहुणसण्णाए, परिग्गहसण्णाए, कोह-सल्लाए, माण-सल्लाए, माया-सल्लाए, लोह-सल्लाए, पेम्म-सल्लाए, पिवास-सल्लाए, णियाण-सल्लाए, मिच्छा-दंसणसल्लाए, कोहकसाए, माणकसाए, मायाकसाए, लोहकसाए, किण्हलेस्सपरिणामे, णीललेस्सपरिणामे, काउलेस्सपरिणामे, आरंभपरिणामे, परिग्गहपरि-णामे, पडिसयाहिलासपरिणामे, मिच्छादंसणपरिणामे, अण्णाणपरिणामे, असंजम-परिणामे, पाव-जोग-परिणामे, काय-सुहाहिलास-परिणामे, सद्देसु, रूवेसु, गंधेसु, रसेसु, फासेसु, काइयाहिकरणियाए, पदोसियाए, परिदाव-

णियाए, पाणाइवाइयासु, एत्थ मे जो कोइ राइओ (देवसिओ) अइचारो अणाचारो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पडिक्कमामि भंते ! एक्के भावे अणाचारे, दोसु रायदोसेसु, तीसु दंडेसु, तीसु गुत्तीसु, तीसु गारवेसु, चउसु कसाएसु, चउसु सण्णासु, पंचसु महव्वएसु, पंचसु समिदीसु, छसु जीव-णिकाएसु, छसु आवासएसु, सत्तसु भएसु, अट्ठसु मएसु, णवसु बंभचेर-गुत्तीसु, दसविहेसु समणधम्मेसु, एयारसविहेसु उवासयपडिमासु, बारह-विहेसु भिक्खु-पडिमासु, तेरहविहेसु किरियाट्ठाणेसु, चउदसविहेसु भूदगामेसु, पण्णरसविहेसु पमायठाणेसु, सोलहविहेसु पवयणेसु, सत्तारसविहेसु असंजमेसु, अट्ठा-रसविहेसु असंपराइएसु, उणवीसाए णाहज्झयणेसु, वीसाए अ-समाहि-ट्ठाणेसु, एक्कवीसाए सबलेसु, बावी-साए परीसहेसु, तेवीसाए सुद्दयडज्झाणेसु, चउवीसाए अरहंतेसु, पणवीसाए भावणासु, पणवीसाए किरिया-ट्ठाणेसु, छव्वीसाए पुढवीसु, सत्तावीसाए अणगार-गुणेसु, अट्ठावीसाए आयार-कप्पेसु, एऊणतीसाए पाव-सुत्त-पसंगेसु, तीसाए मोहणीयठाणेसु, एक्कत्तीसाए कम्म-विवाएसु, बत्तीसाए जिणोवएसेसु, तेत्तीसाए अच्चासावणाए, संखेवेण जीवाण-अच्चासादणाए, अजीवाण अच्चासादणाए, णाणस्स अच्चासादणाए, दंसणस्स अच्चासादणाए, चरित्तस्स अच्चासादणाए, तवस्स अच्चासादणाए, वीरियस्स अच्चासादणाए, तं सव्वं पुव्वं दुच्चरियं गरहामि, आगमेसीएसु पच्चुप्पण्णं

इक्कंतं पडिक्कमामि, अणागयं पच्चक्खामि, अगरहियं गरहामि, अणिंदियं णिंदामि, अणालोचियं आलोचेमि, आराहणं-मब्भुट्ठेमि, विराहणं पडिक्कमामि, एत्थ मे जो कोइ राइओ (देवसिओ) अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

इच्छामि भंते ! इमं णिग्गंथं, पवयणं, अणुत्तरं केवलियं, पडिपुण्णं, णेगाइयं, सामाइयं, संसुद्धं, सल्ल-घट्टाणं, सल्लघत्ताणं, सिद्धिमग्गं, सेढिमग्गं, खंतिमग्गं, मुत्तिमग्गं, पमुत्तिमग्गं, मोक्खमग्गं, पमोक्ख-मग्गं, णिज्जाणमग्गं, णिव्वाणमग्गं, सव्व-दुक्खपरिहाणिमग्गं, सुचरिय-परिणिव्वाण-मग्गं, अवितहं, अविसंति-पवयणं, उत्तमं तं सद्दहामि, तं पत्तियामि, तं रोचेमि, तं फासेमि, इदोत्तरं अण्णं णत्थि, ण भूदं, ण भविस्सदि, णाणेण वा, दंसणेण वा, चरित्तेण वा, सुत्तेण वा, इदो जीवा सिज्झंति, बुज्झंति, मुच्चंति, परिणिव्वायंति, सव्व-दुक्खाणमंतं करेंति, परि-वियाणंति, समणो मि, संजदो मि, उवरदो मि, उवसंतो मि, उवहि-णियडि-माण-माया मोस-मूरण मिच्छाणाण-मिच्छादंसण-मिच्छाचरित्तं च पडिविरदो मि, सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्तं च रोचेमि, जं जिणवरेहिं पण्णत्तं, एत्थ मे जो कोइ राइओ (देवसिओ) अइचारो अणाचारो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पडिक्कमामि भंते ! सव्वस्स, सव्वकालियाए, इरिया-समिदीए, भासा-समिदीए, एसणा-समिदीए,

आदाणणिक्खेवण-समिदीए, उच्चार-पस्सवण-खेल-सिंहाणय-वियडि-पइट्ठावणि-समिदीए, मणगुत्तीए, वयगुत्तीए, कायगुत्तीए, पाणादिवादादो-वेरमणाए, मुसावादादो-वेरमणाए, अदिण्णादाणादो-वेरमणाए, मेहुणादो-वेरमणाए, परिग्गहादो-वेरमणाए, राइ-भोयणादो-वेरमणाए, सव्व-विराहणाए, सव्व-धम्म-अइक्कमणदाए, सव्व-मिच्छा-चरियाए, एत्थ मे जो कोइ राइओ (देवसिओ) अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

अथ प्रतिक्रमण-भक्ति-कायोत्सर्गालोचना

इच्छामि भंते ! पडिक्कमणादिचार-मालोचेउं जो मे राइओ (देवसिओ) अइचारो, अणाचारो, आभोगो, अणाभोगो, काइओ, वाइओ, माणसिओ, दुच्चिंतिओ, दुब्भासिओ, दुप्परिणामिओ, दुस्समणाओ, णाणे, दंसणे, चरित्ते, सुत्ते, सामाइए, पंचण्हं महव्वयाणं, पंचण्हं समिदीणं, तिण्हं गुत्तीणं, छण्हं जीव-णिकायाणं, छण्हं आवासयाणं, विराहणाए, अट्ठविहस्स कम्मस्स-णिग्घादणाए, अण्णहा उस्सासिएण वा, णिस्सासिएण वा, उम्मिसिएण वा, णिम्मिसिएण वा, खासिएण वा, छिक्किएण वा, जंभाइएण वा, सुहुमेहिं-अंग-चलाचलेहिं, दिट्ठि-चलाचलेहिं, एदेहिं सव्वेहिं आयरेहिं, अ-समाहिं-पत्तेहिं, जाव अरहंताणं, भयवंताणं, पज्जुवासं करेमि, ताव कालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

वद-समिदिंदिय-रोधो, लोचावासय-मचेल-मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदंतवणं, ठिदि-भोयण-मेयभत्तं च ॥१॥

एवं खलु मूलगुणा, समणाणं जिणवरेहि पण्णत्ता ।
एत्थ पमाद-कदादो, अइचारादो णियत्तो हं ॥२॥

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं ।

अथ सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं रात्रिकं (दैवसिकं) प्रतिक्रमण-क्रियायां, कृतदोष-निराकरणार्थं पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तवसमेतं श्री निष्ठितकरण-वीरभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

ऐसी प्रतिज्ञा करके भूमिस्पर्श पूर्वक नमस्कार करें, पश्चात् तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करके निम्नलिखित सामायिक दण्डक पढ़ें—

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं,
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।

चत्तारि मंगलं—अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा—अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि—अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ।

अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णरस-कम्म-भूमिसु, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, आदियराणं, तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं, सिद्धाणं, बुद्धाणं, परिणिव्वुदाणं, अंतयडाणं, पारगयाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसयाणं, धम्मणायगाणं, धम्म-वर-

चाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहि-देवाणं, णाणाणं, दंसणाणं, चरित्ताणं तवाणं सया करेमि, किरियम्मं ।

करेमि भंते ! सामाइयं सव्व-सावज्ज-जोगं पच्चक्खामि जावजीवं तिविहेण—मणसा वयसा काएण, ण करेमि, ण कारेमि, अण्णं करंतं पि ण समणुमण्णामि । तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि अप्पाणं, जाव अरहंताणं, भयवंताणं, पज्जुवासं करेमि, तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

(यहाँ तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करके रात्रिक प्रतिक्रमण में ५४ श्वासोच्छ्वास पूर्वक दो कायोत्सर्ग और दैवसिक प्रतिक्रमण में १०८ श्वासोच्छ्वास पूर्वक चार कायोत्सर्ग करें । पश्चात् नमस्कार करके पुनः तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करें । अनन्तर निम्नलिखित चतुर्विंशतिस्तव पढ़ें—)

थोस्सामि हं जिणवरे, तित्थयरे केवली अणंतजिणे ।
णर-पवर-लोय-महिए, विहुय-रय-मले महप्पण्णे ॥१॥
लोयस्सुज्जोययरे, धम्मं तित्थयरे जिणे वंदे ।
अरहंते कित्तिस्से, चउवीसं चेव केवलिणो ॥२॥
उसह-मजियं च वंदे, संभव-मभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे ॥३॥
सुविहिं च पुप्फयंतं, सीयल सेयं च वासुपुज्जं च ।
विमल-मणंतं भयवं, धम्मं संतिं च वंदामि ॥४॥
कुंथुं च जिण वरिंदं, अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वंदे अरिट्ठणेमिं, तह पासं वड्ढमाणं च ॥५॥
एवं मए अभित्थुआ, विहुय-रय-मला पहीण-जर-मरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु ॥६॥

कित्तिय वंदिय महिया, एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा ।
आरोग्ग-णाण-लाहं, दिंतु समाहिं च मे बोहिं ॥७॥
चंदेहिं णिम्मलयरा, आइच्चेहिं अहिय-पया-संता ।
सायरमिव गंभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥८॥

(यहाँ तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करें, पश्चात् वीरभक्ति पढ़ें–)

वीरभक्तिः

यः सर्वाणि चराचराणि विधिवद्, द्रव्याणि तेषां गुणान्,
पर्यायानपि भूत-भावि-भवतः, सर्वान् सदा सर्वदा ।
जानीते युगपत् प्रतिक्षण-मतः, सर्वज्ञ इत्युच्यते,
सर्वज्ञाय जिनेश्वराय महते, वीराय तस्मै नमः ।१।

वीरः सर्व-सुरासुरेन्द्र-महितो, वीरं बुधाः संश्रिताः,
वीरेणाभिहतः स्व-कर्म-निचयो, वीराय भक्त्या नमः ।
वीरात् तीर्थमिदं प्रवृत्तमतुलं, वीरस्य घोरं तपो,
वीरे श्रीद्युति-कान्ति-कीर्ति-धृतयो, हे वीर ! भद्रं त्वयि ।२।

ये वीरपादौ प्रणमन्ति नित्यं,
ध्यानस्थिताः संयम-योगयुक्ताः ।
ते वीतशोका हि भवन्ति लोके,
संसार–दुर्गं विषमं तरन्ति ॥३॥

व्रतसमुदय-मूलः संयम-स्कन्ध-बन्धो,
यम-नियम-पयोभि-र्वर्धितः शीलशाखः ।
समिति-कलिक-भारो, गुप्ति-गुप्त-प्रवालो,
गुण-कुसुम-सुगन्धिः सत्तपश्चित्रपत्रः ॥४॥

शिवसुखफलदायी, यो दया-छाययोद्घः,
शुभजनपथिकानां, खेदनोदे समर्थः।
दुरित-रविज-तापं, प्रापयन्नन्तभावम्,
स भव-विभव-हान्यै, नोऽस्तु चारित्रवृक्षः ॥५॥

चारित्रं सर्वजिनैश्चरितं, प्रोक्तं च सर्व-शिष्येभ्यः।
प्रणमामि पञ्चभेदं, पञ्चम-चारित्र-लाभाय ॥६॥

धर्मः सर्वसुखाकरो हितकरो, धर्मं बुधाश्चिन्वते,
धर्मेणैव समाप्यते शिवसुखं, धर्माय तस्मै नमः।
धर्मान्-नास्त्यपरः सुहृद्-भवभृतां, धर्मस्य मूलं दया,
धर्मे चित्तमहं दधे प्रतिदिनं, हे धर्म ! मां पालय ॥७॥

धम्मो मंगल-मुक्किट्ठं, अहिंसा संजमो तवो।
देवा वि तं णमस्संति, जस्स धम्मे सया मणो ॥८॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! वीरभत्ति-काउसग्गो कओ तस्सालोचेउं, सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्त-तव-वीरियाचारेसु, जम-णियम-संजम-सील-मूलुत्तर-गुणेसु, सव्व-मइचारं सावज्ज-जोगं पडिविरदोमि, असंखेज्ज-लोय-अज्झवसाय-ठाणाणि, अप्पसत्थ-जोग-सण्णा-इंदिय-कसाय-गारव-किरियासु, मण-वयण-काय-करण-दुप्पणिहाणाणि, परिचिंतियाणि, किण्ह-णील-काउ-लेस्साओ, विकहा-पालिकुंचिएण, उम्मग्ग-हास-रदि-अरदि-सोय-भय-दुगुंछ-वेयण - विज्जंभ - जंभाइ - आणि, अट्ट-रुद्द-संकिलेस-परिणामाणि परिणमिदाणि, अणि-हुदकर-चरण-मण-वयण-काय-करणेण, अक्खित्त-बहुल-

परायणेण, अपडिपुण्णेण वा, सरक्खराबय-परिसंघाय-पडिवत्तिएण, अच्छाकारिदं मिच्छामेलिदं, आमेलिदं, वामेलिदं, अण्णहादिण्णं, अण्णहापडिच्छिदं, आवासएसु परिहीणदाए, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

वद-समिदिंदिय-रोधो, लोचावासय-मचेल-मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदंतवणं, ठिदि-भोयण-मेय-भत्तं च ॥१॥

एदे खलु मूलगुणा, समणाणं जिणवरेहि पण्णत्ता ।
एत्थ पमाद-कदादो, अइचारादो णियत्तो हं ॥२॥

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं ।

अथ सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं रात्रिकं (दैवसिकं) प्रतिक्रमण-क्रियायां कृत-दोष-निराकरणार्थं पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तवसमेतं चतुर्विंशति-तीर्थंकरभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(ऐसी प्रतिज्ञा करके भूमिस्पर्श पूर्वक नमस्कार करे, पश्चात् तीन आवर्त और एक शिरोनति करके निम्नलिखित सामायिक दण्डक पढ़ें–)

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं,
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।

चत्तारि मंगलं–अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा–अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि–अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे

सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलि-पण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ।

अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णरस-कम्म-भूमिसु, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, आदियराणं, तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं, सिद्धाणं, बुद्धाणं, परिणिव्वुदाणं, अंतयडाणं, पार-गयाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसयाणं, धम्म-णायगाणं, धम्म-वर-चाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहि-देवाणं, णाणाणं, दंसणाणं, चरित्ताणं, तवाणं सया करेमि, किरियम्मं ।

करेमि भंते ! सामाइयं सव्व-सावज्ज-जोगं, पच्चक्खामि, जावजीवं तिविहेण—मणसा वयसा काएण, ण करेमि, ण कारेमि, अण्णं करंतं पि ण समणुमण्णामि । तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं जाव अरहंताणं, भयवंताणं, पज्जुवासं करेमि, तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

(यहाँ तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करके २७ श्वासोच्छ्वास में एक कायोत्सर्ग करें । पश्चात् भूमि-नमस्कार करके पुनः तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करें, पश्चात् चतुर्विंशतिस्तव पढ़ें—)

थोस्सामि हं जिणवरे, तित्थयरे केवली अणंतजिणे ।
णर-पवर-लोय-महिए, विहुय-रय-मले महप्पण्णे ॥१॥
लोयस्सुज्जोययरे, धम्मं तित्थयरे जिणे वंदे ।
अरहंते कित्तिस्से, चउवीसं चेव केवलिणो ॥२॥

उसह-मजियं च वंदे, संभव-मभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे ॥३॥
सुविहिं च पुप्फयंतं, सीयल सेयं च वासुपुज्जं च ।
विमल-मणंतं भयवं, धम्मं संतिं च वंदामि ॥४॥
कुंथुं च जिण वरिंदं, अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वंदे अरिट्ठ-णेमिं, तह पासं वड्ढमाणं च ॥५॥
एवं मए अभित्थुआ- विहुय-रय-मला पहीण-जर-मरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु ॥६॥
कित्तिय वंदिय महिया, एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा ।
आरोग्ग-णाण-लाहं, दिंतु समाहिं च मे बोहिं ॥७॥
चंदेहिं णिम्मलयरा, आइच्चेहिं अहिय-पया-संता ।
सायरमिव गंभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥८॥

(यहाँ तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करें, पश्चात् चतुर्विशति तीर्थकरभक्ति पढ़ें—)

चतुर्विशतितीर्थंकरभक्तिः

ये लोकेऽष्ट-सहस्र-लक्षण-धरा, ज्ञेयार्णवान्तर्गता,
ये सम्यग्-भवजाल-हेतु-मथनाश्चन्द्रार्क-तेजोऽधिकाः ।
ये साध्विन्द्र-सुराप्सरो-गण-शतै-र्गीत-प्रणूतार्चितास्,
तान् देवान् वृषभादिवीरचरमान्, भक्त्या नमस्याम्यहम् ।
नाभेयं देवपूज्यं, जिनवर-मजितं, सर्व-लोक-प्रदीपं,
सर्वज्ञं सम्भवाख्यं, मुनिगण-वृषभं, नन्दनं देवदेवम् ।
कर्मारिघ्नं सुबुद्धिं, वर-कमलनिभं, पद्म-पुष्पाभि-गन्धं,
क्षान्तं दान्तं सुपार्श्वं, सकल-शशिनिभं चन्द्रनामानमीडे ॥

विख्यातं पुष्पदन्तं, भव-भय-मथनं, शीतलं लोकनाथं,
श्रेयांसं शील-कोषं, प्रवर-नर-गुरुं, वासुपूज्यं सुपूज्यम् ।
मुक्तं दान्तेन्द्रियाश्वं, विमलमृषिपतिं सिंहसैन्यं मुनीन्द्रम्,
धर्मं सद्धर्मकेतुं, शमदमनिलयं, स्तौमि शान्तिं शरण्यम् ।।

कुन्थुं सिद्धालयस्थं, श्रमणपतिमरं, त्यक्तभोगेषु चक्रं,
मल्लिं विख्यातगोत्रं, खचरगणनुतं सुव्रतं सौख्यराशिम् ।
देवेन्द्राच्यं नमीशं, हरिकुल-तिलकं, नेमिचन्द्रं भवान्तं,
पार्श्वं नागेन्द्र-वन्द्यं, शरणमहमितो, वर्धमानं च भक्त्या ।।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! चउवीसं-तित्थयर-भत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं पंचमहाकल्लाण-संपण्णाणं, अट्ठ-महापाडिहेर-सहियाणं, चउतीसातिसय-विसेस-संजुत्ताणं, बत्तीस-देविंद-मणि-मउड-मत्थय-महियाणं, बलदेव–वासुदेव–चक्कहर-रिसि-मुणि-जइ-अणगारोवगूढाणं, थुइ-सय-सहस्स-णिलयाणं-उसहाइ-वीर-पच्छिम-मंगल-महापुरिसाणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

वद-समिदिंदिय-रोधो, लोचावासय-मचेल-मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदंतवणं, ठिदि-भोयण-मेयभत्तं च ।।१।।

एदे खलु मूलगुणा, समणाणं जिणवरेहि पण्णत्ता ।
एत्थ पमाद-कदादो, अइचारादो णियत्तो हं ।।२।।

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं ।

अथ सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं (रात्रिक) (दैवसिक) प्रतिक्रमण-क्रियायां कृत-दोष-निराकरणार्थं पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तवसमेतं आलोचना-सिद्धभक्ति, प्रतिक्रमणभक्ति, निष्ठितकरण-वीरभक्ति, चतुर्विंशतितीर्थंकरभक्ति कृत्वा तद्धीनाधिक-दोष-विशुद्ध्यर्थं, आत्मपवित्रीकरणार्थं समाधिभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(ऐसी प्रतिज्ञा कर णमो अरहंताणं इत्यादि दण्डक पढ़कर कायोत्सर्ग करें । 'थोस्सामीत्यादि' स्तवन पढ़ें–)

अथेष्ट प्रार्थना

प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः ।

शास्त्राभ्यासो, जिनपति-नुतिः, सङ्गतिः सर्वदार्यैः,
सद्वृत्तानां गुण-गण-कथा, दोषवादे च मौनम् ।
सर्वस्यापि, प्रियहितवचो, भावना चात्मतत्त्वे,
सम्पद्यन्तां, मम भव-भवे, यावदेतेऽपवर्गः ॥१॥

तव पादौ मम हृदये, मम हृदयं तव पद-द्वये लीनम् ।
तिष्ठतु जिनेन्द्र ! तावद्, यावन्-निर्वाण-सम्प्राप्तिः ॥२॥

अक्खर-पयत्थ-हीणं, मत्ताहीणं च जं मए भणियम् ।
तं खमहु णाण-देवय ! मज्झ वि दुक्खक्खयं दिंतु ॥३॥

आलोचना

इच्छामि भंते ! समाहिभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, रयणत्तय-सरूव-परमप्प-झाण-लक्खण-समाहि-भत्तीए णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसंपत्ति होदु मज्झं ।

॥ इति रात्रिकं (दैवसिकं) प्रतिक्रमणं समाप्तम् ॥

रात्रियोग-निष्ठापनविधि

रात्रिक प्रतिक्रमण क्रिया की समाप्ति के बाद, कल सायंकाल प्रतिक्रमण के पश्चात् जो रात्रियोग प्रतिष्ठापन ('आज रात्रि में मैं इसी वसतिका में रहूंगा' ऐसा नियम विशेष) किया था, उसका निष्ठापन (समापन) करने के लिए निम्नलिखित विधि करनी चाहिए—

विज्ञापनम्

अथ रात्रियोग-निष्ठापनक्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं योगिभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(ऐसी प्रतिज्ञा करके नमस्कार करें, पश्चात् तीन आवर्त्त और शिरोनति करके निम्नलिखित सामायिक दण्डक पढ़ें–)

सामायिकस्तवम्

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं,
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।

चत्तारि मंगलं—अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा—अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि—अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलि-पण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ।

अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णरस-कम्म-भूमिसु, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, आदियराणं, तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं, सिद्धाणं, बुद्धाणं, परिणिव्वुदाणं, अंतयडाणं, पारगयाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसयाणं, धम्मणायगाणं, धम्म-वर-चाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहि-देवाणं, णाणाणं, दंसणाणं, चरित्ताणं तवाणं सया करेमि, किरियम्मं ।

करेमि भंते ! सामाइयं सव्व-सावज्ज-जोगं पच्चक्खामि जावजीवं तिविहेण—मणसा वयसा काएण, ण करेमि, ण कारेमि, अण्णं करंतं पि ण समणुमण्णामि । तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि अप्पाणं, जाव अरहंताणं, भयवंताणं, पज्जुवासं करेमि, तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

(यहाँ तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करके ६ बार णमोकार मन्त्र जप कर कायोत्सर्ग करें, पश्चात् नमस्कार करें । उसके बाद तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करके निम्नलिखित चतुर्विंशतिस्तव पढ़ें—)

चतुर्विंशतिस्तवम्

थोस्सामि हं जिणवरे, तित्थयरे केवली अणंत जिणे ।
णर-पवर-लोए-महिए, विहुय-रय-मले महप्पण्णे ॥१॥
लोयस्सुज्जोय यरे, धम्मं तित्थयरे जिणे वंदे ।
अरहंते कित्तिस्से, चउवीसं चेव केवलिणो ॥२॥
उसह-मजियं च वंदे, संभव-मभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे ॥३॥

सुविहिं च पुप्फयंतं, सीयल सेयं च वासुपुज्जं च ।
विमल-मणंतं भयवं, धम्मं संतिं च वंदामि ॥४॥
कुंथुं च जिण वरिंदं, अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वंदे अरिट्ठणेमिं, तह पासं वड्ढमाणं च ॥५॥
एवं मए अभित्थुआ, विहुय-रय-मला पहीण-जर-मरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु ॥६॥
कित्तिय वंदिय महिया, एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा ।
आरोग्ग-णाण-लाहं, दिंतु समाहिं च मे बोहिं ॥७॥
चंदेहिं णिम्मलयरा, आइच्चेहिं अहिय-पया-संता ।
सायरमिव गंभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥८॥

(यहाँ तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करें, पश्चात् योगिभक्ति पढ़ें–)

योगिभक्ति

जाति-जरोरु-रोग-मरणातुर-शोक-सहस्र-दीपिताः,
दुःसह-नरक-पतन-संत्रस्त-धियः प्रतिबुद्ध-चेतसः ।
जीवितमम्बुबिन्दु-चपलं, तडिदभ्रसमा विभूतयः,
सकलमिदं विचिन्त्य मुनयः,प्रशमाय वनान्तमाश्रिताः ।१।

व्रत-समिति-गुप्ति-संयुताः,
शमसुखमाधाय मनसि वीतमोहाः ।
ध्यानाध्ययन-वशङ्गताः,
विशुद्धये कर्मणां तपश्चरन्ति ॥२॥

दिनकर-किरण-निकर-संतप्त-शिला-निचयेषु निस्पृहाः,
मल-पटलावलिप्त-तनवः, शिथिलीकृत-कर्मबन्धनाः ।
व्यपगत-मदन-दर्प-रति-दोष-कषाय-विरक्त-मत्सराः,
गिरिशिखरेषु चण्डकिरणाभिमुखस्थितयो दिगम्बराः ।३।

सज्ज्ञानामृत-पायिभिः क्षान्तिपयः सिच्यमान-पुण्यकायैः ।
धृत-सन्तोषच्छत्रकै-स्ताप-स्तीव्रोऽपि सह्यते मुनीन्द्रैः ।४।

शिखिगल-कज्जलालिमलिनै-र्विबुधाधिप-चाप-चित्रितैः,
भीम-रवै-र्विसृष्ट - चण्डाशनि - शीतल-वायु - वृष्टिभिः ।
गगनतलं विलोक्य जलदैः, स्थगितं सहसा तपोधनाः,
पुनरपि तरुतलेषु विषमासु निशासु विशङ्कमासते ।५।

जलधारा-शरताडिता न चलन्ति चरित्रतः सदा नृसिंहाः ।
संसारदुःख-भीरवः परीषहारातिघातिनः प्रवीराः ।६।

अविरत-बहल-तुहिन-कण-वारिभि-रंघ्रिप-पत्र-पातनै-,
रनवरत-प्रमुक्त-झङ्कार-रवैः
परुषै-रथानिलैः शोषित-गात्र-यष्टयः ।
इह श्रमणा धृति - कम्बलावृताः शिशिरनिशां,
तुषार - विषमां गमयन्ति चतुःपथे स्थिताः ।।७।।

इति योग-त्रय-धारिणः,
सकल-तपः शालिनः प्रवृद्ध-पुण्य-कायाः ।
परमानन्द - सुखैषिणः,
समाधिमग्र्यं विशन्तु नो भदन्ताः ।।८।।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! योगिभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णरस-कम्म-भूमिसु, आदावण-रुक्खमूल-अब्भोवासठाण-मोण-वीरासणेक्कपास - कुक्कुडासण-चउ-छ-पक्ख - खवणादि-जोग-जुत्ताणं, सव्वसाहूणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहि-

लाओ, सुगइ-गमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

उपर्युक्त प्रतिक्रमण एवं रात्रियोग निष्ठापन कर चुकने के बाद गोधूलि वेला में अर्थात् सूर्योदय होने के २४ मिनट पूर्व से सूर्योदय होने के २४ मिनट पश्चात् (सामायिक का यह ४८ मिनट का जघन्य काल है) तक निम्नलिखित विधि के अनुसार प्रातः-कालीन सामायिक करनी चाहिए ।

सामायिकविधिः

सामायिक के पूर्व की जाने वाली चतुर्दिग्वन्दना

पूर्व दिशा में—नौ बार णमोकार मंत्र का जाप्य कर नमस्कार करते हुए —

**प्राग्-दिग्-विदिगन्तरे, केवलि-जिन-सिद्ध-साधुगण-देवाः ।
ये सर्वर्द्धि-समृद्धा, योगि-गणांस्तानऽहं वन्दे ॥१॥**

दक्षिण दिशा में—नौ बार णमोकार मन्त्र का जाप्य कर नमस्कार करते हुए—

**दक्षिणदिग्-विदिगन्तरे, केवलिजिन-सिद्ध-साधुगण-देवाः ।
ये सर्वर्द्धि-समृद्धा, योगि-गणांस्तानऽहं वन्दे ॥२॥**

पश्चिम दिशा में—नौ बार णमोकार मन्त्र का जाप्य कर नमस्कार करते हुए—

**पश्चिमदिग्-विदिगन्तरे, केवलिजिन-सिद्ध-साधुगण-देवाः ।
ये सर्वर्द्धि-समृद्धा, योगि-गणांस्तानऽहं वन्दे ॥३॥**

उत्तर दिशा में—नौ बार णमोकार मन्त्र का जाप्य कर नमस्कार करते हुए—

उत्तरदिग्-विदिगन्तरे, केवलि-जिन-सिद्ध-साधुगण-देवाः ।
ये सर्वद्धि-समृद्धा, योगि-गणांस्तानऽहं वन्दे ॥४॥

प्रतिज्ञा :–पिच्छिकायुक्त दोनों हाथों को मुकुलित कर और दोनों कुहनियों को उदर पर रख कर यथास्थान मस्तक झुकाते हुए प्रतिज्ञा करें–

तीर्थंकरकेवलि-सामान्यकेवलि-समुद्घातकेवलि-उपसर्गकेवलि-मूककेवलि-अन्तःकृतकेवलिभ्यो नमो नमः । तीर्थंकरोपदिष्ट-श्रुताय नमो नमः । सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र-धारकाचार्योपाध्याय-सर्व-साधुभ्यो नमो नमः ।

श्री मूलसंघे, कुन्दकुन्दाम्नाये, बलात्कारगणे, सेनगच्छे, नन्दीसंघस्य परम्परायाम् श्रीशान्तिसागराचार्यः जातस्तत् शिष्यःश्रीवीरसागराचार्यः, तत् शिष्यः श्रीशिवसागराचार्यः, तत् शिष्योऽहम् (अपना नाम बोलें) **जम्बूवृक्षोपलक्षित - जम्बूद्वीपे, भरतक्षेत्रे, आर्यखण्डे, भारतदेशे, ... प्रान्ते, नगरे, १००८ श्री जिन-चैत्यालयमध्ये, अद्य वीरनिर्वाणसं. ...... वि.सं. ... स्य मासोत्तममासे ... मासे ... पक्षे ..... शुभतिथौ ...... वासरे पौर्वाह्णिक (माध्याह्निक, आपराह्णिक) काले घटिकाद्वय (४८ मिनट) पर्यन्तं सर्व-सावद्य-योगाद् विरतोऽस्मि ।**

अथ ईर्यापथशुद्धिः

पडिक्कमामि भंते ! इरियावहियाए, विराहणाए, अणागुत्ते, अइगमणे, णिग्गमणे, ठाणे, गमणे, चंकमणे, पाणुग्गमणे, बीयुग्गमणे, हरियुग्गमणे, उच्चार-पस्सवण - खेल-सिंहाणय - वियडि - पइट्ठावणियाए, जे

जीवा एइंदिया वा, वेइंदिया वा, तेइंदिया वा, चउ-इंदिया वा, पंचिंदिया वा, णोल्लिदा वा, पेल्लिदा वा, संघट्टिदा वा, संघादिदा वा, उद्दाविदा वा, परिदाविदा वा, किरिंच्छिदा वा, लेस्सिदा वा, छिंदिदा वा, भिंदिदा वा, ठाणदो वा, ठाण-चंकमणदो वा, तस्स उत्तरगुणं, तस्स पायच्छित्त-करणं, तस्स विसोहि-करणं, जाव अरहंताणं, भयवंताणं, णमोक्कारं, पज्जुवासं करेमि, तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

(यहाँ २७ श्वासोच्छ्वासों में ९ जाप्य करे ।)

ईर्यापथ आलोचना

ईर्यापथे प्रचलताद्य मया प्रमादा-
देकेन्द्रिय-प्रमुख-जीव-निकायबाधा ।
निर्वर्तिता यदि भवेदयुगान्तरेक्षा,
मिथ्या तदस्तु दुरितं गुरुभक्तितो मे ।।१।।

इच्छामि भंते ! इरियावहियस्स आलोचेउं, पुव्वुत्तर-दक्खिण-पच्छिम - चउदिस - विदिसासु, विहर-माणेण जुगंतर-दिट्ठिणा, भव्वेण दट्ठव्वा । पमाद-दोसेण, डव-डव-चरियाए, पाण-भूद-जीव-सत्ताणं, उव-घादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

कृत्यप्रतिज्ञा

नमोऽस्तु भगवन् ! देव-वन्दनां कुर्वेऽहम् ।

मुख्यमङ्गलम्

सिद्धं सम्पूर्णभव्यार्थं, सिद्धेः कारणमुत्तमम् ।
प्रशस्त-दर्शन-ज्ञान-चारित्र-प्रतिपादनम् ॥१॥

सुरेन्द्र - मुकुटाश्लिष्ट - पादपद्मांशु - केशरम् ।
प्रणमामि महावीरं, लोकत्रितय-मङ्गलम् ॥२॥

खम्मामि सव्व-जीवाणं, सव्वे जीवा खमंतु मे ।
मित्ती मे सव्व-भूदेसु, वेरं मज्झं ण केण वि ॥१॥

राय - बंध - पदोसं च, हरिसं दीण - भावयं ।
उस्सुगत्तं भयं सोगं, रदि-मरदिं च वोस्सरे ॥२॥

हा ! दुट्ठ-कयं, हा ! दुट्ठ-चिंतियं, भासियं च हा ! दुट्ठं ।
अंतो - अंतो डज्झमि, पच्छत्तावेण वेयंतो ॥३॥

दव्वे खेत्ते काले, भावे य कदावराह-सोहणयं ।
णिंदण-गरहण-जुत्तो, मण-वय-काएण पडिक्कमणं ॥४॥

समता सर्वभूतेषु, संयमः शुभभावना ।
आर्त्त-रौद्र-परित्यागस्तद्धि सामायिकं मतं ॥५॥

अथ कृत्यविज्ञापना

भगवन् ! नमोस्तु प्रसीदन्तु, प्रभुपादौ वन्देऽहम् ।
एषोऽहं सर्व-सावद्य-योगाद् विरतोऽस्मि ।

अथ पौर्वाह्णिक (माध्याह्निक, आपराह्णिक) देववन्दनाक्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीचैत्यभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(यहाँ सर्वप्रथम भूमि-स्पर्शनात्मक पंचांग नमस्कार करें, पश्चात् तीन आवर्त्त और एक शिरोनति कर निम्नलिखित सामायिक दण्डक पढ़ें-)

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।

चत्तारि मंगलं—अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा—अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि—अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलि-पण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ।

अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णरस-कम्म-भूमिसु, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, आदियराणं, तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं, सिद्धाणं, बुद्धाणं, परिणिव्वुदाणं, अंतयडाणं, पार-गयाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसयाणं, धम्म-णायगाणं, धम्म-वर-चाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहि-देवाणं, णाणाणं, दंसणाणं, चरित्ताणं, तवाणं सया करेमि, किरियम्मं ।

करेमि भंते ! सामाइयं सव्व-सावज्ज-जोगं, पच्चक्खामि, जावजीवं तिविहेण—मणसा वयसा काएण, ण करेमि, ण कारेमि, अण्णं करंतं पि ण समणुमण्णामि । तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि अप्पाणं जाव अरहंताणं, भयवंताणं,

पज्जुवासं करेमि, ताव कालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

(यहाँ तीन आवर्त्त एवं शिरोनति करके २७ श्वासोच्छ्वासों में ६ बार णमोकार मन्त्र पूर्वक कायोत्सर्ग करें । पश्चात् पंचांग नमस्कार करें । तदनंतर तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करके चतुर्विंशतिस्तव पढ़ें–)

चतुर्विंशतिस्तवम्

थोस्सामि हं जिणवरे, तित्थयरे केवली अणंतजिणे ।
णर-पवर-लोय-महिए, विहुय-रय-मले महप्पण्णे ॥१॥

लोयस्सुज्जोययरे, धम्मं तित्थयरे जिणे वंदे ।
अरहंते कित्तिस्से, चउवीसं चेव केवलिणो ॥२॥

उसह-मजियं च वंदे, संभव-मभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे ॥३॥

सुविहिं च पुप्फयंतं, सीयल सेयं च वासुपुज्जं च ।
विमल-मणंतं भयवं, धम्मं संतिं च वंदामि ॥४॥

कुंथुं च जिण वरिंदं, अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वंदे अरिट्ठ-णेमिं, तह पासं वड्ढमाणं च ॥५॥

एवं मए अभित्थुआ- विहुय-रय-मला पहीण-जर-मरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु ॥६॥

कित्तिय वंदिय महिया, एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा ।
आरोग्ग-णाण-लाहं, दिंतु समाहिं च मे बोहिं ॥७॥

चंदेहिं णिम्मलयरा, आइच्चेहिं अहिय-पया-संता ।
सायरमिव गंभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥८॥

(यहाँ तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करें । पश्चात् पिच्छिका युक्त दोनों हाथों को मुकुलित कर एवं दोनों कुहनियों को उदर पर रख कर **जयति भगवान् स्तोत्र** (चैत्यभक्ति) पढ़ें—)

(१) 'जयति भगवान्' स्तोत्रम्

देव-धर्म-वचन-ज्ञानस्तुतिः

जयति भगवान्, हेमाम्भोज-प्रचार-विजृम्भिता-
वमर-मुकुट-च्छायोद्गीर्ण-प्रभा-परिचुम्बितौ ।
कलुषहृदया, मानोद्भ्रान्ताः, परस्पर-वैरिणः,
विगतकलुषाः, पादौ यस्य, प्रपद्य-विशश्वसुः ॥१॥

तदनु जयति, श्रेयान् धर्मः, प्रवृद्ध-महोदयः,
कुगति-विपथ-क्लेशाद्योसौ, विपाशयति प्रजाः ।
परिणत-नय-स्यांगी-भावाद्, विविक्त-विकल्पितं,
भवतु भवतस्त्रातृ त्रेधा, जिनेन्द्र-वचोऽमृतम् ॥२॥

तदनु जयताज्जैनी वित्तिः, प्रभङ्ग-तरङ्गिणी,
प्रभव-विगम-ध्रौव्य-द्रव्य-स्वभाव-विभाविनी ।
निरुपम-सुखस्येदं द्वारं, विघट्य निरर्गलम्,
विगतरजसं मोक्षं देयात्, निरत्यय-मव्ययम् ॥३॥

(२) दश-पद-स्तोत्रम्

पञ्च-परमेष्ठियों को नमस्कार

अर्हत्-सिद्धाचार्योपाध्यायेभ्य-स्तथा च साधुभ्यः ।
सर्व-जगद्-वन्द्येभ्यो, नमोऽस्तु सर्वत्र सर्वेभ्यः ॥४॥

अरहन्तदेव को नमस्कार

मोहादि-सर्व-दोषारिघातकेभ्यः सदा हत-रजोभ्यः ।
विरहित-रहस्-कृतेभ्यः, पूजार्हेभ्यो नमोऽर्हद्भ्यः ॥५॥

धर्म को नमस्कार

क्षान्त्यार्जवादि-गुणगण-सुसाधनं सकललोक-हित-हेतुम् ।
शुभ-धामनि धातारं, वन्दे धर्मं जिनेन्द्रोक्तम् ॥६॥

जिनवाणी की स्तुति

मिथ्याज्ञान-तमोवृत-लोकैक-ज्योति-रमित-गम-योगि- ।
साङ्गोपाङ्ग-मजेयं, जैनं वचनं सदा वन्दे ॥७॥

जिनप्रतिमाओं को नमस्कार

भवन-विमान-ज्योति-र्व्यन्तर-नरलोक–विश्वचैत्यानि ।
त्रिजगदभिवन्दितानां, त्रेधा वन्दे जिनेन्द्राणाम् ॥८॥

चैत्यालय की स्तुति

भुवनत्रयेऽपि भुवन-त्रयाधिपाभ्यर्च्य तीर्थंकर्तॄणाम् ।
वन्दे भवाग्नि-शान्त्यै विभवानामालयालीस्ताः ॥९॥

स्तुति करने का फल

इति पञ्च-महापुरुषाः, प्रणुता जिनधर्म-वचन-चैत्यानि ।
चैत्यालयाश्च विमलां, दिशन्तु बोधिं बुधजनेष्टाम् ॥१०॥

(३) जिन-प्रतिमा-स्तवनम्

कृत्रिम-अकृत्रिम जिनप्रतिमाओं की स्तुति

अकृतानि कृतानि चाप्रमेय-
द्युतिमन्ति द्युतिमत्सु मन्दिरेषु ।
मनुजामर-पूजितानि वन्दे,
प्रतिबिम्बानि जगत्त्रये जिनानाम् ॥११॥

द्युतिमण्डल-भासुराङ्ग-यष्टीः,
प्रतिमा अप्रतिमा जिनोत्तमानाम् ।

भुवनेषु विभूतये प्रवृत्ता,
वपुषा प्राञ्जलिरस्मि वन्दमानः ॥१२॥
विगतायुध-विक्रिया-विभूषाः,
प्रकृतिस्थाः कृतिनां जिनेश्वराणाम् ।
प्रतिमाः प्रतिमा-गृहेषु कान्त्या,
प्रतिमाः कल्मष-शान्तयेऽभिवन्दे ॥१३॥
कथयन्ति कषाय-मुक्ति-लक्ष्मीं,
परया शान्ततया भवान्तकानाम् ।
प्रणमाम्यभिरूप-मूर्तिमन्ति,
प्रतिरूपाणि विशुद्धये जिनानाम् ॥१४॥

स्तुति के फल की प्रार्थना

यदिदं मम सिद्धभक्तिनीतं,
सुकृतं दुष्कृत-वर्त्म-रोधि तेन ।
पटुना जिनधर्म एव भक्ति-
र्भवताज्जन्मनि जन्मनि स्थिरा मे ॥१५॥

(४) लोकस्थचैत्य-चैत्यालय-कीर्तनम्

अर्हतां सर्वभावानां, दर्शन-ज्ञान—सम्पदाम् ।
कीर्तयिष्यामि चैत्यानि, यथाबुद्धि विशुद्धये ॥१६॥
श्रीमद्-भवन-वासस्थाः, स्वयं भासुरमूर्तयः ।
वन्दिता नो विधेयासुः, प्रतिमा परमां गतिम् ॥१७॥
यावन्ति सन्ति लोकेऽस्मिन्, नकृतानि कृतानि च ।
तानि सर्वाणि चैत्यानि, वन्दे भूयांसि भूतये ॥१८॥
ये व्यन्तरविमानेषु, स्थेयांसः प्रतिमा-गृहाः ।
ते च संख्यामतिक्रान्ताः, सन्तु नो दोषविच्छिदे ॥१९॥

ज्योतिषामथ लोकस्य, भूतयेऽद्भुत-सम्पदः ।
गृहाः स्वयम्भुवः सन्ति, विमानेषु नमामि तान् ॥२०॥

वन्दे सुर-किरीटाग्र-मणिच्छायाभिषेचनम् ।
याः क्रमेणैव सेवन्ते, तदर्च्चाः सिद्धिलब्धये ॥२१॥

स्तुति के फल की प्रार्थना

इति स्तुति-पथातीत-श्रीभृता-मर्हतां मम ।
चैत्याना-मस्तु संकीर्ति, सर्वास्रव-निरोधिनी ॥२२॥

(५) अर्हन्-महानद-स्तवनम्

अर्हन्-महानदस्य,
त्रिभुवन-भव्यजन-तीर्थयात्रिक-दुरितम् ।
प्रक्षालनैककारण-
मतिलौकिक-कुहकतीर्थ-मुत्तमतीर्थम् ॥२३॥

लोकालोक-सुतत्त्व-
प्रत्यवबोधन-समर्थ-दिव्यज्ञान— ।
प्रत्यह-वहत्-प्रवाहं,
व्रत-शीलामल-विशाल-कूल-द्वितयम् ॥२४॥

शुक्लध्यान-स्तिमित-
स्थित-राजद्-राजहंस-राजितमसकृत्- ।
स्वाध्याय-मन्द्रघोषं,
नानागुण-समितिगुप्ति-सिकता-सुभगम् ॥२५॥

क्षान्त्यावर्त-सहस्रं,
सर्व-दया-विकच-कुसुम-विलसल्-लतिकम् ।
दुःसह-परीषहाख्य-
द्रुततर-रङ्गत्तरङ्ग-भङ्गुर-निकरम् ॥२६॥

व्यपगत-कषाय-फेनं,
रागद्वेषादि-दोष-शैवल - रहितम् ।
अत्यस्त-मोह-कर्दम-
मतिदूर-निरस्त - मरण-मकर - प्रकरम् ॥२७॥

ऋषि-वृषभ-स्तुति-मन्द्रोद्रेकित-
निर्घोष - विविध - विहग-ध्वानम् ।
विविध-तपोनिधि-पुलिनं,
सास्रव - संवरण-निर्जरा - निःस्रवणम् ॥२८॥

गणधर-चक्र-धरेन्द्र-
प्रभृति-महाभव्य-पुण्डरीकैः पुरुषैः ।
बहुभिः स्नातं भक्त्या,
कलि-कलुष - मलापकर्षणार्थ - ममेयम् ॥२९॥

अवतीर्णवतः स्नातुं,
ममापि दुस्तर-समस्त-दुरितं दूरम् ।
व्यपहरतु परम-पावन-
मनन्य-जय्य - स्वभाव-भाव - गम्भीरम् ॥३०॥

(६) जिनरूपस्तवनम्

अताम्र-नयनोत्पलं, सकल-कोप-वह्ने-र्जयात्,
कटाक्ष - शर-मोक्षहीन - मविकारतोद्रेकतः ।
विषाद-मद-हानितः, प्रहसितायमानं सदा,
मुखं कथयतीव ते, हृदयशुद्धि-मात्यन्तिकीम् ॥३१॥

निराभरण - भासुरं, विगतराग - वेगोदयात्,
निरम्बर-मनोहरं, प्रकृति-रूप-निर्दोषतः ।
निरायुध-सुनिर्भयं, विगत-हिंस्य-हिंसाक्रमात्,
निरामिष-सुतृप्तिमद् विविधवेदनानां क्षयात् ॥३२॥

मित-स्थित-नखाङ्गजं, गतरजो-मल-स्पर्शनं,
नवाम्बुरुह-चन्दन-प्रतिम-दिव्य-गन्धोदयम् ।
रवीन्दु—कुलिशादि--दिव्य-बहु-लक्षणालङ्कृतं,
दिवाकर-सहस्र-भासुर-मपीक्षणानां प्रियम् ॥३३॥

हितार्थ-परिपन्थिभिः, प्रबल-राग-मोहादिभिः,
कलङ्कितमना-जनो, यदभिवीक्ष्य शोशुद्धयते ।
सदाभिमुखमेव यज्जगति पश्यतां सर्वतः,
शरद्-विमल-चन्द्रमण्डल-मिवोत्थितं दृश्यते ॥३४॥

तदेतदमरेश्वर-प्रचल-मौलि-माला-मणि-
स्फुरत्-किरण-चुम्बनीय-चरणारविन्दद्वयम् ।
पुनातु भगवज्जिनेन्द्र, तव रूपमन्धीकृतं,
जगत् - सकल - मन्य-तीर्थ-गुरुरूपदोषोदयैः ॥३५॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! चेइयभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं अहलोय, तिरियलोय, उड्ढलोयम्मि, किट्टिमाकिट्टिमाणि, जाणि जिण-चेइयाणि, ताणि सव्वाणि, तीसु वि लोएसु, भवणवासिय, वाणविंतर, जोइसिय, कप्पवासिय त्ति, चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गंधेण[1], दिव्वेण पुप्फेण[2], दिव्वेण धुव्वेण, दिव्वेण चुण्णेण, दिव्वेण वासेण, दिव्वेण ण्हाणेण, णिच्चकालं अच्चंति, पुज्जंति, वंदंति, णमस्संति । अहं वि इह संतो तत्थ संताइं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ,

१ दिव्वेण अक्खएण । २ दिव्वेण दीवेण ।

बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

अथ कृतविज्ञापनम्

अथ पौर्वाह्णिक देववन्दना-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीपञ्चमहागुरुभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(यहाँ भूमि-स्पर्शनात्मक पंचांग नमस्कार करें, फिर तीन आवर्त्त और एक शिरोनति कर यह सामायिक दण्डक पढ़ें–)

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं,
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।

चत्तारि मंगलं–अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा–अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि–अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ।

अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णरस-कम्म-भूमिसु, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, आदियराणं, तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं, सिद्धाणं, बुद्धाणं, परिणिव्वुदाणं, अंतयडाणं, पारगयाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसयाणं, धम्मणायगाणं, धम्म-वर-चाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहि-देवाणं, णाणाणं, दंसणाणं, चरित्ताणं तवाणं सया करेमि, किरियम्मं ।

करेमि भंते ! सामाइयं सव्व-सावज्ज-जोगं पच्चक्खामि जावजीवं तिविहेण—मणसा वयसा काएण, ण करेमि, ण कारेमि, अण्णं करंतं पि ण समणुमण्णामि । तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि अप्पाणं, जाव अरहंताणं, भयवंताणं, पज्जुवासं करेमि, तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

(यहाँ तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करके २७ श्वासोच्छ्वासों में ६ बार णमोकार मन्त्र पूर्वक कायोत्सर्ग करें । पश्चात् पंचांग नमस्कार करें । तदनंतर तीन आवर्त्त और एक शिरोनति कर चतुर्विशतिस्तव पढ़ें—)

थोस्सामि हं जिणवरे, तित्थयरे केवली अणंत जिणे ।
णर-पवर-लोए-महिए, विहुय-रय-मले महप्पण्णे ॥१॥
लोयस्सुज्जोययरे, धम्मं तित्थयरे जिणे वंदे ।
अरहंते कित्तिस्से, चउवीसं चेव केवलिणो ॥२॥
उसह-मजियं च वंदे, संभव-मभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे ॥३॥
सुविहिं च पुप्फयंतं, सीयल सेयं च वासुपुज्जं च ।
विमल-मणंतं भयवं, धम्मं संतिं च वंदामि ॥४॥
कुंथुं च जिण वरिंदं, अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वंदे अरिट्ठणेमिं, तह पासं वड्ढमाणं च ॥५॥
एवं मए अभित्थुआ, विहुय-रय-मला पहीण-जर-मरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु ॥६॥
कित्तिय वंदिय महिया, एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा ।
आरोग्ग-णाण-लाहं, दिंतु समाहिं च मे बोहिं ॥७॥

चंदेहिं णिम्मलयरा, आइच्चेहिं अहिय-पया-संता ।
सायरमिव गंभीरा, सिद्धा सिद्धि मम दिसंतु ॥८॥

(यहाँ तीन आवर्त और एक शिरोनति करें । पश्चात् वन्दनामुद्रा पूर्वक पंचमहागुरुभक्ति पढ़ें—)

अथ पञ्चमहागुरुभक्तिः

मणुय-णाइंद-सुर-धरिय-छत्तत्तया,
पंचकल्लाण-सोक्खावली-पत्तया ।
दंसणं णाण-झाणं अणंतं बलं,
ते जिणा दिंतु अम्हं वरं मंगलं ॥१॥

जेहिं झाणग्गि-वाणेहिं अइदड्ढयं,
जम्म-जर-मरण-णयर-त्तयं दड्ढयं ।
जेहिं पत्तं सिवं सासयं ठाणयं,
ते महं दिंतु सिद्धा वरं णाणयं ॥२॥

पंच-आचार-पंचग्गि-संसाहया,
बारसंगाइ-सुअ-जलहि-अवगाहया ।
मोक्ख-लच्छी महंती महं ते सया,
सूरिणो दिंतु मोक्खं गया-संगया ॥३॥

घोर-संसार-भीमाडवी-काणणे,
तिक्ख-वियराल-णह-पाव-पंचाणणे ।
णट्ठ-मग्गाण जीवाण पहदेसिया,
वंदिमो ते उवज्झाय अम्हे सया ॥४॥

उग्ग-तव-चरण-करणेहिं झीणं गया,
धम्म-वर-झाण-सुक्केक्क-झाणं गया ।
णिब्भरं तवसिरीए समालिंगया,
साहवो ते महा-मोक्ख-पह-मग्गया ॥५॥

एण थोत्तेण जो पंचगुरु वंदए,
गुरुय-संसार-घण-वेल्लि सो छिंदए ।
लहइ सो सिद्ध-सोक्खाइं बहु-माणणं,
कुणइ कम्मिंधणं पुंज-पज्जालणं ॥६॥

अरुहा सिद्धा इरिया, उवज्झाया साहु पंचपरमेट्ठी ।
एदे पंच-णमोयारा, भवे-भवे मम सुहं दिंतु ॥७॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! पंचमहागुरु-भत्ति काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं । अट्ठमहापाडिहेर-संजुत्ताणं अरहंताणं, अट्ठगुण-संपण्णाणं उड्ढलोय-मत्थयम्मि पइट्ठियाणं सिद्धाणं, अट्ठपवयण-माउया-संजुत्ताणं आइरियाणं, आयारादि-सुद-णाणोवदेसयाणं, उवज्झायाणं, ति-रयण-गुण-पालण-रयाणं सव्वसाहूणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

अथ पौर्वाह्णिक (माध्याह्निक, आपराह्णिक) देववन्दनाक्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं चैत्यभक्ति पञ्चगुरुभक्ति कृत्वा तद्धीनाधिक-दोष-विशुद्धयर्थं आत्मपवित्री-करणार्थं समाधिभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(यहाँ पंचाग नमस्कार कर तीन आवर्त्त और एक शिरोनति कर सामायिकस्तव पढ़ें । पश्चात् तीन आवर्त्त और एक शिरोनति कर २७ श्वासोच्छ्वासों में कायोत्सर्ग करके पंचांग

नमस्कार करें । पश्चात् तीन आवर्त्त और एक शिरोनति कर **'थोस्सामि स्तव'** पढ़ कर पुनः तीन आवर्त्त और एक शिरोनति कर समाधिभक्ति पढ़ें—)

समाधिभक्तिः / अथेष्टप्रार्थना

प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः ।

शास्त्राभ्यासो, जिनपति-नुतिः, सङ्गतिः सर्वदार्यैः,
सद्वृत्तानां गुण-गण-कथा, दोषवादे च मौनम् ।
सर्वस्यापि, प्रियहितवचो, भावना चात्मतत्त्वे,
सम्पद्यन्तां, मम भव-भवे, यावदेतेऽपवर्गः ॥१॥

तव पादौ मम हृदये, मम हृदयं तव पद-द्वये लीनम् ।
तिष्ठतु जिनेन्द्र ! तावद्, यावन्-निर्वाण-सम्प्राप्तिः ॥२॥

अक्खर-पयत्थ-हीणं, मत्ताहीणं च जं मए भणियम् ।
तं खमहु णाण-देवय ! मज्झ वि दुक्खक्खयं दिंतु ॥३॥

जं सक्कइ तं कीरइ, सेसस्स सया करेइ सद्दहणं ।
सद्दहमाणो जीवो, पावइ अजरामरं ठाणं ॥४॥

तवयरणं वयधरणं, संजमसरणं च जीवदया-करणं ।
अंते समाहिमरणं, चउगइ-दुक्खं णिवारेइ ॥५॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! समाहिभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, रयणत्तय - सरूव - परमप्प-झाण - लक्खणं समाहिभत्तीए णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

अनन्तर यथावकाश आत्मध्यान करें ।

॥ इति देववन्दना (सामायिक) विधिः समाप्ता ॥

आचार्यवन्दनाविधिः

सामायिक क्रिया समाप्त होने के बाद सर्व शिष्य एवं साधर्मी मुनिराज आचार्य के समीप गवासन से बैठें तथा '**हे भगवन् ! वन्देऽहं**' (हे भगवन् ! मैं आपकी वन्दना करता हूँ) ऐसी विज्ञप्ति करें। इसके बाद जब आचार्य, '**वन्दस्व**' (वन्दना करो) ऐसी आज्ञा कर दें तब नीचे लिखी **लघु सिद्धभक्ति** और **लघु आचार्यभक्ति** द्वारा वन्दना करें। यदि आचार्य सिद्धान्तवेत्ता हों तो उनकी वन्दना **लघु सिद्धभक्ति, लघु श्रुतभक्ति** और **लघु आचार्यभक्ति** के द्वारा करनी चाहिए। आचार्य के अतिरिक्त यदि अन्य साधु सिद्धान्तवेत्ता हों तो उनकी वन्दना भी गवासन से बैठ कर **लघु सिद्ध** और **लघु श्रुतभक्ति** बोल कर तथा अन्य ज्येष्ठ (बड़े) साधुओं की वन्दना, मात्र **लघु सिद्धभक्ति** बोल कर करनी चाहिए।

अथ विज्ञापनम्

अथ पौर्वाह्णिक (आपराह्णिक) आचार्यवन्दना-क्रियायां, पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीसिद्धभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(२७ श्वासोच्छ्वास में कायोत्सर्ग करें।)

सम्मत्त-णाण-दंसण-वीरिय-सुहुमं तहेव अवगहणं ।
अगुरु-लहु-मव्वावाहं, अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं ॥१॥
तव-सिद्धे णय-सिद्धे, संजम-सिद्धे चरित्त-सिद्धे य ।
णाणम्मि दंसणम्मि य, सिद्धे सिरसा णमस्सामि ॥२॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! सिद्धभत्ति - काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं,

अट्ठविह - कम्म - विप्पमुक्काणं, अट्ठगुण - संपण्णाणं उड्ढलोय-मत्थयम्मि पयट्ठियाणं, तव-सिद्धाणं, णय-सिद्धाणं, संजम-सिद्धाणं, चरित्त-सिद्धाणं अदीदाणागद-वट्टमाण-कालत्तय-सिद्धाणं, सव्व-सिद्धाणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

विज्ञापनम्

अथ पौर्वाह्णिक-आचार्यवन्दना-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीश्रुतभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(२७ श्वासोच्छ्वास में कायोत्सर्ग करना चाहिए ।)

कोटीशतं द्वादश चैव कोट्यो,
लक्षाण्यशीति-स्त्र्यधिकानि चैव ।
पञ्चाशदष्टौ च सहस्र-संख्या-
मेतच्छ्रुतं पञ्चपदं नमामि ॥१॥

अरहंत - भासियत्थं, गणहर - देवेहि गंथियं सम्मं ।
पणमामि भत्तिजुत्तो, सुदणाण-महोवहिं सिरसा ॥२॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! सुदभत्ति काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं अंगोवंग - पइण्णए-पाहुडय - परियम्मसुत्त-पढमाणिओग-पुव्वगय-चूलिया चेव सुत्तत्थय-थुइधम्म-कहाइयं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि,

णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

विज्ञापनम्

अथ पौर्वाह्णिक-आचार्यवन्दना-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं, श्रीआचार्यभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(यहाँ २७ श्वासोच्छ्वासों में कायोत्सर्ग करना चाहिए ।)

लघु आचार्यभक्तिः

श्रुतजलधि-पारगेभ्यः, स्वपरमत-विभावना-पटुमतिभ्यः ।
सुचरित-तपोनिधिभ्यो, नमो गुरुभ्यो गुणगुरुभ्यः ॥१॥
छत्तीस-गुण-समग्गे, पंचविहाचार-करण-संदरिसे ।
सिस्साणुग्गह-कुसले, धम्माइरिए सया वंदे ॥२॥
गुरुभत्ति-संजमेण य, तरंति संसार-सायरं घोरं ।
छिण्णंति अट्ठ-कम्मं, जम्मण-मरणं ण पावेंति ॥३॥
ये नित्यं व्रत-मन्त्र-होम-निरताः, ध्यानाग्नि-होत्राकुलाः,
षट्कर्माभिरता-स्तपोधन-धनाः, साधु-क्रियाः साधवः ।
शीलप्रावरणा-गुणप्रहरणाश्-चन्द्रार्क-तेजोऽधिका,
मोक्षद्वार-कपाट-पाटन-भटाः, प्रीणन्तु मां साधवः ॥४॥
गुरवः पान्तु नो नित्यं, ज्ञान-दर्शन-नायकाः ।
चारित्रार्णव-गम्भीराः, मोक्षमार्गोपदेशकाः ॥५॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! आइरियभत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं, सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं,

पंचविहाचाराणं, आइरियाणं, आयारादिसुद-णाणोव-देसयाणं उवज्झायाणं, ति-रयण-गुणपालण-रयाणं सव्वसाहूणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

'**त्रिसन्ध्यं वन्दने युञ्ज्याच्चैत्य-पंच-गुरुस्तुति**' तथा '**जिणदेव-वंदणाए चेदिय-भत्ती य पंचगुरुभत्ती**' अनगार धर्मामृत ६/४५ पर उद्धृत इन आगमसूत्रों से तथा मूलाचार आदि अन्य ग्रन्थों से ऐसा प्रतीत होता है कि आचार्यों ने त्रिकाल सामायिक और भगवान् जिनेन्द्र के दर्शन इन दोनों को देववन्दना शब्द से अर्थात् दोनों को एक ही कहा है ।

अनगार धर्मामृत अध्याय ७ के "**श्रुतदृष्ट्यात्मनि स्तुत्यं ···· निःसही गिरा**" ।। १७ ।। "**चैत्यालोकोद्य········मुद्रया पठन्**" ।। १८ ।। "**कृत्वेर्यापथसंशुद्धि पर्यङ्कस्थोग्रमङ्गलम्**" ।। १९ ।। आदि श्लोकों में भगवान् जिनेन्द्र के दर्शन करने के बाद "**नमोस्तु भगवन् ! देववन्दनां करिष्यामि**" कह कर सामायिक करने की प्रतिज्ञा कराई है और इसी के बाद सामा-यिक विधि का प्रतिपादन किया है । किन्तु वर्तमान में साधुजन प्रातःकालीन सामायिक के बाद और सन्ध्याकालीन सामायिक के पूर्व देवदर्शन करते हैं, इसी क्रिया को लक्ष्य में रख कर यहाँ प्रातःकालीन देववन्दना (सामायिक) के अनन्तर जिनेन्द्रदर्शन विधि का क्रम रखा जा रहा है ।

देवदर्शनविधि

द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावों की शुद्धिपूर्वक साधुजन देव-दर्शन के लिए जिनमन्दिर जावें । वहाँ प्रासुक एवं योग्य स्थान पर बैठ कर अपने कमण्डलु के जल से हाथ-पैर धोवें । अनन्तर

(ॐ) **जय जय जय, निःसही निःसही निःसही** शब्दों का उच्चारण करते हुए मन्दिरजी में प्रवेश करें। वहाँ पहुँच कर जिनेन्द्रदेव की वीतराग मुद्रा का अवलोकन कर तीन बार नमस्कार करें, पश्चात् पिच्छिका युक्त दोनों हाथों को मुकुलित कर और कुहनियों को उदर पर रख कर गर्भगृह अथवा वेदी की तीन प्रदक्षिणाएँ देते हुए निम्नलिखित स्तोत्र-पाठों में से कोई एक दर्शनपाठ बोलें। विशेष इतना है कि प्रदक्षिणा देते समय प्रत्येक प्रदक्षिणा में एवं प्रत्येक दिशा में तीन-तीन आवर्त्त और एक-एक शिरोनति करते जाना चाहिए।

चैत्यालयाष्टकं स्तोत्रम्

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं भव-ताप-हारि,
भव्यात्मनां विभव-सम्भव-भूरि-हेतु ।
दुग्धाब्धि-फेन-धवलोज्ज्वल-कूट-कोटी,
नद्धध्वज-प्रकर-राजि-विराजमानम् ॥१॥

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं भुवनैक-लक्ष्मी-
धामर्द्धि-वर्धित-महामुनि-सेव्यमानम् ।
विद्याधरामर-वधूजन-मुक्त-दिव्य-
पुष्पाञ्जलि-प्रकर-शोभित-भूमिभागम् ॥२॥

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं भवनादि-वास-
विख्यात-नाक-गणिकागण-गीयमानम् ।
नानामणि-प्रचय-भासुर-रश्मिजाल-
व्यालीढनिर्मल-विशालगवाक्षजालम् ॥३॥

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं सुर-सिद्ध-यक्ष-
गन्धर्व-किन्नर-करार्पित-वेणु-वीणा- ।
सङ्गीत-मिश्रित-नमस्कृत-धीर-नादै-
रापूरिताम्बरतलोरु-दिगन्तरालम् ॥४॥

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं विलसद्-विलोल-
माला-कुलालि-ललितालक-विभ्रमाणम् ।
माधुर्य-वाद्य-लय-नृत्य-विलासिनीनां,
लीला-चलद्-वलय-नूपुर-नाद-रम्यम् ॥५॥

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं मणिरत्नहेम-
सारोज्ज्वलैः कलशचामर-दर्पणाद्यैः ।
सन्मङ्गलैः सततमष्ट-शत-प्रभेदै-
र्विभ्राजितं विमल-मौक्तिक-दामशोभम् ।६।

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं वर - देवदारु-
कर्पूर-चन्दन - तरुष्क - सुगन्धि - धूपैः ।
मेघायमान - गगने पवनाभिघात-
चञ्चच्चलद्-विमल-केतन-तुङ्गशालम् ।७।

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं धवलातपत्र-
च्छायानिमग्न-तनुयक्षकुमारवृन्दैः ।
दोधूयमान-सित-चामर-पंक्ति-भासं,
भामण्डलद्युति-युत - प्रतिमाभिरामम् ॥८॥

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं विविध-प्रकार-
पुष्पोपहार - रमणीय - सुरत्न - भूमिम् ।
नित्यं वसन्त-तिलक-श्रिय-मादधानं,
सन्मङ्गलं सकलचन्द्र-मुनीन्द्र-वन्द्यम् ॥९॥

दृष्टं मयाद्य मणि-काञ्चन-चित्र-तुङ्ग-
सिंहासनादि-जिनबिम्ब-विभूति-युक्तम् ।
चैत्यालयं यदतुलं परिकीर्तितं मे,
सन्मङ्गलं सकलचन्द्र-मुनीन्द्र-वन्द्यम् ॥१०॥

।। चैत्यालयाष्टकं स्तोत्रं समाप्तम् ।।

(अथवा नीचे लिखा दर्शन-पाठ बोलकर भगवान के दर्शन करने चाहिए ।)

अथ दर्शनपाठः

दर्शनं देवदेवस्य, दर्शनं पाप-नाशनम् ।
दर्शनं स्वर्गसोपानं, दर्शनं मोक्षसाधनम् ।।१।।

दर्शनेन जिनेन्द्राणां, साधूनां वन्दनेन च ।
न तिष्ठति चिरं पापं, छिद्रहस्ते यथोदकम् ।।२।।

वीतराग-मुखं दृष्ट्वा, पद्म-राग-समप्रभम् ।
नैकजन्मकृतं पापं, दर्शनेन विनश्यति ।।३।।

दर्शनं जिनसूर्यस्य, संसार-ध्वान्त-नाशनम् ।
बोधनं चित्तपद्मस्य, समस्तार्थ-प्रकाशनम् ।।४।।

दर्शनं जिनचन्द्रस्य, सद्-धर्मामृत-वर्षणम् ।
जन्मदाह-विनाशाय, वर्धनं सुख-वारिधेः ।।५।।

जीवादितत्त्व-प्रतिपादकाय,
सम्यक्त्व-मुख्याष्ट-गुणार्णवाय ।
प्रशान्तरूपाय दिगम्बराय,
देवाधिदेवाय नमो जिनाय ।।६।।

चिदानन्दैक-रूपाय, जिनाय परमात्मने ।
परमात्म-प्रकाशाय, नित्यं सिद्धात्मने नमः ।।७।।

अन्यथा शरणं नास्ति, त्वमेव शरणं मम ।
तस्मात् कारुण्य-भावेन, रक्ष-रक्ष जिनेश्वर ! ।।८।।

नहि त्राता नहि त्राता, नहि त्राता जगत्-त्रये ।
वीतरागात् परो देवो, न भूतो न भविष्यति ।।९।।

जिने भक्ति-र्जिने भक्ति-र्जिने भक्ति-र्दिने-दिने ।
सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु, सदा मेऽस्तु भवे-भवे ॥१०॥
जिन-धर्म-विनिर्मुक्तो, मा भूवं चक्रवर्त्यपि ।
स्याच्चेटोऽपि दरिद्रोऽपि, जिनधर्मानुवासितः ॥११॥
जन्म-जन्म-कृतं पापं, जन्म-कोटिभि-रर्जितम् ।
जन्म-मृत्यु-जरा-रोगो, हन्यते जिनदर्शनात् ॥१२॥

अद्याभवत् सफलता नयन-द्वयस्य,
देव ! त्वदीय चरणाम्बुज-वीक्षणेन ।
अद्य त्रिलोक-तिलक ! प्रतिभासते मे,
संसार-वारिधिरयं चुलुक-प्रमाणः ॥१३॥

(अथवा निम्नलिखित अर्हद्-भक्ति बोलते हुए दर्शन करने चाहिए।)

अथ अर्हद्भक्तिः

(स्रग्धरा)

निःसङ्गोऽहं जिनानां,
सदनमनुपमं त्रिःपरीत्येत्य भक्त्या,
स्थित्वा गत्वा निषद्यो-
च्चरणपरिणतोऽन्तः शनैर्हस्त-युग्मम् ।
भाले संस्थाप्य बुद्ध्या,
मम दुरितहरं कीर्तये शक्रवन्द्यं,
निन्दादूरं सदाप्तं,
क्षयरहितममुं ज्ञानभानुं जिनेन्द्रम् ॥१॥

(वसन्ततिलका)

श्रीमत्-पवित्रमकलङ्क-मनन्त-कल्पं,
स्वायम्भुवं सकल-मङ्गलमादि-तीर्थम् ।

नित्योत्सवं मणिमयं निलयं जिनानाम्,
त्रैलोक्य-भूषणमहं शरणं प्रपद्ये ॥२॥

(अनुष्टुप्)

श्रीमत्-परम-गम्भीर-स्याद्वादामोघ-लाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य, शासनं जिनशासनम् ॥३॥

श्रीमुखालोकनादेव, श्रीमुखालोकनं भवेत् ।
आलोकनविहीनस्य, तत् सुखावाप्तयः कुतः ॥४॥

(वसन्ततिलका)

अद्याभवत् सफलता नयन-द्वयस्य,
देव ! त्वदीय चरणाम्बुज-वीक्षणेन ।
अद्य त्रिलोकतिलक ! प्रतिभासते मे,
संसार-वारिधिरयं चुलुक-प्रमाणः ॥५॥

(अनुष्टुप्)

अद्य मे क्षालितं गात्रं, नेत्रे च विमलीकृते ।
स्नातोऽहं धर्म-तीर्थेषु, जिनेन्द्र ! तव दर्शनात् ॥६॥

(उपेन्द्रवज्रा)

नमो नमः सत्त्व-हितङ्कराय,
वीराय भव्याम्बुज-भास्कराय ।
अनन्त-लोकाय सुरार्चिताय,
देवाधिदेवाय नमो जिनाय ॥७॥

नमो जिनाय त्रिदशार्चिताय,
विनष्ट-दोषाय गुणार्णवाय ।
विमुक्ति-मार्ग-प्रतिबोधनाय,
देवाधिदेवाय नमो जिनाय ॥८॥

(वसन्ततिलका)

देवाधिदेव ! परमेश्वर ! वीतराग !,
' सर्वज्ञ ! तीर्थंकर ! सिद्ध ! महानुभाव ! ।
त्रैलोक्यनाथ ! जिनपुङ्गव ! वर्धमान !
स्वामिन् ! गतोऽस्मि शरणं चरण-द्वयं ते ॥९॥

(आर्या)

जित - मद - हर्ष - द्वेषा,
जित-मोह-परीषहाः जित-कषायाः ।
जित - जन्म - मरण - रोगा,
जित - मात्सर्या जयन्तु जिनाः ॥१०॥

जयतु जिन वर्धमान-
स्त्रिभुवन-हित-धर्म-चक्र-नीरज-बन्धुः ।
त्रिदशपति - मुकुट - भासुर,
चूडामणि-रश्मि-रञ्जितारुण-चरणः ॥११॥

(हरिणी)

जय जय जय, त्रैलोक्य-काण्ड-शोभि-शिखामणे,
नुद नुद नुद, स्वान्त-ध्वान्तं जगत्-कमलार्क नः ।
नय नय नय, स्वामिन् ! शान्ति नितान्त-मनन्तिमां,
नहि नहि नहि, त्राता ! लोकैक-मित्र-भवत्-परः ॥१२॥

(वसन्ततिलका)

चित्ते मुखे शिरसि पाणि-पयोज-युग्मे,
भक्ति स्तुतिं विनतिमञ्जलिमञ्जसैव ।
चेक्रीयते चरिकरीति चरीकरीति,
यश्चर्करीति तव देव ! स एव धन्यः ॥१३॥

(मन्दाक्रान्ता)

जन्मोन्मार्ज्यं, भजतु भवतः, पाद-पद्मं न लभ्यम्,
तच्चेत्-स्वैरं, चरतु न च दु-र्देवतां सेवतां सः ।
अश्नात्यन्नं, यदिह सुलभं, दुर्लभं चेन्मुधास्ते,
क्षुद्-व्यावृत्यै, कवलयति कः, कालकूटं बुभुक्षुः ॥१४॥

(शार्दूलविक्रीडितम्)

रूपं ते निरुपाधि-सुन्दरमिदं, पश्यन् सहस्रेक्षणः,
प्रेक्षा-कौतुक-कारिकोऽत्र भगवन् ! नोपैत्यवस्थान्तरम् ।
वाणीं गद्गदयन् वपुः पुलकयन्, नेत्र-द्वयं श्रावयन्,
मूर्द्धानं नमयन् करौ मुकुलयंश्चेतोऽपि निर्वापयन् ।१५।

त्रस्तारातिरिति त्रिकालविदिति, त्राता त्रिलोक्या इति,
श्रेयः सूति-रिति श्रियां निधिरिति, श्रेष्ठः सुराणामिति ।
प्राप्तोऽहं शरणं शरण्य-मगतिस्त्वां तत्-त्यजोपेक्षणं,
रक्ष क्षेमपदं प्रसीद जिन ! किं, विज्ञापितै-र्गोपितैः ॥१६॥

(उपजाति)

त्रिलोक-राजेन्द्र-किरीट-कोटि-
प्रभाभिरालीढ-पदारविन्दम् ।
निर्मूल-मुन्मूलित-कर्मवृक्षं,
जिनेन्द्रचन्द्रं प्रणमामि भक्त्या ॥१७॥

इस प्रकार स्तोत्रपाठ करते हुए श्री जिनेन्द्रदेव के दर्शन करें, पश्चात् भगवान के समक्ष खड़े रह कर, दोनों पैरों को समान कर, चार अंगुल का अन्तर रख कर तथा दोनों हाथों को मुकुलित कर **कृत्वेर्यापथ संशुद्धि** इस आगम-वचन के अनुसार निम्नलिखित ऐर्यापथिकदोष-विशुद्धिपाठ पढ़ें—

अथ ईर्यापथविशुद्धिः

पडिक्कमामि भंते ! इरियावहियाए, विराहणाए, अणागुत्ते, अइगमणे, णिग्गमणे, ठाणे, गमणे, चंकमणे, पाणुग्गमणे, बीयुग्गमणे, हरियुग्गमणे, उच्चार-पस्सवण-खेल-सिंहाणय-वियडि-पइट्ठावणियाए, जे जीवा ए इंदिया वा, बे इंदिया वा, ते इंदिया वा, चउ इंदिया वा, पंचिंदिया वा, णोल्लिदा वा, पेल्लिदा वा, संघट्टिदा वा, संघादिदा वा, उद्दाविदा वा, परिदाविदा वा, किरिंच्छिदा वा, लेस्सिदा वा, छिंदिदा वा, भिंदिदा वा, ठाणदो वा, ठाण-चंकमणदो वा, तस्स उत्तरगुणं, तस्स पायच्छित्त-करणं, तस्स विसोहि-करणं, जाव अरहंताणं, भयवंताणं, णमोक्कारं, पज्जुवासं करेमि, तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

(यहाँ २७ श्वासोच्छ्वासों में ९ जाप्य करे ।)

ईर्यापथआलोचना

ईर्यापथे प्रचलताद्य मया प्रमादा-
देकेन्द्रिय-प्रमुख-जीव-निकायबाधा ।
निर्वर्तिता यदि भवेदयुगान्तरेक्षा,
मिथ्या तदस्तु दुरितं गुरुभक्तितो मे ॥१॥

इच्छामि भंते ! इरियावहियस्स आलोचेउं, पुव्वुत्तर-दक्खिण-पच्छिम-चउदिस-विदिसासु, विहरमाणेण जुगंतर-दिट्ठिणा, भव्वेण दट्ठव्वा । पमाददोसेण, डव-डव-चरियाए, पाण-भूद-जीव-सत्ताणं, उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

अभिषेक-वन्दनाक्रिया

दर्शनक्रिया की समाप्ति के बाद **"सिद्धभक्त्यादिशान्त्यन्ता पूजाभिषवमंगले"** अथवा **"अहिसेयवंदणा सिद्धचेदि पंचगुरुसंति-भत्तीहिं"** अथवा **"सा नन्दीश्वरपदकृतचैत्या त्वभिषेकवन्दनास्ति तथा"** (अन० धर्मा० ९/६४) इत्यादि आगम-वचनानुसार निम्नलिखित भक्तियों द्वारा भगवान जिनेन्द्र की अभिषेकक्रिया देखनी चाहिए।

विज्ञापनम्

अथ पौर्वाह्णिक-अभिषेक-वन्दना-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्मक्षयार्थं भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीसिद्धभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम्।

(यहाँ ९ बार णमोकार मन्त्र का जाप करें।)

[नोट :—अभिषेकवन्दनाक्रिया में दण्डक बोलना चाहिए या नहीं? इसका स्पष्ट उल्लेख आगम में कहीं मेरे देखने में नहीं आया अतः गुरुजन विचार कर दण्डकपूर्वक अथवा बिना दण्डक बोले ही कायोत्सर्ग करके नीचे लिखी सिद्धभक्ति पढ़ें।]

श्रीसिद्धभक्तिः

सिद्धानुद्धूत-कर्मप्रकृति-
समुदयान् साधितात्म-स्वभावान्,
वन्दे सिद्धि-प्रसिद्ध्यै
तदनुपमगुण-प्रग्रहाकृष्टि-तुष्टः।
सिद्धिः स्वात्मोपलब्धिः
प्रगुण-गुणगणोच्छादि-दोषापहाराद्,

योग्योपादान - युक्त्या,

दृषद इह यथा हेमभावोपलब्धिः ॥१॥

नाभावः सिद्धिरिष्टा,

न निज-गुणहतिस्तत्-तपोभिर्न युक्तेः,

अस्त्यात्मानादि - बद्धः,

स्वकृतजफलभुक् तत्-क्षयात् मोक्षभागी।

ज्ञाता द्रष्टा स्वदेह-

प्रमितिरुपसमाहार-विस्तारधर्मा,

ध्रौव्योत्पत्ति - व्ययात्मा,

स्व-गुण-युत-इतो नान्यथा साध्यसिद्धिः ॥२॥

स त्वन्तर्बाह्य - हेतु-

प्रभव-विमल-सद्दर्शन-ज्ञान-चर्या-

सम्पद्धेति - प्रघात-

क्षत-दुरिततया व्यञ्जिताचिन्त्य-सारैः।

कैवल्यज्ञान - दृष्टि-

प्रवर-सुख-महावीर्य - सम्यक्त्व-लब्धि-

ज्योति - र्वातायनादि-

स्थिर-परम - गुणैरद्भुतै - र्भासमानः ॥३॥

जानन् - पश्यन् - समस्तं,

सम - मनुपरतं सम्प्रतृप्यन् - वितन्वन्,

धुन्वन् ध्वान्तं नितान्तं,

निचित-मनुसभं प्रीणयन्-नीशभावम्।

कुर्वन् सर्वप्रजाना-

मपरमभिभवन् ज्योतिरात्मान-मात्मा,

आत्मन्येवात्मनासौ,
क्षणमुपजनयन् सत्स्वयम्भूः प्रवृत्तः ॥४॥

छिन्दन् शेषानशेषान्,
निगलबल-कलींस्-तैरनन्त-स्वभावैः,
सूक्ष्मत्वाग्र्यावगाहागुरु-
लघुकगुणैः क्षायिकैः शोभमानः ।
अन्यैश्चान्य - व्यपोह-
प्रवणविषय-सम्प्राप्ति-लब्धि-प्रभावै-
रूर्ध्वव्रज्या - स्वभावात्
समयमुपगतो धाम्नि सन्तिष्ठतेऽग्र्ये ॥५॥

अन्याकाराप्ति - हेतु-
र्न च भवति परो येन तेनाल्पहीनः,
प्रागात्मोपात्त - देह-
प्रतिकृतिरुचिराकार एव ह्यमूर्तः ।
क्षुत्-तृष्णा-श्वास-कास-
ज्वर-मरण-जराऽनिष्ट-योग-प्रमोह-
व्यापत्त्याद्युग्र-दुःख-
प्रभव-भवहतेः कोऽस्य सौख्यस्य माता ॥६॥

आत्मोपादान - सिद्धं
स्वय-मतिशयवद् वीतबाधं विशालं,
वृद्धि - ह्रास - व्यपेतं,
विषय-विरहितं निःप्रतिद्वन्द्व-भावम् ।
अन्य - द्रव्यानपेक्षं,
निरुपम-ममितं शाश्वतं सर्वकालं,

उत्कृष्टानन्त - सारं,
परम-सुख-मतस्तस्य सिद्धस्य जातम् ॥७॥

नार्थः क्षुत्-तृड्-विनाशाद्,
विविध-रस-युतै-रन्नपानैरशुच्या,
नास्पृष्टे - र्गन्धमाल्यै-
र्नहि-मृदुशयनै-र्ग्लानि-निद्राद्यभावात् ।
आतङ्कार्ते - रभावे,
तदुपशमन-सद्भेषजानर्थता-वद्,
दीपानर्थक्य-वद् वा,
व्यपगत - तिमिरे दृश्यमाने समस्ते ॥८॥

तादृक् सम्पत् - समेता,
विविध-नय-तपः संयम-ज्ञान-दृष्टि-
चर्या-सिद्धाः समन्तात्,
प्रवितत - यशसो विश्वदेवाधिदेवाः ।
भूता भव्या भवन्तः,
सकल-जगति ये स्तूयमाना विशिष्टैः,
तान् सर्वान् नौम्य-नन्तान्,
निजिगमिषु-ररं तत्स्वरूपं त्रिसन्ध्यम् ॥९॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! सिद्धभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं, अट्ठविह - कम्मविप्प - मुक्काणं, अट्ठगुण - संपण्णाणं उड्ढलोय-मत्थयम्मि पयट्ठियाणं, तव-सिद्धाणं, णय-सिद्धाणं, संजम-सिद्धाणं, चरित्त-सिद्धाणं अदीदाणागद-

वट्टमारण-कालत्तय-सिद्धाणं, सव्व-सिद्धाणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खश्रो, कम्मक्खश्रो, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

विज्ञापनम्

अथ पौर्वाह्णिक-अभिषेकवन्दना-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीचैत्यभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(यहाँ पर विधिवत् कायोत्सर्ग करके यह चैत्यभक्ति पढ़ें ।)

लघुचैत्यभक्तिः

वर्षेषु वर्षान्तर-पर्वतेषु, नन्दीश्वरे यानि च मन्दरेषु ।
यावन्ति चैत्यायतनानि लोके, सर्वाणि वन्दे जिनपुंगवानाम् ।

अवनितल-गतानां, कृत्रिमाकृत्रिमाणां,
वनभवन-गतानां, दिव्य-वैमानिकानाम् ।
इह मनुज-कृतानां, देव-राजार्चितानां,
जिनवर-निलयानां, भावतोऽहं स्मरामि ॥२॥

जम्बू - धातकि - पुष्करार्ध - वसुधा - क्षेत्रत्रये ये भवाः,
चन्द्राम्भोज-शिखण्डि-कण्ठ-कनक-प्रावृड्घनाभा जिनाः ।
सम्यग्ज्ञान - चरित्र - लक्षण - धराः, दग्धाष्ट - कर्मेन्धनाः,
भूतानागत-वर्तमानसमये, तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ॥३॥

श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ, रजतगिरि-वरे, शाल्मलौ जम्बुवृक्षे,
वक्षारे चैत्यवृक्षे, रतिकर-रुचके, कुण्डले मानुषाङ्के ।
इष्वाकारेऽञ्जनाद्रौ, दधिमुखशिखरे, व्यन्तरे स्वर्गलोके,
ज्योतिर्लोकेऽभिवन्दे, भुवन-महितले, यानि चैत्यालयानि ।

द्वौ कुन्देन्दु - तुषारहार - धवलौ, द्वाविन्द्रनील - प्रभौ,
द्वौ बन्धूक-समप्रभौ जिनवृषौ, द्वौ च प्रियङ्गु-प्रभौ ।
शेषाः षोडश जन्ममृत्युरहिताः, सन्तप्त - हेम - प्रभाः,
ते संज्ञान-दिवाकराः सुरनुताः, सिद्धिं प्रयच्छन्तु नः ॥५॥

इच्छामि भंते ! चेइयभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं अहलोय-तिरियलोय-उड्ढलोयम्मि किट्टिमाकिट्टिमाणि जाणि जिण-चेइयाणि ताणि सव्वाणि तीसु वि लोएसु भवणवासिय - वाणविंतर - जोइसिय-कप्पवासिय त्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गंधेण, दिव्वेण पुप्फेण, दिव्वेण धुव्वेण, दिव्वेण चुण्णेण, दिव्वेण वासेण, दिव्वेण ण्हाणेण णिच्चकालं अच्चंति, पुज्जंति, वंदंति, णमस्संति । अहं वि इह संतो तत्थ संताइं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

विज्ञापनम्

अथ पौर्वाह्णिक - अभिषेकवन्दना-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं, श्रीपञ्चमहागुरुभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(यहाँ विधिवत् कायोत्सर्ग करके पञ्चमहागुरुभक्ति पढ़ें—)

श्रीवीरनन्द्याचार्यकृता पञ्चमहागुरुभक्तिः

श्री - पार्वेन्दूदयस्यासी - दमरीचि - कुरोऽम्बरम् ।
यस्य स्याद्वादिनो विश्व-वेदिनः पातु नो जिनः ॥१॥

नष्ट - दुष्टाष्ट - कर्माणस्ते पुष्टाष्ट - गुणर्द्धयः ।
त्रिलोकी-मस्तकोत्तंसाः, सिद्धाः नः सन्तु सिद्धिदाः ॥२॥

निराकृत्यान्तरं ध्वान्तं, सूरिसूरः करोत्वरम् ।
सन्मान - साम्बुजानन्द - ममन्दं वाक्करै - र्वरैः ॥३॥

कुर्वन्नखर्व - दुर्वादि - मद - द्विरद - मर्दनम् ।
स्याद्वादाद्रावुपाध्याय - सिन्धुरारिर्विजृम्भिताम् ॥४॥

रत्नत्रयामृताम्बोधि - विधवः साधवः श्रियम् ।
दद्युरात्मर्द्धि - निर्धूत - दुरित - ध्वान्त - वृत्तयः ॥५॥

त्रिजगद् - गुरवः सर्वे - र्गुणै - र्गुरवः इत्यमी ।
गुरवः पञ्च नः पान्तु, पापापाय-निकायतः ॥६॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! पंचमहागुरु-भत्ति काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं । अट्ठमहापाडिहेर - संजुत्ताणं अरहंताणं, अट्ठगुण - संपण्णाणं उड्ढलोय - मत्थयम्मि पइट्ठियाणं सिद्धाणं, अट्ठपवयण-माउया-संजुत्ताणं आइरियाणं, आयारादि - सुद - णाणोवदेसयाणं, उवज्झायाणं, ति-रयण-गुण - पालण-रयाणं सव्वसाहूणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

अथ पौर्वाह्णिक - अभिषेकवन्दना-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीशान्तिभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(यहाँ विधिवत् कायोत्सर्ग करके निम्नलिखित शान्तिभक्ति पढ़ें—)

श्रीशान्तिभक्तिः

भव-दुःखानल-शान्ति-र्धर्मामृत-वर्ष-जनित-जनशान्तिः ।
शिवशर्मास्रव-शान्तिः, शान्तिकरः स्ताज्जिनः शान्तिः ।१।

अनन्तविज्ञान - मनन्तवीर्यता-
मनन्त - सौख्यत्व - मनन्तदर्शनम् ।
बिभर्ति योऽनन्तचतुष्टयं विभुः,
स नोऽस्तु शान्तिर्भवदुःख-शान्तये ॥२॥

हरीशपूज्योऽप्यहरीशपूज्यः,
सुरेशवन्द्योऽप्यसुरेशवन्द्यः, ।
अनङ्गरम्योऽपि शुभाङ्गरम्यः,
श्रीशान्तिनाथः शुभमातनोतु ॥३॥

भगवन् ! दुर्णयध्वान्तै - राकीर्णे पथि मे सति ।
संज्ञानदीपिका भूयात्, संसारावधि - वर्धिनी ॥४॥

जन्म - जीर्णाटवी - मध्ये, जनुषान्धस्य मे सती ।
सन्मार्गे भगवन् ! भक्ति-र्भवतान् मुक्तिदायिनी ॥५॥

स्वान्त - शान्ति ममैकान्ता - मनेकान्तैकनायकः ।
शान्तिनाथो जिनः कुर्यात्, संसृति-क्लेश-शान्तये ॥६॥

इच्छामि भंते ! संति-भत्ति - काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं पंचमहाकल्लाण - संपण्णाणं, अट्ठमहा-पाडिहेर-सहियाणं, चउतीसातिसय - विसेस - संजुत्ताणं, बत्तीस देविंद - मणिमउड - महियाणं, बलदेव - वासुदेव-चक्कहर - रिसि-मुणि-जइ - अणगारोवगूढाणं, थुइ - सय-सहस्स-णिलयाणं, उसहाइ-वीर-पच्छिम-मंगल-महापुरि-साणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि,

दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

अथ पौर्वाह्णिक - अभिषेकवन्दना-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्मक्षयार्थ, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं सिद्धभक्ति, चैत्यभक्ति, पञ्चगुरुभक्ति, शान्ति-भक्ति च कृत्वा तद्धीनाधिक-दोष-विशुद्धयर्थं आत्म-पवित्रीकरणार्थं, समाधिभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(यहाँ विधिवत् कायोत्सर्ग करके समाधिभक्ति पढ़ें–)

श्रीसमाधिभक्तिः

व्युत्सृज्य दोषान् निःशेषान्, सद्ध्याने स्यात् तनुसृतौ ।
सहेताप्युपसर्गोर्मीन्, कर्मैवं भिद्यते तराम् ॥१॥
ध्यानाशुशुक्षणाविद्धे, मन ऋत्विक् समाहितः ।
स्वकर्म - समिधो भाव - सर्पिषा जुहुमोऽधुना ॥२॥
अहमेवाहमित्यात्म - ज्ञानादन्यत्र चेतनाम् ।
इदमस्मि करोमीद-मिदं भुञ्ज इति क्षिपे ॥३॥
अहमेवाहमित्यन्त - र्जल्प - सम्पृक्त - कल्पनाम् ।
त्यक्त्वाऽवाग्गोचरं ज्योतिः, स्वयं पश्यामि शाश्वतम् ।४।
अमुह्यन्त-मरज्यन्त - मद्विषन्तं च यः स्वयम् ।
शुद्धे निधत्ते स्वे शुद्ध - मुपयोगं च शुद्धयति ॥५॥
बोधि-समाधि-विशुद्ध-स्व-चिदुपलब्ध्युच्छलत्प्रमोद-भराः।
ब्रह्म विदन्ति परं ये ते, सद्गुरवो मम प्रसीदन्तु ॥६॥

इच्छामि भंते ! समाहिभत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं रयणत्तय-सरूव - परमप्पज्झाण - लक्खणं समाहिभत्तीए णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि,

णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

।। इति अभिषेकक्रियाविधिः समाप्ता ।।

शौचक्रिया

अभिषेकक्रिया के बाद, ईर्यासमिति पूर्वक शौचक्रिया को जाना चाहिए और जो प्रदेश वनाग्नि से जले हुए हों, जो कई बार विदारण किये जा चुके हों, जो श्मशान की अग्नि से जले हों, जो पथिकाग्नि से जले हों, जो प्रदेश ठोस हों, छिद्र या दरारों से रहित हों, जो द्वीन्द्रियादि जीवों से रहित हों, कूड़ा-कचरादि अपवित्रता से रहित हों, निर्जन अर्थात् स्त्री-पुरुषों आदि के आवागमन से रहित हों, आर्द्र न हों, पशुओं एवं मनुष्यों आदि के बैठने एवं रहने के (स्थान) न हों, हरे तृण, फल, पुष्प आदि से रहित हों, प्रकाशयुक्त हों, स्वामी के द्वारा निषिद्ध न हों तथा जहाँ स्त्री, बालक एवं नपुंसकों आदि का आवागमन न हो, वहाँ मल-मूत्र आदि का विसर्जन करना चाहिए । मल-मूत्र का विसर्जन करने के पूर्व प्रासुक प्रदेश को सर्वप्रथम नेत्रों से भली प्रकार देखना चाहिए, पश्चात् पीछी से मार्जन कर पुनः देखकर बैठना चाहिए । बैठने के पूर्व निःसही निःसही निःसही शब्दों का और शौचक्रिया से उठने के बाद असही असही असही शब्दों का उच्चारण करना चाहिए ।

शौच के बाद अपने अपवित्र अंगों को एवं हाथों को बानी (राख) या ईंट के चूर्ण से पवित्र करना चाहिए । इस प्रकार शुद्धि कर लेने के बाद ["प्रस्नावे च तथोच्चारे उच्छ्वासा पञ्चविंशति" तथा "मूत्रोच्चाराध्वभक्तार्हत्, साधुशय्याभिवन्दने । पञ्चाग्रविंशतिः ·········· ।" इन आगमोक्त वचनों के अनुसार] २५ श्वासोच्छ्वासों में कायोत्सर्ग करना चाहिए, किन्तु संघ में

गुरुजनों से यह सुना है कि लघुशंका (मूत्र) क्रिया के बाद तो मात्र कायोत्सर्ग करना किन्तु शौचक्रिया के बाद नीचे लिखी ईर्यापथभक्ति पढ़कर कायोत्सर्ग करना। यथा—

अथ ईर्यापथशुद्धिः

पडिक्कमामि भंते ! इरियावहियाए, विराहणाए, अणागुत्ते, अइगमणे, णिग्गमणे, ठाणे, गमणे, चंकमणे, पाणुग्गमणे, बीयुग्गमणे, हरियुग्गमणे, उच्चार-पस्सवण-खेल - सिंहाणय - वियडि - पइट्ठावणियाए, जे जीवा ए इंदिया वा, वे इंदिया वा, ते इंदिया वा, चउ इंदिया वा, पंचिंदिया वा, णोल्लिदा वा, पेल्लिदा वा, संघट्टिदा वा, संघादिदा वा, उद्दाविदा वा, परिदाविदा वा, किरिंच्छिदा वा, लेस्सिदा वा, छिंदिदा वा, भिंदिदा वा, ठाणदो वा, ठाण-चंकमणदो वा, तस्स उत्तरगुणं, तस्स पायच्छित्त-करणं, तस्स विसोहिकरणं, जाव अरहंताणं, भयवंताणं, णमोक्कारं पज्जुवासं करेमि, तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि।

यहाँ २५ श्वासोच्छ्वासों में कायोत्सर्ग करना चाहिए।

इस प्रकार शौचक्रिया से निवृत्त होकर और भलो प्रकार कमण्डलु को साफकर उसे सुखा देना चाहिए, पश्चात् निम्नलिखित विधि के अनुसार पौर्वाह्लिक स्वाध्याय की विधि करनी चाहिये।

पौर्वाह्णिक स्वाध्याय विधि

पृष्ठ ६ पर जो स्वाध्याय विधि लिखी गई है, उसी विधि के अनुसार यहाँ भी स्वाध्याय का प्रतिष्ठापन (प्रारम्भ) और निष्ठापन (समाप्ति) करना चाहिए। विशेष इतना है कि विज्ञापन में "अपररात्रि" स्वाध्याय के स्थान पर "पौर्वाह्लिक स्वाध्याय" बोलना चाहिए।

आहारचर्या

चारित्र सम्बन्धी अन्य ग्रन्थों में तथा कुन्दकुन्दाचार्य विरचित मूलाचार के पृष्ठ १७४ पर आचार्य लिखते हैं कि साधु मध्याह्न-काल में जब दो घटिका अवशेष रहे तब स्वाध्याय की समाप्ति कर अपनी वसतिका से दूर जाकर शौचविधि करें। तदनन्तर वहाँ से लौटकर हाथ-पैरों की शुद्धि कर पीछी-कमण्डलु लेकर जिनमन्दिर जाकर मध्याह्न देववन्दना (सामायिक) करें, तदनन्तर आहार के लिए निकलें। अर्थात् आगम में दोपहर की सामायिक के बाद भी आहार करने का विधान प्राप्त होता है, किन्तु **'उदयत्थमणे काले णालीतियवज्जियम्हि मज्झम्हि**............ (३७ अ. १ मूला.) अर्थात् "सूर्योदय की तीन घटिका और सूर्यास्त की तीन घटिका छोड़कर (मध्याह्न सामायिक का काल छोड़कर) मध्य के काल में साधुओं का आहार-ग्रहण करना एकभक्त है" इस नियम के अनुसार वर्तमान में साधुगण प्रातः ९ बजे से ११½ बजे के अन्तर्गत ही प्रायः आहारचर्या करते हैं। इसी बात को ध्यान में रखकर प्रातःकालीन स्वाध्याय-समाप्ति के बाद और मध्याह्न देववन्दना के पूर्व आहारचर्या की विधि लिखी जा रही है।

दिगम्बर साधु बलवृद्धि, आयुवृद्धि, मांसवृद्धि, कांतिवृद्धि, तथा यहाँ स्वादिष्ट आहार मिलता है, इस इच्छा से अर्थात् गृद्धता-वृद्धि के लिए आहार ग्रहण नहीं करते अपितु क्षुधावेदना के परिहार, स्व-पर वैयावृत्त्य, षट् आवश्यकों की प्रतिपालना, प्राणी एवं इन्द्रिय-संयम के रक्षण, उत्तम क्षमादि दशधर्मों की प्रतिपालना और स्वाध्याय, संयम तथा ध्यान की सिद्धि के लिए आहार ग्रहण करते हैं। वह भी यदि नवकोटियों से शुद्ध हो, १६ उद्गम, १६ उत्पादन, १० एषणादोषों एवं संयोजना, अप्रमाण (आगम में भोजन का जो प्रमाण बतलाया है अर्थात् पेट के दो भाग भोजन से, एक भाग जल, दूध, छाछ आदि पेय पदार्थों से भरना तथा एक

भाग खाली रखना, इस प्रमाण का उल्लंघन करना), अंगार (लम्पटतापूर्ण भोजन) और सधूम (मन में भोज्य पदार्थों की निन्दा करते हुए आहार करना) दोषों से रहित हो, तो ग्रहण करते हैं, अन्यथा नहीं।

आहारविधिः

आहार ग्रहण करने के उपर्युक्त छह कारणों में से किन्हीं एक-दो कारणों के उपस्थित हो जाने पर मुनिजन आहार को उठते है। साधुओं को सर्वप्रथम अपने कमण्डलुके प्रासुक और शुद्धजल से हाथ (कुहनी पर्यन्त), पैर (घुटनों पर्यन्त) आदि धोकर शुद्धि करनो चाहिए, पश्चात् श्रीमन्दिरजी में जिनेन्द्र भगवान के दर्शन कर पृष्ठ ६४ पर लिखी हुई विज्ञापन सहित लघु आचार्यभक्ति बोल कर गुरु-वन्दना करनी चाहिए। पश्चात् पूर्व दिन ग्रहण किये हुए उपवास अथवा प्रत्याख्यान का निष्ठापन (समापन) करने के लिए निम्नलिखित लघु सिद्धभक्ति एवं लघु योगिभक्ति बोलनी चाहिए। यथा—

विज्ञापनम्

अथ चतुर्विधाहार - प्रत्याख्यान - निष्ठापनक्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीसिद्धभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(कायोत्सर्ग करें।)

लघुसिद्धभक्तिः

सम्मत्त-णाण-दंसण-वीरिय-सुहुमं तहेव अवगहणं ।
अगुरु-लहु-मव्वावाहं, अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं ॥१॥
तव-सिद्धे णय-सिद्धे, संजम-सिद्धे चरित्त-सिद्धे य ।
णाणम्मि दंसणम्मि य, सिद्धे सिरसा णमस्सामि ॥२॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! सिद्धभत्ति काउस्सग्गो कओो, तस्सालोचेउं सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं, अट्ठविह - कम्मविप्प - मुक्काणं, अट्ठगुण - संपण्णाणं, उड्ढलोय-मत्थयम्मि पयट्ठियाणं, तवसिद्धाणं, णय-सिद्धाणं, संजमसिद्धाणं, चरित्तसिद्धाणं, अदीदाणागद-वट्टमाण - कालत्तय-सिद्धाणं, सव्वसिद्धाणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओो, कम्मक्खओो, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

विज्ञापनम्

अथ चतुर्विधाहार - प्रत्याख्यान - निष्ठापनक्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीयोगिभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(कायोत्सर्ग करें ।)

लघुयोगिभक्तिः

प्रावृट्काले सविद्युत्-
 प्रपतित-सलिले वृक्ष-मूलाधिवासाः,
हेमन्ते रात्रि - मध्ये,
 प्रति-विगत-भयाः काष्ठवत्-त्यक्त-देहाः ।
ग्रीष्मे सूर्यांशु - तप्ताः,
 गिरि-शिखरगताः स्थान-कूटान्तरस्थाः,
ते मे धर्मं प्रदद्यु-र्मुनि-गण-
 वृषभाः मोक्षनिःश्रेणि - भूताः ॥१॥

गिम्हे गिरि-सिहरत्था, वरिसायाले रुक्ख-मूल-रयणीसु ।
सिसिरे बाहिर-सयणा, ते साहू वंदिमो णिच्चं ॥२॥

गिरि-कन्दर - दुर्गेषु, ये वसन्ति दिगम्बराः ।
पाणिपात्र - पुटाहाराः, ते यान्ति परमां गतिम् ॥३॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! योगिभत्ति - काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं अड्ढाइज्ज-दीव-दो - समुद्देसु, पण्णरस-कम्मभूमिसु, आदावण-रुक्ख-मूल-अब्भोवास-ठाण-मोण-वीरासणेक्कपास - कुक्कुडासण-चउ-छ-पक्ख - खवणादि-जोग-जुत्ताणं, सव्वसाहूणं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं* ।

भगवान जिनेन्द्र के समक्ष उपर्युक्त दोनों भक्तियाँ बोल कर तथा मुद्रा (बाएँ हाथ में पीछी-कमण्डलु और दाहिना हाथ कन्धे पर) धारण कर आहार के लिए निकलें तथा व्रतपरिसंख्यान मिल जाने पर योग्य श्रावक के गृह पडगाहनविधि पूर्ण होने पर गृह में प्रवेश करें और नवधाभक्ति पूर्ण हो जाने के बाद एवं आहार-ग्रहण के पूर्व हस्तप्रक्षालन करें, पश्चात् **अथ चतुर्विधाहार-प्रत्याख्यान - निष्ठापन** ...... इत्यादि विज्ञापन कर कायोत्सर्ग करें, तदनन्तर पृष्ठ ८६ पर लिखी हुई लघु सिद्धभक्ति पढ़कर बिना किसी के सहारे, नाभिसे ऊपर दोनों हाथों को रखते हुए खड़े होवें, पश्चात् आहार ग्रहण करें । आहार हो चुकने के बाद बैठकर मुख एवं हाथ-पैर आदि की शुद्धि करें । पश्चात् श्रावक के हाथ से पिच्छिका ग्रहणकर आहारत्याग हेतु निम्नलिखित लघु सिद्धभक्ति बोलें । यथा—

*उपर्युक्त ये दोनो लघुभक्तियाँ बोलने का स्पष्ट विधान आगम में दृष्टिगत नहीं हुआ, गुरुपरम्परा के आधार पर लिखा है ।

अथ चतुर्विधाहार-प्रत्याख्यान-प्रतिष्ठापनक्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीसिद्धभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

यहाँ पर कायोत्सर्ग करें, पश्चात् पृष्ठ ८६ पर लिखी हुई लघु सिद्धभक्ति पढ़कर चारों प्रकार के आहार-जलका त्याग कर कमण्डलु लेकर वापिस आवें। मन्दिरजी में आकर भगवान अथवा गुरु के समक्ष '**अथ चतुर्विधाहार-प्रत्याख्यान-प्रतिष्ठापनक्रियायां** ...' इत्यादि विज्ञापन बोलकर कायोत्सर्ग करें, पश्चात् लघु सिद्धभक्ति बोलें। पश्चात् पुन. विज्ञापन पूर्वक कायोत्सर्ग कर पूर्व के सदृश लघु योगिभक्ति बोलकर दूसरे दिन ६-३० या १० बजे पर्यन्त के लिए चारों प्रकार के आहार-जलका त्याग करें। विशेष इतना है कि यह विधि आचार्य परमेष्ठी के समक्ष न रहने पर ही करनी चाहिए। यदि आचार्यश्री समक्ष में हों तो आहार से आकर सर्व प्रथम—**अथ आचार्यवन्दनाक्रियायां** ... ...इत्यादि विज्ञापन एवं कायोत्सर्ग कर पृष्ठ ६४-६५ पर लिखी हुई '**श्रुतजलधिपारगेभ्यः** ...' लघु आचार्यभक्ति बोलकर उनकी वन्दना करनी चाहिए। पश्चात् लघु सिद्धभक्ति और लघु योगिभक्ति बोलकर आहार-जलका त्याग अर्थात् प्रत्याख्यानादिका प्रतिष्ठापन करना चाहिए।

गोचारप्रतिक्रमणम्

पडिक्कमामि भंते ! अणेसणाए, पाणभोयणाए, पणयभोयणाए, बीयभोयणाए, हरियभोयणाए, आहाकम्मेण वा, पच्छाकम्मेण वा, पुराकम्मेण वा, उद्दिट्ठयडेण वा, णिद्दिट्ठयडेण वा, दयसंसिट्ठयडेण वा, रससंसिट्ठयडेण वा, परिसादणियाए, पइट्ठावणियाए, उद्देसियाए, णिद्देसियाए, कीदयडे, मिस्से, जादे, ठविदे,

रइवे, अणसिट्ठे, बलिपाहुडवे, पाहुडवे, घट्टिदे, मुच्छिवे, अइमत्तभोयणाए, एत्थ मे जो कोइ गोयरिस्स अइचारो अणाचारो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

उपवास-ग्रहण-(त्याग) विधि

आहार के बाद यदि उपवास ग्रहण करने की इच्छा हो और आचार्यश्री समक्ष न हों तो '**अथ उपवासप्रतिष्ठापन-क्रियायां** ....।' इत्यादि विज्ञापन बोलकर एवं कायोत्सर्ग करके लघुसिद्धभक्ति बोलकर उपवास ग्रहण करें और इसी विधि से ग्रहण किये हुए उपवास का निष्ठापन (समापन) करें, किन्तु यदि आचार्यश्री समक्ष हों तो निम्नलिखित विधि से उपवास का ग्रहण और त्याग करें । यथा—

विज्ञापनम्

अथ उपवास-प्रतिष्ठापन-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीसिद्धभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(यहाँ कायोत्सर्ग करें ।)

सम्मत्त-णाण-दंसण-वीरिय-सुहुमं तहेव अवगहणं ।
अगुरु-लहु-मव्वावाहं, अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं ॥१॥
तव-सिद्धे णय-सिद्धे, संजम-सिद्धे चरित्त-सिद्धे य ।
णाणम्मि दंसणम्मि य, सिद्धे सिरसा णमस्सामि ॥२॥

इच्छामि भंते ! सिद्धभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं, अट्ठविह-कम्मविप्प-मुक्काणं, अट्ठगुण-संपण्णाणं उड्ढलोय-मत्थयम्मि पयट्ठियाणं, तव-सिद्धाणं, णय-सिद्धाणं, संजम-सिद्धाणं, चरित्त-सिद्धाणं, अदीदाणागद-वट्टमाण-कालत्तय-सिद्धाणं, सव्व-सिद्धाणं, णिच्चकालं

अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

अथ उपवास-प्रतिष्ठापन-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीयोगिभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(यहाँ कायोत्सर्ग करें ।)

प्रावृट्काले सविद्युत्-
प्रपतित-सलिले वृक्ष-मूलाधिवासाः,
हेमन्ते रात्रि-मध्ये,
प्रति-विगतभयाः काष्ठवत्-त्यक्त-देहाः ।
ग्रीष्मे सूर्यांशु-तप्ताः,
गिरि-शिखरगताः स्थान-कूटान्तरस्थाः,
ते मे धर्मं प्रदद्यु-र्मुनि-गण-
वृषभाः मोक्षनिःश्रेणि-भूताः ॥१॥

गिम्हे गिरि-सिहरत्था, वरिसायाले रुक्ख-मूल-रयणीसु ।
सिसिरे बाहिर-सयणा, ते साहू वंदिमो णिच्चं ॥२॥

गिरि-कन्दर-दुर्गेषु, ये वसन्ति दिगम्बराः ।
पाणिपात्र-पुटाहाराः, ते यान्ति परमां गतिम् ॥३॥

इच्छामि भंते ! योगिभत्तिकाउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णरस-कम्मभूमिसु, आदावण-रुक्ख-मूल-अब्भोवास-ठाण-मोण-वीरासणेक्कपास-कुक्कुडासण-चउ-छ-पक्ख-खवणादि-जोग-जुत्ताणं, सव्वसाहूणं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

आचार्य परमेष्ठी के समीप उपवास समाप्त करते समय भी ये ही दोनों भक्तियाँ बोलनी चाहिए। विशेष इतना है कि—**'अथ उपवास-प्रतिष्ठापन'** के स्थान पर **'अथ उपवास-निष्ठापन** ....' बोला जावेगा।

॥ इति आहार एवं उपवास-ग्रहण-त्यागविधिः समाप्ता ॥

मध्याह्न देव-वन्दना (सामायिक) विधिः

आहारक्रिया के बाद मध्याह्न के एक घड़ी पूर्व से (१२ बजने में २४ मिनट अवशेष रहें तब से) मध्याह्न के एक घड़ी पश्चात् (१२ बज कर २४ मिनट) तक अर्थात् दो घड़ी–४८ मिनट (यह सामायिक का जघन्य काल है) तक पृष्ठ ४५ से ६१ तक लिखी हुई सामायिक विधि के अनुसार ही सामायिक करें। अन्तर केवल इतना है कि विज्ञापन बोलते समय पौर्वाह्णिक देववन्दना के स्थान पर माध्याह्निक देववन्दना बोलें।

अपराह्ण–स्वाध्यायविधिः

आपराह्णिक सामायिक के बाद मध्याह्न से दो घड़ी अधिक समय व्यतीत हो जाने के बाद पृष्ठ ६ पर लिखी हुई विधि के अनुसार स्वाध्याय प्रारम्भ करना चाहिए और जब सूर्यास्त में दो घड़ी (४८ मिनट) काल अवशेष रहे तब पृष्ठ १४ पर लिखी विधि के अनुसार स्वाध्याय समाप्त कर देना चाहिए।

दैवसिक–प्रतिक्रमणविधिः

आपराह्णिक स्वाध्याय निष्ठापन (समाप्त) कर देने के बाद दिन भर में लगे हुए दोषों (अतिचारों) का संशोधन करने के लिए पृ० १५ से पृ० ४० तक लिखी विधि के अनुसार प्रतिक्रमण करें। विशेष इतना है कि "रात्रिकप्रतिक्रमणम्" के स्थान पर "दैवसिकप्रतिक्रमणम्" पद बोलना चाहिए।

रात्रियोग–प्रतिष्ठापनविधिः

दैवसिकप्रतिक्रमणक्रिया की समाप्ति के बाद पृ० ४१ से ४५ पर्यन्त लिखी विधि के अनुसार रात्रियोग प्रतिष्ठापन (रात्रि भर

इसी वसतिका में रहूंगा) करना चाहिए। विशेष इतना है कि पूर्व में रात्रियोग-निष्ठापन पद का प्रयोग है किन्तु यहाँ रात्रियोग-प्रतिष्ठापन पद बोलना चाहिए ।

आपराह्णिक-आचार्यवन्दनाविधिः

रात्रियोगप्रतिष्ठापन कर चुकने के बाद पृ० ६२ से ६५ पर्यन्त लिखी हुई सम्पूर्ण विधि के अनुसार आचार्य परमेष्ठी की वन्दना करनी चाहिए, किन्तु पौर्वाह्णिक के स्थान पर आपराह्णिक पद बोलना चाहिए ।

आपराह्णिक-देववन्दनाविधिः

आचार्यवन्दना कर चुकने के उपरान्त पृ० ४५ से पृ० ६१ पर्यन्त लिखी हुई देववन्दना विधि को ही पूर्णरूपेण यहाँ करना चाहिए, अन्तर केवल इतना है कि पौर्वाह्णिक के स्थान पर आपराह्णिक पद बोलना चाहिए ।

पूर्वरात्रिस्वाध्यायविधिः

देववन्दना विधि कर चुकने के पश्चात् प्रदोष-संध्या समय के अनन्तर दो घड़ी काल व्यतीत हो जाने पर पृ० ६ से १४ पर्यन्त लिखी हुई विधि के अनुसार स्वाध्याय प्रारम्भ कर देना चाहिए और जब अर्धरात्रि में दो घड़ी अवशेष रहें तब पृ० १४ पर लिखी विधि के अनुसार स्वाध्याय समाप्त कर देना चाहिए। अन्तर केवल इतना है कि "अपररात्रि" के स्थान पर "पूर्वरात्रि" पद का प्रयोग करना चाहिए ।

अर्धरात्रि के दो घड़ी पूर्व से लेकर अर्धरात्रि के दो घड़ी पश्चात् तक अर्थात् १ घंटा ३६ मिनट का काल अस्वाध्याय का काल है। इस काल में भी ध्यान, तत्त्वचिन्तन, पंच परावर्तनों का चिन्तन एवं संसार के भयावह दुःख-चिन्तन आदि के द्वारा निद्रा पर विजय प्राप्त करनी चाहिए, किन्तु यदि निद्रा पर विजय प्राप्त न कर सकें तो अल्प निद्रा द्वारा श्रम दूर कर लेना चाहिए।

इस प्रकार मुनि, आर्यिकाओं को अहोरात्रि (२४ घंटों) में समयानुसार उपर्युक्त २८ कृतिकर्म करने चाहिये। कुन्दकुन्दाचार्य विरचित 'मूलाचार' में कृतिकर्म का लक्षण करते हुए आचार्य लिखते हैं कि–

दोणदं तु जधाजादं, बारसावत्तमेव य।
चदुस्सिरं तिसुद्धं च, किदियम्मं पउंजदे ॥१२८॥ अ. ७

अर्थात्—जहाँ पंचनमस्कार पाठ के प्रारम्भ में एक अवनति अर्थात् भूमिस्पर्श पूर्वक नमस्कार, मन, वचन, काय की शुभ प्रवृत्ति रूप तीन आवर्त्त और एक शिरोनति, सामायिक दण्डक के अन्त में तीन आवर्त्त, एक शिरोनति, चतुर्विंशतिस्तव के पूर्व एक अवनति, तीन आवर्त्त और एक शिरोनति तथा अन्त में भी तीन आवर्त्त और एक शिरोनति होती है, उसे **कृतिकर्म** कहते हैं। जो अहोरात्रि में नियमरूप से अट्ठाईस बार होना चाहिए क्योंकि–

पुरिमचरिमादु जह्मा, चलचित्ता चेव मोहलक्खा य।
तो सव्वपडिक्कमणं अंधलयघोडय दिट्ठंतो ॥१५८॥ अ. ७

जैसे राजा के अंधे घोड़े को औषधिज्ञान से रहित वैद्य बालक ने नेत्ररोगहरण संबंधी सर्व औषधियों का प्रयोग करके स्वस्थ कर लिया था उसी प्रकार महावीर तीर्थंकरके तीर्थगत जो साधु हैं वे चंचलचित्त, अदृढमन, मोह से आवृत्त और वक्र व जड़ स्वभावी हैं, अतः उन्हे प्रत्येक (२८) कायोत्सर्ग, दण्डक पूर्वक ही करना चाहिए, क्योंकि यदि एक दण्डक में मन स्थिर नहीं होगा तो दूसरे में, तीसरे में, चतुर्थ आदि में होगा। अर्थात् कोई-न-कोई दण्डक कर्मोपशमन में कारण अवश्य होगा, क्योंकि सर्व (२८) दण्डक कर्मक्षय करने में समर्थ हैं।

✕

अथ पाक्षिकादिप्रतिक्रमणम्

पाक्षिक, चातुर्मासिक एवं वार्षिक आदि प्रतिक्रमणों में सभी साधर्मी शिष्य, लघु सिद्ध, श्रुत एवं आचार्य भक्ति द्वारा आचार्यश्री की वन्दना करें—

नमोऽस्तु आचार्य-वन्दनायां प्रतिष्ठापन-सिद्धभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(९ जाप्य)

सम्मत्त-णाण-दंसण-वीरिय-सुहुमं तहेव अवगहणं ।
अगुरुलहु-मव्वावाहं, अट्ठ-गुणा होंति सिद्धाणं ।।१।।
तवसिद्धे णयसिद्धे, संजमसिद्धे चरित्तसिद्धे य ।
णाणम्मि दंसणम्मि य, सिद्धे सिरसा णमस्सामि ।।२।।

नमोऽस्तु आचार्यवन्दनायां प्रतिष्ठापन-श्रुतभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम्—

(९ जाप्य)

कोटीशतं द्वादश चैव कोटयो,
लक्षाण्यशीतिस् त्र्यधिकानि चैव ।
पञ्चाशदष्टौ च सहस्र-संख्या-
मेतच्छ्रुतं पञ्चपदं नमामि ।।१।।

अरहंत-भासियत्थं, गणहर-देवेहि गंथियं सम्मं ।
पणमामि भत्तिजुत्तो, सुदणाण-महोवहिं सिरसा ।।२।।

नमोऽस्तु आचार्य-वन्दनायां प्रतिष्ठापनाचार्यभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम्—

(९ जाप्य)

श्रुतजलधि-पारगेभ्यः, स्वपरमत-विभावना-पटुमतिभ्यः।
सुचरित-तपोनिधिभ्यो, नमो गुरुभ्यो गुणगुरुभ्यः ॥१॥

छत्तीस-गुण-समग्गे, पंचविहाचार-करण-संदरिसे।
सिस्साणुग्गह-कुसले, धम्माइरिए सया वंदे ॥२॥

गुरुभत्ति-संजमेण य, तरंति संसार-सायरं घोरं।
छिण्णंति अट्ठ-कम्मं, जम्मण-मरणं ण पावेंति ॥३॥

ये नित्यं व्रतमन्त्र-होमनिरताः, ध्यानाग्नि-होत्राकुलाः,
षट्कर्माभिरतास्तपोधनधनाः, साधुक्रियाः साधवः।
शीलप्रावरणा - गुणप्रहरणा - श्चन्द्रार्क - तेजोऽधिकाः,
मोक्षद्वार-कपाट-पाटन-भटाः, प्रीणन्तु मां साधवः ॥४॥

गुरवः पान्तु नो नित्यं, ज्ञान-दर्शन-नायकाः।
चारित्रार्णव-गम्भीराः, मोक्षमार्गोपदेशकाः ॥५॥

(यहाँ शिष्यों और सधर्माओं से युक्त आचार्य (गुरु) अपने इष्टदेव को नमस्कार करें पश्चात् **'समता सर्वभूतेषु'** इत्यादि पाठ और वृहद् सिद्ध एव चारित्रभक्ति अञ्चलिका सहित बोलें।)

नमः श्रीवर्धमानाय, निर्धूत-कलिलात्मने।
सालोकानां त्रिलोकानां, यद्-विद्या दर्पणायते ॥१॥

समता सर्व-भूतेषु, संयमे शुभ-भावना।
आर्त्त-रौद्र-परित्याग-स्तद्धि सामायिकं मतं ॥२॥

अथ सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं पाक्षिक/चातुर्मासिक/वार्षिक प्रतिक्रमण-क्रियायां कृतदोष-निराकरणार्थं पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीसिद्धभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं,
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।

चत्तारि मंगलं—अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा—अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि—अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलि-पण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ।

अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णरस-कम्म-भूमिसु, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, आदियराणं, तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं, सिद्धाणं, बुद्धाणं, परिणिव्वुदाणं, अंतयडाणं, पार-गयाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसयाणं, धम्म-णायगाणं, धम्म-वर-चाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहिदेवाणं, णाणाणं, दंसणाणं, चरित्ताणं, तवाणं सया करेमि, किरियम्मं ।

करेमि भंते ! सामाइयं सव्व-सावज्ज-जोगं, पच्चक्खामि, जावजीवं तिविहेण—मणसा वयसा काएण, ण करेमि, ण कारेमि, अण्णं करंतं पि ण समणुमण्णामि । तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि,

णिंदामि, गरहामि अप्पाणं जाव अरहंताणं, भयवंताणं, पज्जुवासं करेमि, तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

(यहाँ तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करके २७ श्वासोच्छ्वास पूर्वक कायोत्सर्ग करें । अनन्तर नमस्कार करके पुनः तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करके चतुर्विंशतिस्तव पढ़ें—)

थोस्सामि हं जिणवरे, तित्थयरे केवली अणंतजिणे ।
णर-पवर-लोय-महिए, विहुय-रय-मले महप्पण्णे ॥१॥
लोयस्सुज्जोययरे, धम्मं तित्थयरे जिणे वंदे ।
अरहंते कित्तिस्से, चउवीसं चेव केवलिणो ॥२॥
उसह-मजियं च वंदे, संभव-मभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे ॥३॥
सुविहिं च पुप्फयंतं, सीयल सेयं च वासुपुज्जं च ।
विमल-मणंतं भयवं, धम्मं संतिं च वंदामि ॥४॥
कुंथुं च जिण वरिंदं, अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वंदे अरिट्ठ-णेमिं, तह पासं वड्ढमाणं च ॥५॥
एवं मए अभित्थुआ, विहुय-रय-मला पहीण-जर-मरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु ॥६॥
कित्तिय वंदिय महिया, एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा ।
आरोग्ग-णाण-लाहं, दिंतु समाहिं च मे बोहिं ॥७॥
चंदेहिं णिम्मलयरा, आइच्चेहिं अहिय-पया-संता ।
सायरमिव गंभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥८॥

(यहाँ तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करके निम्नलिखित सिद्धभक्ति पढ़ें—)

श्रीसिद्धभक्तिः

सिद्धानुद्धूत-कर्मप्रकृति-
समुदयान् साधितात्म - स्वभावान्,
वन्दे सिद्धि - प्रसिद्ध्यै
तदनुपमगुण - प्रग्रहाकृष्टि - तुष्टः ।
सिद्धिः स्वात्मोपलब्धिः
प्रगुण-गुणगणोच्छादि-दोषापहाराद्,
योग्योपादान - युक्त्या,
दृषद इह यथा हेमभावोपलब्धिः ॥१॥
नाभावः सिद्धिरिष्टा,
न निज-गुणहतिस्तत्-तपोभिर्न युक्तेः,
अस्त्यात्मानादि - बद्धः,
स्वकृतजफलभुक् तत्-क्षयान् मोक्षभागी ।
ज्ञाता द्रष्टा स्वदेह-
प्रमितिरुपसमाहार-विस्तारधर्मा,
ध्रौव्योत्पत्ति - व्ययात्मा,
स्व-गुण-युत-इतो नान्यथा साध्यसिद्धिः ॥२॥
स त्वन्तर्बाह्य - हेतु-
प्रभव-विमल-सद्दर्शन-ज्ञान-चर्या-
सम्पद्धेति - प्रघात-
क्षत-दुरिततया व्यञ्जिताचिन्त्य-सारैः ।
कैवल्यज्ञान - दृष्टि-
प्रवर-सुख-महावीर्य - सम्यक्त्व-लब्धि-
ज्योति - र्वातायनादि-
स्थिर-परम - गुणैरद्भुतै - र्भासमानः ॥३॥

जानन् - पश्यन् - समस्तं,
सम - मनुपरतं सम्प्रतृप्यन् - वितन्वन्,
धुन्वन् ध्वान्तं नितान्तं,
निचित-मनुसभं प्रीणयन्-नीशभावम् ।
कुर्वन् सर्वप्रजाना-
मपरमभिभवन् ज्योतिरात्मान-मात्मा,
आत्मन्येवात्मनासौ,
क्षणमुपजनयन् सत्स्वयम्भूः प्रवृत्तः ॥४॥

छिन्दन् शेषानशेषान्,
निगलबल-कलींस्-तैरनन्त-स्वभावैः,
सूक्ष्मत्वाग्र्यावगाहागुरु-
लघुकगुणैः क्षायिकैः शोभमानः ।
अन्यैश्चान्य - व्यपोह-
प्रवणविषय-सम्प्राप्ति-लब्धि-प्रभावै-
रूर्ध्वव्रज्या - स्वभावात्
समयमुपगतो धाम्नि सन्तिष्ठतेऽग्र्ये ॥५॥

अन्याकाराप्ति - हेतु-
र्न च भवति परो येन तेनाल्पहीनः,
प्रागात्मोपात्त - देह-
प्रतिकृतिरुचिराकार एव ह्यमूर्तः ।
क्षुत्-तृष्णा-श्वास-कास-
ज्वर-मरण-जराऽनिष्ट-योग-प्रमोह-
व्यापत्त्याद्युग्र-दुःख-
प्रभव-भवहतेः कोऽस्य सौख्यस्य माता ॥६॥

आत्मोपादान - सिद्धं
स्वय-मतिशयवद् वीतबाधं विशालं,
वृद्धि - ह्रास - व्यपेतं,
विषय-विरहितं निःप्रतिद्वन्द्व-भावम् ।
अन्य - द्रव्यानपेक्षं,
निरुपम-ममितं शाश्वतं सर्वकालं,
उत्कृष्टानन्त - सारं,
परम-सुख-मतस्तस्य सिद्धस्य जातम् ॥७॥

नार्थः क्षुत्-तृड्-विनाशाद्,
विविध-रस-युतै-रन्नपानैरशुच्या,
नास्पृष्टे - र्गन्धमाल्यै-
र्नहि-मृदुशयनै-र्ग्लानि-निद्राद्यभावात् ।
आतङ्कार्ते - रभावे,
तदुपशमन-सद्भेषजानर्थता-वद्,
दीपानर्थक्य-वद् वा,
व्यपगत - तिमिरे दृश्यमाने समस्ते ॥८॥

तादृक् सम्पत् - समेता,
विविध-नय-तपः संयम-ज्ञान-दृष्टि-
चर्या-सिद्धाः समन्तात्,
प्रवितत - यशसो विश्वदेवाधिदेवाः ।
भूता भव्या भवन्तः,
सकल-जगति ये स्तूयमाना विशिष्टैः,
तान् सर्वान् नौम्य-नन्तान्,
निजिगमिषु-ररं तत्स्वरूपं त्रिसन्ध्यम् ॥९॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! सिद्धभत्ति काउस्सग्गो कओो, तस्सालोचेउं सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं, अट्ठविह-कम्मविप्प-मुक्काणं, अट्ठगुण-संपण्णाणं, उड्ढलोय-मत्थयम्मि पयट्ठियाणं, तवसिद्धाणं, णय-सिद्धाणं, संजमसिद्धाणं, चरित्तसिद्धाणं, अदीदाणागद-वट्टमाण-कालत्तय-सिद्धाणं, सव्वसिद्धाणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओो, कम्मक्खओो, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

अथ सर्वातिचार-विशुद्धयर्थं आलोचना-चारित्र-भक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(यहाँ आवर्त्त आदि की पूर्ण विधि सहित सामायिक दण्डक एव 'थोस्सामि स्तव' इत्यादि बोलकर निम्नलिखित चारित्रभक्ति आलोचना सहित बोलनी चाहिए–)

श्रीचारित्रभक्तिः

येनेन्द्रान् भुवनत्रयस्य विलसत्, केयूरहाराङ्गदान्,
भास्वन्-मौलिमणिप्रभा-प्रविसरोत्,तुङ्गोत्तमाङ्गान्नतान्
स्वेषां पाद-पयोरुहेषु मुनयश्चक्रुः प्रकामं सदा,
वन्दे पञ्चतयं तमद्य निगदन्, आचारमभ्यर्चितम् ।।१।।

ज्ञानाचार का स्वरूप

अर्थव्यञ्जन-तद्-द्वया-विकलता, कालोपधा-प्रश्रयाः,
स्वाचार्याद्यनपह्नवो बहुमति-श्चेत्यष्टधा व्याहृतम् ।
श्रीमज्ज्ञाति-कुलेन्दुना भगवता, तीर्थस्य कर्त्राऽञ्जसा,
ज्ञानाचारमहं त्रिधा प्रणिपताम्युद्धूतये कर्मणाम् ।।२।।

दर्शनाचार का स्वरूप

शङ्का-दृष्टि-विमोह-काङ्क्षण-विधि-व्यावृत्ति-सन्नद्धतां,
वात्सल्यं विचिकित्सना-दुपरतिं, धर्मोपबृंह-क्रियाम् ।
शक्त्या शासनदीपनं हितपथाद्, भ्रष्टस्य संस्थापनं,
वन्दे दर्शनगोचरं सुचरितं, मूर्ध्ना नमन्नादरात् ॥३॥

तपाचार (बाह्यतप) का स्वरूप

एकान्ते शयनोपवेशन-कृतिः, सन्तापनं तानवं,
संख्यावृत्ति-निबन्धना-मनशनं, विष्वाणमर्द्धोदरम् ।
त्यागं चेन्द्रिय-दन्तिनो मदयतः, स्वादो रसस्यानिशं,
षोढा बाह्यमहं स्तुवे शिवगति-प्राप्त्यभ्युपायं तपः ॥४॥

अन्तरङ्ग तपों का वर्णन

स्वाध्यायः शुभ-कर्मणश्च्युतवतः, संप्रत्यवस्थापनं,
ध्यानं व्यापृति-रामयाविनि गुरौ, वृद्धे च बाले यतौ ।
कायोत्सर्जन-सत्क्रिया विनय इ-त्येवं तपः षड्-विधं,
वन्देऽभ्यन्तर-मन्तरङ्ग-बलवद्, विद्वेषि विध्वंसनम् ॥५॥

वीर्याचार का वर्णन

सम्यग्ज्ञान-विलोचनस्य दधतः, श्रद्धान-मर्हन्-मते,
वीर्यस्याविनिगूहनेन तपसि, स्वस्य प्रयत्नाद् यतेः ।
या वृत्तिस्तरणीव नौ-रविवरा, लघ्वी भवोदन्वतो,
वीर्याचारमहं तमूर्जितगुणं, वन्दे सतामर्चितम् ॥६॥

चारित्राचार का वर्णन

तिस्रः सत्तमगुप्तयस्तनु-मनो-भाषा-निमित्तोदयाः,
पञ्चेर्यादि-समाश्रयाः समितयः, पञ्च-व्रतानीत्यपि ।

चारित्रोपहितं त्रयोदशतयं, पूर्वं न दृष्टं परै-
राचारं परमेष्ठिनो जिनपते-र्वीरं नमामो वयम् ॥७॥

पञ्चाचार पालने वाले मुनिराजों की वन्दना

आचारं सह-पञ्चभेद-मुदितं, तीर्थं परं मङ्गलं,
निर्ग्रन्थानपि सच्चरित्र-महतो, वन्दे समग्रान् यतीन् ।
आत्माधीन-सुखोदया-मनुपमां, लक्ष्मीमविध्वंसिनीं,
इच्छन् केवल-दर्शनावगमन-प्राज्य-प्रकाशोज्वलाम् ॥८॥

चारित्र-पालन में दोषों की आलोचना

अज्ञानाद्यदवीवृतं नियमिनोऽवर्तिष्यहं चान्यथा,
तस्मिन्नर्जित-मस्यति प्रतिनवं, चैनो निराकुर्वति ।
वृत्ते सप्ततयीं निधिं सुतपसा-मृद्धिं नयत्यद्भुतं,
तन्मिथ्या गुरुदुष्कृतं भवतु मे, स्वं निन्दितो निन्दितम् ।९।

चारित्र धारण करने का उपदेश

संसार-व्यसना-हति-प्रचलिता, नित्योदयप्रार्थिनः,
प्रत्यासन्नविमुक्तयः सुमतयः, शान्तैनसः प्राणिनः ।
मोक्षस्यैव कृतं विशालमतुलं, सोपान-मुच्चै-स्तरां,
आरोहन्तु चरित्र-मुत्तम-मिदं, जैनेन्द्रमोजस्विनः ॥१०॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! चरित्तभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, सम्मणाण-जोयस्स, सम्मत्ताहिट्ठियस्स, सव्व-पहाणस्स, णिव्वाण-मग्गस्स, कम्म-णिज्जरफलस्स, खमा-हारस्स, पंच-महव्वय-संपण्णस्स, तिगुत्ति-गुत्तस्स, पंच-समिदि-जुत्तस्स, णाणज्झाण-साहणस्स, समया इव पवेसयस्स, सम्मचरित्तस्स, णिच्चकालं अच्चेमि,

पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

अथ वृहदालोचना

(यह वृहदालोचना पाक्षिक प्रतिक्रमण में, चातुर्मासिक प्रतिक्रमण में और वार्षिक प्रतिक्रमण में की जाती है ।)

इच्छामि भंते ! पक्खियम्मि आलोचेउं, पण्णरसण्हं दिवसाणं, पण्णरसण्हं राईणं, अब्भंतरादो, पंचविहो आयारो, णाणायारो, दंसणायारो, तवायारो, वीरियायारो, चरित्तायारो चेदि ।

[इच्छामि भंते ! चउमासियम्मि आलोचेउं, चउण्हं मासाणं, अट्ठण्हं पक्खाणं, वीसुत्तर-सय-दिवसाणं वीसुत्तर-सय-राईणं, अब्भंतरादो, पंचविहो आयारो, णाणायारो, दंसणायारो, तवायारो, वीरियायारो, चरित्तायारो चेदि ।]

[इच्छामि भंते ! संवच्छरियम्मि आलोचेउं, बारसण्हं मासाणं, चउवीसण्हं पक्खाणं, तिण्हं-छावट्ठि-सय-दिवसाणं, तिण्हं-छावट्ठि-सय-राईणं अब्भंतरादो, पंचविहो आयारो, णाणायारो, दंसणायारो, तवायारो, वीरियायारो, चरित्तायारो चेदि ।]

तत्थ णाणायारो अट्ठविहो—काले, विणए, उवहाणे, बहुमाणे, तहेव अणिण्हवणे, विंजण-अत्थ-तदुभये चेदि ।

णाणायारो अट्ठविहो परिहाविदो, से अक्खरहीणं वा, सरहीणं वा, विंजणहीणं वा, पदहीणं वा, अत्थहीणं वा, गंथहीणं वा, थएसु वा, थुइसु वा, अत्थक्खाणेसु वा, अणियोगेसु वा, अणियोगद्दारेसु वा, अकाले सज्झाओ कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, काले वा परिहाविदो, अच्छाकारिदं वा, मिच्छामेलिदं वा, आमेलिदं, वामेलिदं, अण्णहादिण्हं, अण्णहापडिच्छिदं, आवासएसु परिहीणदाए तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥१॥

दंसणायारो अट्ठविहो

णिस्संकिय णिक्कंखिय, णिव्विदिगिंच्छा अमूढदिट्ठी य ।
उवगूहण ठिदिकरणं, वच्छल्ल - पहावणा चेदि ॥

दंसणायारो अट्ठविहो परिहाविदो, संकाए, कंखाए, विदिगिंछाए, अण्ण - दिट्ठी - पसंसणदाए, पर-पासंड-पसंसणदाए, अणायदण - सेवणाए, अवच्छल्लदाए, अपहावणाए, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥२॥

तवायारो बारहविहो अब्भंतरो छव्विहो, बाहिरो छव्विहो चेदि । तत्थ बाहिरो अणसणं, आमोदरियं, वित्ति-परिसंखा, रस-परिच्चाओ, सरीर-परिच्चाओ, विवित्त-सयणासणं चेदि । तत्थ अब्भंतरो पायच्छित्तं-विणओ, वेज्जावच्चं, सज्झाओ, विउस्सग्गो, झाणं चेदि । अब्भंतरं बाहिरं बारहविहं तवोकम्मं, ण कदं, णिसण्णेण पडिक्कंतं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥३॥

वीरियायारो पंचविहो परिहाविदो वर-वीरिय-परिक्कमेण, जहुत्तमाणेण, वलेण, वीरिएण, परिक्कमेण णिगूहियं, तवो-कम्मं, ण कदं, णिसण्णेण पडिक्कंतं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥४॥

चरित्तायारो तेरहविहो परिहाविदो पंच-महव्व-दाणि, पंच-समिदीओ, तिगुत्तीओ चेदि । तत्थ पढमे महव्वदे पाणादिवादादो वेरमणं से पुढविकाइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, आउकाइया जीवा असंखेज्जा-संखेज्जा, तेउकाइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, वाउ-काइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, वणप्फदि-काइया जीवा अणंताणंता हरिया, वीआ, अंकुरा, छिण्णा, भिण्णा, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

वे-इंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा कुक्खि-किमि-संख-खुल्लय-वराडय-अक्ख - रिट्ठय - गंडवाल, संबुक्क-सिप्पि-पुलविय-आइया एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

ते-इंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा कुंथु-द्देहिय-विच्छिय-गोभिद-गोजुव-मक्कुण-पिपीलियाइया, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

चउ इंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा दंस-मसय-मक्खि-पयंग-कीड-भमर-महुयर-गोमच्छियाइया, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

पंचिंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा अंडाइया, पोदाइया, जराइया, रसाइया, संसेदिमा, सम्मुच्छिमा, उब्भेदिमा, उववादिमा, अवि चउरासीदिजोणि-पमुह-सद-सहस्सेसु, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥१॥

अहावरे विदिए महव्वदे मुसावादादो वेरमणं से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, राएण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हासेण वा, भएण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पेम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, अणादरेण वा, अणेण केण वि कारणेण जादेण वा, सव्वो मुसावादो भासिओ, भासाविओ, भासिज्जंतो वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥२॥

अहावरे तिदिए महव्वदे अदिण्णादाणादो वेरमणं से गामे वा, णयरे वा, खेडे वा, कव्वडे वा, मडंवे वा, मंडले वा, पट्टणे वा, दोणमुहे वा, घोसे वा, आसमे वा, सहाए वा, संवाहे वा, सण्णिवेसे वा, तणं वा, कट्ठं वा, वियडिं वा, मणिं वा, एवमाइयं अदिण्णं गिण्हियं,

गेण्हावियं, गेण्हिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥३॥

अहावरे चउत्थे महव्वदे मेहुणादो वेरमणं से देविएसु वा, माणुसिएसु वा, तेरिच्छिएसु वा, अचेयणिएसु वा, मणुण्णामणुण्णेसु रूवेसु, मणुण्णामणुण्णेसु सद्देसु, मणुण्णामणुण्णेसु गंधेसु, मणुण्णामणुण्णेसु रसेसु, मणुण्णामणुण्णेसु फासेसु, चक्खिंदिय-परिणामे, सोदिंदिय-परिणामे, घाणिंदिय-परिणामे, जिब्भिंदिय-परिणामे, फासिंदिय-परिणामे, णो-इंदिय-परिणामे, अगुत्तेण अगुत्तिदिएण, णवविहं बंभचरियं, ण रक्खियं, ण रक्खावियं, ण रक्खिज्जंतो वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥४॥

अहावरे पंचमे महव्वदे परिग्गहादो वेरमणं सो वि परिग्गहो दुविहो, अब्भंतरो बाहिरो चेदि । तत्थ अब्भंतरो परिग्गहो णाणावरणीयं, दंसणावरणीयं, वेयणीयं, मोहणीयं, आउग्गं, णामं, गोदं, अंतरायं चेदि अट्ठविहो । तत्थ बाहिरो परिग्गहो उवयरण-भंड-फलह-पीढ-कमंडलु-संथार-सेज्ज-उवसेज्ज,भत्त-पाणादि-भेएण अणेयविहो; एदेण परिग्गहेण अट्ठविहं कम्मरयं बद्धं, बद्धावियं, बज्झंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥५॥

अहावरे छट्ठे अणुव्वदे राइ-भोयणादो वेरमणं से असणं, पाणं, खाइयं, साइयं चेदि । चउव्विहो आहारो से तित्तो वा, कडुओ वा, कसाइलो वा, अमिलो वा,

महुरो वा, लवणो वा, अलवणो वा, दुच्चितिओ, दुब्भासिओ, दुप्परिणामिओ, दुस्सुमिणिओ, रत्तीए भुत्तो, भुंजाविओ, भुंज्जिजंतो वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥६॥

पंचसमिदीओ इरियासमिदी, भासासमिदी, एसणासमिदी, आदाण-णिक्खेवण-समिदी, उच्चार-पस्सवण-खेल-सिहाणय-वियडि-पइट्ठावण-समिदी चेदि ।

तत्थ इरियासमिदी पुव्वुत्तर-दक्खिण-पच्छिम चउदिस-विदिसासु, विहरमाणेण जुगंतर-दिट्ठिणा, भव्वेण दट्ठव्वा । डव-डव-चरियाए, पमाददोसेण, पाण-भूद-जीव-सत्ताणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥७॥

तत्थ भासासमिदी कक्कसा, कडुआ, परुसा, णिट्ठुरा, परकोहिणी, मज्झंकिसा, अइ-माणिणी, अणयंकरा, छेयंकरा, भूयाण-वहंकरा चेदि दसविहा भासा, भासिया, भासाविया, भासिज्जंता वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥८॥

तत्थ एसणासमिदी अहाकम्मेण वा, पच्छाकम्मेण वा, पुरा-कम्मेण वा, उद्दिट्ठयडेण वा, णिद्दिट्ठयडेण वा, कोडयडेण वा, साइया, रसाइया, सइंगाला, सधूमिया, अइगिद्धीए, अग्गीव, छण्हं जीवणिकायाणं विराहणं काऊण अपरिसुद्धं भिक्खं, अण्णं, पाणं, आहारियं, आहाराविय, आहारिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥९॥

तत्थ आदाण-णिक्खेवण-समिदी चक्कलं वा, फलहं वा, पोत्थयं वा, पीढं वा, कमण्डलुं वा, वियडि वा, मणि वा, एवमाइयं उवयरणं अप्पडिलेहिऊण-गेण्हंतेण वा, ठवंतेण वा, पाण-भूद-जीव-सत्ताणं, उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।१०।।

तत्थ उच्चार-पस्सवण-खेल-सिंहाणय-वियडि-पइट्ठावणियासमिदी रत्तीए वा, वियाले वा, अचक्खु-विसए, अवत्थंडिले, अब्भोवयासे, सणिद्धे, सवीए, सहरिए, एवमाइयासु, अप्पासुग-ठाणेसु, पइट्ठावंतेण, पाण-भूद-जीव-सत्ताणं, उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।११।।

तिण्णि-गुत्तीओ मण-गुत्तीओ, वय-गुत्तीओ, काय-गुत्तीओ चेदि । तत्थ मण-गुत्ती अट्टज्झाणे, रुद्दज्झाणे, इह-लोय-सण्णाए, पर-लोय-सण्णाए, आहार-सण्णाए, भय-सण्णाए, मेहुण-सण्णाए, परिग्गह-सण्णाए, एवमाइयासु जा मण-गुत्ती, ण रक्खिया, ण रक्खाविया, ण रक्खिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।१२।।

तत्थ वय-गुत्ती इत्थि-कहाए, अत्थ-कहाए, भत्त-कहाए, राय-कहाए, चोर-कहाए, वेर-कहाए, पर-पासंड-कहाए, एवमाइयासु जा वय-गुत्ती ण रक्खिया, ण रक्खाविया, ण रक्खिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।१३।।

तत्थ कायगुत्ती चित्त-कम्मेसु वा, पोत्त-कम्मेसु वा, कट्ठ-कम्मेसु वा, लेप्प-कम्मेसु वा, लय-कम्मेसु वा, एवमाइयासु जा काय-गुत्ती, ण रक्खिया, ण रक्खाविया, ण रक्खिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।१४।।

दोसु अट्ट-रुद्द-संकिलेस-परिणामेसु, तीसु अप्प-सत्थ-संकिलेस-परिणामेसु, मिच्छाणाण-मिच्छादंसण-मिच्छा-चरित्तेसु, चउसु उवसग्गेसु, चउसु सण्णासु, चउसु पच्चएसु, पंचसु चरित्तेसु, छसु जीवणिकाएसु, छसु आवासएसु, सत्तसु भएसु, अट्ठसु मएसु, अट्ठसु सुद्धीसु, णवसु बंभचेर-गुत्तीसु, दससु समण-धम्मेसु, दससु धम्म-ज्झाणेसु, दससु मुंडेसु, दसविहेसु भत्तिसु, बारसेसु संजमेसु, वावीसाए परीसहेसु, पणवीसाए भावणासु, पणवीसाए किरियासु, अट्ठारह-सील-सहस्सेसु, चउरा-सीदि - गुण - सय - सहस्सेसु, मूलगुणेसु, उत्तरगुणेसु पक्खियम्मि/चउमासियम्मि/संवच्छरियम्मि, अदिक्कमो, वदिक्कमो, अइचारो, अणाचारो, आभोगो, अणाभोगो जो जादो तं पडिक्कमामि । तस्स मए पडिक्कंतं, मे सम्मत्त-मरणं, पंडिय-मरणं, वीरिय-मरणं, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

(यहाँ से नीचे लिखी सम्पूर्ण क्रिया मात्र आचार्यश्री को करनी चाहिए ।)

नमोऽस्तु सर्वातिचार - विशुद्धयर्थं सिद्धभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम्—

णमो* अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं,
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।

(यहाँ कायोत्सर्ग करना ।)

थोस्सामि हं जिणवरे, तित्थयरे केवली अणंतजिणे ।
णर-पवर-लोय-महिए, विहुय-रय-मले महप्पण्णे ॥१॥
लोयस्सुज्जोययरे, धम्मं तित्थयरे जिणे वंदे ।
अरहंते कित्तिस्से, चउवीसं चेव केवलिणो ॥२॥
उसह-मजियं च वंदे, संभव-मभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे ॥३॥
सुविहिं च पुप्फयंतं, सीयल सेयं च वासुपुज्जं च ।
विमल-मणंतं भयवं, धम्मं संतिं च वंदामि ॥४॥
कुंथुं च जिणवरिंदं, अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वंदे अरिट्ठ-णेमिं, तह पासं वड्ढमाणं च ॥५॥
एवं मए अभित्थुआ, विहुय-रय-मला पहीण-जर-मरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु ॥६॥
कित्तिय वंदिय महिया, एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा ।
आरोग्ग-णाण-लाहं, दिंतु समाहिं च मे बोहिं ॥७॥
चंदेहिं णिम्मलयरा, आइच्चेहिं अहिय-पया-संता ।
सायरमिव गंभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥८॥

लघुसिद्धभक्तिः

सम्मत्त-णाण-दंसण-वीरिय-सुहुमं तहेव अवगहणं ।
अगुरुलहु-मव्वावाहं, अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं ॥१॥

---

*क्रियाकलाप पृ. ८३ के अनुसार "णमो अरहंताणं इत्यादि पंचपदान्युच्चार्य कायोत्सर्ग कृत्वा थास्सामि इत्यादि भणित्वा"…… बोल कर सिद्धभक्ति बोलनी चाहिए ।

तव-सिद्धे णय-सिद्धे, संजम-सिद्धे चरित्त-सिद्धे य ।
णाणम्मि दंसणम्मि य, सिद्धे सिरसा णमस्सामि ॥२॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! सिद्धभत्ति - काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं, अट्ठविह - कम्मविप्प - मुक्काणं, अट्ठगुण - संपण्णाणं उड्ढलोय-मत्थयम्मि पयट्ठियाणं, तव-सिद्धाणं, णय-सिद्धाणं, संजम-सिद्धाणं, चरित्त-सिद्धाणं, अदीदाणागद-वट्टमाण-कालत्तय-सिद्धाणं, सव्व-सिद्धाणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

नमोऽस्तु सर्वातिचार - विशुद्ध्यर्थं आलोचना-योगिभक्ति - कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम्—

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं,
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।

(यहाँ कायोत्सर्ग करना ।)

(यहाँ **थोस्सामि हं जिणवरे** .... इत्यादि बोलना चाहिए ।)

लघुयोगिभक्तिः

प्रावृट्काले सविद्युत्-
प्रपतित-सलिले वृक्ष-मूलाधिवासाः,
हेमन्ते रात्रि - मध्ये,
प्रति-विगतभयाः काष्ठवत्-त्यक्त-देहाः ।

ग्रीष्मे सूर्यांशु-तप्ताः,
गिरि-शिखरगताः स्थान-कूटान्तरस्थाः,
ते मे धर्मं प्रदद्यु-र्मुनि-गण-
वृषभाः मोक्षनिःश्रेणि-भूताः ॥१॥

गिम्हे गिरि-सिहरत्था, वरिसायाले रुक्ख-मूल-रयणीसु ।
सिसिरे बाहिर-सयणा, ते साहू वंदिमो णिच्चं ॥२॥

गिरि-कन्दर-दुर्गेषु, ये वसन्ति दिगम्बराः ।
पाणिपात्र-पुटाहाराः, ते यान्ति परमां गतिम् ॥३॥

इच्छामि भंते ! योगिभत्तिकाउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णरस-कम्मभूमिसु, आदावण-रुक्ख-मूल-अब्भोवास-ठाण-मोण-वीरासणेक्कपास-कुक्कुडासण-चउ-छ-पक्ख-खवणादि-जोग-जुत्ताणं, सव्वसाहूणं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

आलोचना

इच्छामि भंते ! चरित्तायारो तेरसविहो, परिहाविदो, पंच-महव्वदाणि, पंच-समिदीओ, ति-गुत्तीओ चेदि । तत्थ पढमं महव्वदे पाणादिवादादो वेरमणं से पुढवि-काइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, आउकाइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, तेउकाइया जीवा असंखेज्जा-संखेज्जा, वाउकाइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, वणप्फदिकाइया जीवा अणंताणंता, हरिया, बीया, अंकुरा, छिण्णा, भिण्णा, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं,

विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।१।।

बे-इंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा कुक्खिकिमि-संख-खुल्लय, वराडय, अक्ख, रिट्ठगण्डवाल - संबुक्क-सिप्पि, पुलवियाइया, एदेसिं उद्दावणं परिदावणं, विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२।।

ते-इंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, कुंथु-द्देहिय विच्छिय-गोभिद-गोजुव-मक्कुण-पिपीलियाइया, एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।३।।

चउ-इंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, दंस-मसय-मक्खि - पयंग - कीड - भमर - महुयर - गोमक्खियाइया, एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।४।।

पंचिंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, अंडाइया, पोदाइया, जराइया, रसाइया, संसेदिमा, सम्मुच्छिमा, उब्भेदिमा, उववादिमा, अवि चउरासीदिजोणि-पमुह-सदसहस्सेसु, एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं, उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणु-मण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।५।।

वद-समिदिंदिय-रोधो, लोचावासय-मचेल-मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदंतवणं, ठिदि-भोयण-मेयभत्तं च ॥१॥
एदे खलु मूलगुणा, समणाणं जिणवरेहि पण्णत्ता ।
एत्थ पमाद-कदादो, अइचारादो णियत्तो हं ॥२॥

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं ॥१॥

वदसमिदिंदिय .... भत्तं च ॥१॥
एदे खलु .... णियत्तो हं ॥२॥

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं ॥२॥

वदसमिदिंदिय .... भत्तं च ॥१॥
एदे खलु मूलगुणा .... णियत्तो हं ॥२॥

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं ॥३॥

इस प्रकार आचार्यश्री उपर्युक्त पाठ को तीन बार बोल कर अरहंतदेव के समक्ष अपने दोषों की आलोचना करें । पश्चात् जैसे दोष लगे हों उनके अनुसार स्वयं प्रायश्चित्त लेकर निम्नलिखित पाठ तीन बार बोलें—

पञ्चमहाव्रत-पञ्चसमिति-पञ्चेन्द्रियरोध-षडावश्यकक्रियालोचादयोऽष्टाविंशति-मूलगुणाः, उत्तमक्षमा-मार्दवार्जव-शौच-सत्य-संयम-तप-स्त्यागाकिञ्चन्य-ब्रह्मचर्याणि दशलाक्षणिको धर्मः, अष्टादश-शील-सहस्राणि, चतुरशीति-लक्ष-गुणाः, त्रयोदशविधं चारित्रं, द्वादशविधं तपश्चेति । सकलं सम्पूर्णं अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्व-साधु-साक्षिकं सम्यक्त्वपूर्वकं दृढव्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु ॥१॥

पञ्चमहाव्रत-पञ्चसमिति-पञ्चेन्द्रियरोध ....
सम्यक्त्वपूर्वकं, दृढव्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु ।।२।।

पञ्चमहाव्रत-पञ्चसमिति-पञ्चेन्द्रियरोध ....
सम्यक्त्वपूर्वकं, दृढव्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु ।।३।।

उपर्युक्त पञ्चमहाव्रत-पञ्चसमिति आदि पाठ तीन बार बोलकर प्रायश्चित्त के योग्य शिष्यों को प्रायश्चित्त देवें। पश्चात् देव के लिए निम्नलिखित गुरुभक्ति बोलें–

निष्ठापनाचार्यभक्तिः

नमोऽस्तु निष्ठापनाचार्यभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम्–

(यहाँ कायोत्सर्ग करना।)

श्रुतजलधि-पारगेभ्यः, स्वपरमत-विभावना-पटुमतिभ्यः।
सुचरित-तपोनिधिभ्यो, नमो गुरुभ्यो गुणगुरुभ्यः ।।१।।

छत्तीस-गुण-समग्गे, पंचविहाचार-करण-संदरिसे।
सिस्साणुग्गह-कुसले, धम्माइरिए सया वंदे ।।२।।

गुरुभत्ति-संजमेण य, तरंति संसार-सायरं घोरं।
छिण्णंति अट्ठ-कम्मं, जम्मण-मरणं ण पावेंति ।।३।।

ये नित्यं व्रतमन्त्र-होमनिरताः, ध्यानाग्नि-होत्राकुलाः,
षट्कर्माभिरतास्तपोधनधनाः, साधुक्रियाः साधवः।
शीलप्रावरणा-गुणप्रहरणा-श्चन्द्रार्क-तेजोऽधिकाः,
मोक्षद्वार-कपाट-पाटन-भटाः, प्रीणन्तु मां साधवः ।।४।।

गुरवः पान्तु नो नित्यं, ज्ञान-दर्शन-नायकाः।
चारित्रार्णव-गम्भीराः, मोक्षमार्गोपदेशकाः ।।५।।

(यहाँ आचार्य सहित शिष्य मुनि और साधर्मी मुनि मिलकर आचार्यश्री के आगे निम्नलिखित पाठ बोलें–)

इच्छामि भंते ! पक्खियम्मि, [चउमासियम्मि/संवच्छरियम्मि] आलोचेउं, पंचमहव्वदाणि तत्थ पढमं महव्वदं पाणादिवादादो वेरमणं, विदियं महव्वदं मुसावादादो वेरमणं, तिदियं महव्वदं अदिण्णादाणादो वेरमणं, चउत्थं महव्वदं मेहुणादो वेरमणं, पंचमं महव्वदं परिग्गहादो वेरमणं, छट्ठं अणुव्वदं राइ-भोयणादो वेरमणं, तीसु गुत्तीसु, णाणेसु, दंसणेसु, चरित्तेसु, बावीसाए परीसहेसु, पणवीसाए भावणासु, पणवीसाए किरियासु, अट्ठारस-सील-सहस्सेसु, चउरासीदि-गुण-सय-सहस्सेसु, बारसण्हं संजमाणं, बारसण्हं तवाणं, बारसण्हं अंगाणं, तेरसण्हं चरित्ताणं, चउदसण्हं पुव्वाणं, एयारसण्हं पडिमाणं दसविह मुंडाणं, दसविह समण-धम्माणं, दसविह धम्म-ज्झाणाणं, णवण्हं बंभचेर-गुत्तीणं, णवण्हं णो-कसायाणं, सोलसण्हं कसायाणं, अट्ठण्हं कम्माणं, अट्ठण्हं सुद्धीणं, अट्ठण्हं पवयण-माउयाणं, सत्तण्हं भयाणं, सत्तविह-संसाराणं, छण्हं जीव-णिकायाणं, छण्हं आवासयाणं, पंचण्हं इंदियाणं, पंचण्हं महव्वयाणं, पंचण्हं समिदीणं, पंचण्हं चरित्ताणं, चउण्हं सण्णाणं, चउण्हं पच्चयाणं, चउण्हं उवसग्गाणं, मूलगुणाणं, उत्तरगुणाणं, दिट्ठियाए, पुट्ठियाए, पदो-सियाए, परिदावणियाए, से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, रागेण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हासेण वा, भएण वा, पओसेण वा, पमाएण वा, पिम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, एदेसिं अच्चासादणाए, तीण्हं दंडाणं, तीण्हं लेस्साणं,

तीण्हं गारवाणं, तीण्हं अप्पसत्थ-संकिलेस-परिणामाणं, दोण्हं अट्टरुद्द-संकिलेस-परिणामाणं, मिच्छाणाण-मिच्छादंसण-मिच्छाचरित्ताणं, मिच्छत्त-पाउग्गं, असंजम-पाउग्गं, कसाय-पाउग्गं, जोग-पाउग्गं, अप्पाउग्ग सेवणदाए, पाउग्ग-गरहणदाए एत्थ मे जो कोइ पक्खियम्मि (चउमासियम्मि / संवच्छरियम्मि) अदिक्कमो, वदिक्कमो, अइचारो, अणाचारो, आभोगो, अणाभोगो जादो, तं पडिक्कमामि। तस्स मए पडिक्कंतं मे सम्मत्त-मरणं, पंडिय-मरणं, वीरिय-मरणं, दुक्ख-क्खओ, कम्मक्खओ बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहि-मरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं।

वद-समिदिंदिय-रोधो, लोचावासय-मचेल-मण्हाणं।
खिदि-सयण-मदंतवणं, ठिदि-भोयण-मेयभत्तं च ॥१॥

एदे खलु मूलगुणा, समणाणं जिणवरेहि पण्णत्ता।
एत्थ पमाद-कदादो, अइचारादो णियत्तो हं ॥२॥

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं
(यह पाठ तीन बार बोलना चाहिए।)

पञ्चमहाव्रत-पञ्चसमिति-पञ्चेन्द्रियरोध-षडावश्यकक्रियालोचादयोऽष्टाविंशति-मूलगुणाः, उत्तमक्षमा-मार्दवार्जव-शौच-सत्य-संयम-तप-स्त्यागाकिञ्चन्य-ब्रह्मचर्याणि दशलाक्षणिको धर्मः, अष्टादश-शील-सहस्राणि, चतुरशीति-लक्ष-गुणाः, त्रयोदशविधं चारित्रं, द्वादशविधं तपश्चेति। सकलं सम्पूर्णं अर्हत्सिद्धा-चार्योपाध्याय-सर्व-साधु-साक्षिकं सम्यक्त्वपूर्वकं दृढव्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु ॥१॥

पञ्चमहाव्रत-पञ्चसमिति-पञ्चेन्द्रियरोध..............
सम्यक्त्वपूर्वकं, दृढव्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु ॥२॥
पञ्चमहाव्रत-पञ्चसमिति-पञ्चेन्द्रियरोध..............
सम्यक्त्वपूर्वकं, दृढव्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु ॥३॥

प्रतिक्रमणभक्तिः

अथ सर्वातिचार-विशुद्धयर्थं पाक्षिक (चातुर्मासिक/वार्षिक) प्रतिक्रमण-क्रियायां, कृत-दोष-निराकरणार्थं, पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीप्रतिक्रमणभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम्—

(इस प्रकार विज्ञापन का उच्चारण कर आचार्यश्री सहित सभी शिष्य एवं साधर्मी मुनिगण निम्नलिखित 'णमो अरहंताणं' इत्यादि दण्डक बोलकर कायोत्सर्ग करें ।)

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं,
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।

चत्तारि मंगलं—अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा—अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि—अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलि-पण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ।

अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णरस-कम्म-भूमिसु, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, आदियराणं, तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं,

सिद्धाणं, बुद्धाणं, परिणिव्वुदाणं, अंतयडाणं, पारगयाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसयाणं, धम्म-णायगाणं, धम्म-वर-चाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहिदेवाणं, णाणाणं, दंसणाणं, चरित्ताणं, तवाणं सया करेमि, किरियम्मं ।

करेमि भंते ! सामाइयं सव्व-सावज्ज-जोगं, पच्चक्खामि, जावजीवं तिविहेण—मणसा वयसा काएण, ण करेमि, ण कारेमि, अण्णं करंतं पि ण समणुमण्णामि । तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि अप्पाणं, जाव अरहंताणं, भयवंताणं, पज्जुवासं करेमि, तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

(२७ उच्छ्वासों में कायोत्सर्ग करना)

(यथोक्त परिकर्म के बाद केवल आचार्यश्री निम्नलिखित थोस्सामि दण्डक पढ़ें ।)

थोस्सामि हं जिणवरे, तित्थयरे केवली अणंतजिणे ।
णर-पवर-लोय-महिए, विहुय-रय-मले महप्पण्णे ॥१॥
लोयस्सुज्जोययरे, धम्मं तित्थयरे जिणे वंदे ।
अरहंते कित्तिस्से, चउवीसं चेव केवलिणो ॥२॥
उसह-मजियं च वंदे, संभव-मभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे ॥३॥
सुविहिं च पुप्फयंतं, सीयल सेयं च वासुपुज्जं च ।
विमल-मणंतं भयवं, धम्मं संतिं च वंदामि ॥४॥
कुंथुं च जिणवरिंदं, अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वंदे अरिट्ठ-णेमिं, तह पासं वड्ढमाणं च ॥५॥

एवं मए अभित्थुआ, विहुय-रय-मला पहीण-जर-मरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु ॥६॥
कित्तिय वंदिय महिया, एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा ।
आरोग्ग-णाण-लाहं, दिंतु समाहिं च मे बोहिं ॥७॥
चंदेहिं णिम्मलयरा, आइच्चेहिं अहिय-पया-संता ।
सायरमिव गंभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥८॥

(यहाँ मात्र आचार्यश्री निम्नलिखित गणधरवलय का पाठ पढ़ें ।)

गणधरवलयः

जिनान् जितारातिगणान् गरिष्ठान्,
देशावधीन् सर्व-परावधींश्च ।
सत्-कोष्ठ-बीजादि-पदानुसारीन्,
स्तुवे गणेशानपि तद्-गुणाप्त्यै ॥१॥
संभिन्न-श्रोत्रान्वित-सन्-मुनीन्द्रान्,
प्रत्येक-सम्बोधित-बुद्ध-धर्मान् ।
स्वयं-प्रबुद्धांश्च विमुक्ति-मार्गान्,
स्तुवे गणेशानपि तद्-गुणाप्त्यै ॥२॥
द्विधा मनःपर्यय-चित्-प्रयुक्तान्,
द्विपञ्च-सप्तद्वय-पूर्व-सक्तान् ।
अष्टाङ्ग-नैमित्तिक-शास्त्र-दक्षान्,
स्तुवे गणेशानपि तद्-गुणाप्त्यै ॥३॥
विकुर्वणाख्यर्द्धि-महा-प्रभावान्,
विद्याधरांश्चारण-ऋद्धि-प्राप्तान् ।
प्रज्ञाश्रितान् नित्य-ख-गामिनश्च,
स्तुवे गणेशानपि तद्-गुणाप्त्यै ॥४॥

आशी-विषान् दृष्टि-विषान् मुनीन्द्रा-,
नुग्राति-दीप्तोत्तम-तप्त-तप्तान् ।
महातिघोर - प्रतपःप्रसक्तान्,
स्तुवे गणेशानपि तद्-गुणाप्त्यै ॥५॥

वन्द्यान् सुरै - र्घोर - गुणांश्च लोके,
पूज्यान् बुधै-र्घोर-पराक्रमांश्च ।
घोरादि - संसद्-गुण - ब्रह्म - युक्तान्,
स्तुवे गणेशानपि तद्-गुणाप्त्यै ॥६॥

आमर्द्धि - खेलर्द्धि - प्रजल्ल - विड्द्धि-
सर्वर्द्धि-प्राप्तांश्च व्यथादि-हंतृन् ।
मनोवचः - काय - बलोपयुक्तान्,
स्तुवे गणेशानपि तद्-गुणाप्त्यै ॥७॥

सत् - क्षीर - सर्पि - र्मधुरामृतर्द्धीन्,
यतीन् वराक्षीणमहानसांश्च ।
प्रवर्धमानांस्त्रिजगत् - प्रपूज्यान्,
स्तुवे गणेशानपि तद्-गुणाप्त्यै ॥८॥

सिद्धालयान् श्रीमहतोऽतिवीरान्,
श्रीवर्धमानर्द्धि विबुद्धि-दक्षान् ।
सर्वान् मुनीन् मुक्तिवरा-नृषीन्द्रान्,
स्तुवे गणेशानपि तद्-गुणाप्त्यै ॥९॥

नृ-सुर-खचर-सेव्या विश्व-श्रेष्ठर्द्धि-भूषा,
विविध-गुण-समुद्रा मार-मातङ्ग-सिंहाः ।
भव-जल-निधि-पोता वन्दिता मे दिशन्तु,
मुनि-गण-सकलाः श्री-सिद्धिदाः सदृषीन्द्राः ॥१०॥

(यहाँ मात्र आचार्यश्री निम्नलिखित प्रतिक्रमण दण्डक बोलें और उतने काल पर्यन्त सर्व शिष्य एवं साधर्मी मुनिगण कायोत्सर्ग मुद्रा से स्थित रहकर सुनें ।)

प्रतिक्रमणदण्डकः

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।

णमो जिणाणं[१], णमो ओहि-जिणाणं[२], णमो परमोहि-जिणाणं[३], णमो सव्वोहि-जिणाणं[४], णमो अणंतोहि-जिणाणं[५], णमो कोट्ठ-बुद्धीणं[६], णमो बीज-बुद्धीणं[७], णमो पदाणुसारीणं[८], णमो संभिण्ण-सोदारणं[९], णमो सयं-बुद्धाणं[१०], णमो पत्तेय-बुद्धाणं[११], णमो बोहिय-बुद्धाणं[१२], णमो उजु-मदीणं[१३], णमो विउल-मदीणं[१४], णमो दस-पुव्वीणं[१५], णमो चउदस-पुव्वीणं[१६], णमो अट्ठंग-महा-णिमित्त-कुसलाणं[१७], णमो विउव्वणइड्ढि-पत्ताणं[१८], णमो विज्जाहराणं[१९], णमो चारणाणं[२०], णमो पण्ण-समणाणं[२१], णमो आगास-गामीणं[२२], णमो आसीविसाणं[२३], णमो दिट्ठिविसाणं[२४], णमो उग्ग-तवाणं[२५], णमो दित्त-तवाणं[२६], णमो तत्त-तवाणं[२७], णमो महा-तवाणं[२८], णमो घोर-तवाणं[२९], णमो घोर-गुणाणं[३०], णमो घोर-परक्कमाणं[३१], णमो घोरगुणबंभ-चारीणं[३२], णमो आमोसहि-पत्ताणं[३३], णमो खेलोसहि-पत्ताणं[३४], णमो जल्लोसहि-पत्ताणं[३५], णमो विप्पोसहि-पत्ताणं[३६], णमो सव्वोसहि-पत्ताणं[३७], णमो मण-बलीणं[३८], णमो वय-बलीणं[३९], णमो काय-बलीणं[४०], णमो खीर-सवीणं[४१], णमो सप्पि-सवीणं[४२], णमो महुर-सवीणं[४३],

णमो अमिय-सवीणं[४४], णमो अक्खीण-महाणसाणं[४५], णमो वड्ढमाणाणं[४६], णमो सिद्धायदणाणं[४७], णमो भयवदो-महदि-महावीर-वड्ढमाण-बुद्ध-रिसिणो[४८] चेदि ।

जस्संतियं धम्म-पहं णियंच्छे,
तस्संतियं वेणइयं पउंजे ।
काएण वाचा मणसा वि णिच्चं,
सक्कारए तं सिर-पंचमेण ।।१।।

सुदं मे आउस्संतो ! इह खलु समणेण, भयवदो महदि-महावीरेण, महा-कस्सवेण, सव्वण्हुणा, सव्वलोय-दरसिणा । सदेवासुर-माणुसस्स लोयस्स, आगदिगदि-चवणोववादं, बंधं, मोक्खं, इड्ढि, ठिदिं, जुदिं, अणुभागं, तक्कं, कलं, मणोमाणसियं, भुत्तं, कयं, पडिसेवियं, आदिकम्मं, अरुह-कम्मं, सव्वलोए, सव्वजीवे, सव्वभावे, सव्वं समं जाणंता पस्संता विहर-माणेण, समणाणं, पंचमहव्वदाणि, राइ-भोयण-वेरमण-छट्ठाणि अणुव्व-दाणि स-भावणाणि, समाउग-पदाणि, स-उत्तर-पदाणि, सम्मं धम्मं उवदेसिदाणि । तं जहा—

पढमे महव्वदे पाणादिवादादो वेरमणं, विदिए महव्वदे मुसावादादो वेरमणं, तिदिए महव्वदे अदिण्णा-दाणादो वेरमणं, चउत्थे महव्वदे मेहुणादो वेरमणं, पंचमे महव्वदे परिग्गहादो वेरमणं, छट्ठे अणुव्वदे राइ-भोयणादो वेरमणं चेदि ।

तत्थ पढमे महव्वदे सव्वं भंते ! पाणादिवादं पच्चक्खामि जावजीवं, तिविहेण-मणसा, वयसा, काएण, से ए-इंदिया वा, बे-इंदिया वा, ते-इंदिया वा, चउ-

इंदिया वा, पंचिंदिया वा, पुढविकाइए वा, आउकाइए वा, तेउकाइए वा, वाउकाइए वा, वणप्फदिकाइए वा, तसकाइए वा, अंडाइए वा, पोदाइए वा, जराइए वा, रसाइए वा, संसेदिमे वा, सम्मुच्छिमे वा, उब्भेदिमे वा, उववादिमे वा, तसे वा, थावरे वा, बादरे वा, सुहुमे वा, पाणे वा, भूदे वा, जीवे वा, सत्ते वा, पज्जत्ते वा, अपज्जत्ते वा, अवि चउरासीदि-जोणि-पमुह-सदसहस्सेसु, णेव सयं पाणादिवादिज्ज, णो अण्णेहिं पाणे अदिवादावेज्ज, अण्णेहिं पाणे अदिवादिज्जंतो वि ण समणुमणिज्ज। तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि अप्पाणं। वोस्सरामि पुव्वचिणं भंते ! जं पि मए रागस्स वा, दोसस्स वा, मोहस्स वा, वसंगदेण सयं पाणे अदिवादाविदे, अण्णेहिं पाणे अदिवादाविदे, अण्णेहिं पाणे अदिवादिज्जंते वि समणुमण्णिदे तं वि।

इमस्स णिग्गंथस्स, पवयणस्स, अणुत्तरस्स, केवलियस्स, केवलिपण्णत्तस्स धम्मस्स - अहिंसा - लक्खणस्स, सच्चाहिट्ठियस्स, विणय-मूलस्स, खमा-वलस्स, अट्ठारह-सील - सहस्स - परिमंडियस्स, चउरासीदि-गुणसय-सहस्स, विहूसियस्स, णवविह-बंभचेर-गुत्तस्स, णियदि-लक्खणस्स, परिच्चाय-फलस्स, उवसम-पहाणस्स, खंति-मग्ग - देसयस्स, मुत्ति - मग्ग - पयासयस्स, सिद्धि-मग्ग-पज्जव-साहणस्स, से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, अण्णाणेण वा, अदंसणेण वा, अवीरिएण वा, असंजमेण वा, अस्समणेण वा, अणहि-गमणेण वा,

अभिमंसिदाए वा, अबोहिदाए वा, रागेण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हासेण वा, भएण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पेम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, अणादरेण वा, अणेण केण वि कारणेण जादेण वा, अलसदाए, वालिसदाए, कम्म-भारिगदाए, कम्म-गुरु-गदाए, कम्म-दुच्चरिदाए, कम्म-पुरुक्कडदाए, ति-गारव-गुरु-गदाए, अबहु-सुददाए, अविदिद-परमट्ठ-दाए, तं सव्वं पुव्वं दुच्चरियं गरहामि ।

आगमेसिं च अपच्चक्खियं पच्चक्खामि । अणालोचियं आलोचेमि । अणिंदियं णिंदामि । अगरहियं गरहामि । अपडिक्कंतं पडिक्कमामि । विराहणं वोस्सरामि, आराहणं अब्भुट्ठेमि । अण्णाणं वोस्सरामि, सण्णाणं अब्भुट्ठेमि । कुदंसणं वोस्सरामि, सम्मदंसणं अब्भुट्ठेमि । कुचरियं वोस्सरामि, सुचरियं अब्भुट्ठेमि । कुतवं वोस्सरामि, सुतवं अब्भुट्ठेमि । अकरणिज्जं वोस्सरामि, करणिज्जं अब्भुट्ठेमि । अकिरियं वोस्सरामि, किरियं अब्भुट्ठेमि । पाणादिवादं वोस्सरामि, अभयदाणं अब्भुट्ठेमि । मोसं वोस्सरामि, सच्चं अब्भुट्ठेमि । अदिण्णादाणं वोस्सरामि, दिण्णं कप्पणिज्जं अब्भुट्ठेमि । अबंभं वोस्सरामि, बंभचरियं अब्भुट्ठेमि । परिग्गहं वोस्सरामि, अपरिग्गहं अब्भुट्ठेमि । राइभोयणं वोस्सरामि, दिवाभोयणं अब्भुट्ठेमि । अणेयभत्तं वोस्सरामि, एगभत्तं पच्चुप्पणं फासुगं अब्भुट्ठेमि । अट्ट - रुद्द - ज्झाणं वोस्सरामि, धम्म-सुक्क-ज्झाणं अब्भुट्ठेमि । किण्ह-णील-काउ-लेस्सं वोस्स-

रामि, तेउ - पम्म - सुक्क - लेस्सं अब्भुट्ठेमि । आरंभं वोस्सरामि, अणारंभं अब्भुट्ठेमि । असंजमं वोस्सरामि, संजमं अब्भुट्ठेमि । सग्गंथं वोस्सरामि, णिग्गंथं अब्भुट्ठेमि । सचेलं वोस्सरामि, अचेलं अब्भुट्ठेमि । अलोचं वोस्सरामि, लोचं अब्भुट्ठेमि । ण्हाणं वोस्सरामि, अण्हाणं अब्भुट्ठेमि । अखिदि-सयणं वोस्सरामि, खिदि-सयणं अब्भुट्ठेमि । दंतवणं वोस्सरामि, अदंतवणं अब्भुट्ठेमि । अट्ठिदि-भोयणं वोस्सरामि, ठिदि-भोयण-मेय-भत्तं अब्भुट्ठेमि । अपाणिपत्तं वोस्सरामि, पाणि-पत्तं अब्भुट्ठेमि । कोहं वोस्सरामि, खंतिं अब्भुट्ठेमि । माणं वोस्सरामि, मद्दवं अब्भुट्ठेमि । मायं वोस्सरामि, अज्जवं अब्भुट्ठेमि । लोहं वोस्सरामि, संतोसं अब्भुट्ठेमि । अतवं वोस्सरामि, दुवादसविह-तवो-कम्मं अब्भुट्ठेमि ।

मिच्छत्तं परिवज्जामि, सम्मत्तं उवसंपज्जामि । असीलं परिवज्जामि, सुसीलं उवसंपज्जामि । ससल्लं परिवज्जामि, णिसल्लं उवसंपज्जामि । अविणयं परिवज्जामि, विणयं उवसंपज्जामि । अणाचारं परिवज्जामि, आचारं उवसंपज्जामि । उम्मग्गं परिवज्जामि, जिणमग्गं उवसंपज्जामि । अखंतिं परिवज्जामि, खंतिं उवसंपज्जामि । अगुत्तिं परिवज्जामि, गुत्तिं उवसंपज्जामि । अमुत्तिं परिवज्जामि, सुमुत्तिं उवसंपज्जामि । असमाहिं परिवज्जामि, सुसमाहिं उवसंपज्जामि । ममत्तिं परिवज्जामि, णिम्ममत्तिं उवसंपज्जामि । अभावियं भावेमि, भावियं ण भावेमि ।

इमं णिग्गंथं पव्वयणं, अणुत्तरं केवलियं पडिपुण्णं, णेगाइयं, सामाइयं, संसुद्धं, सल्लघट्टाण-सल्लघत्ताणं, सिद्धि-मग्गं, सेढि-मग्गं, खंति-मग्गं, मुत्ति-मग्गं, पमुत्ति-मग्गं, मोक्ख-मग्गं, पमोक्ख-मग्गं, णिज्जाण-मग्गं, णिव्वाण-मग्गं, सव्व-दुक्ख-परिहाणि-मग्गं, सुचरिय-परिणिव्वाण-मग्गं, जत्थ ठिया जीवा, सिज्झंति, बुज्झंति, मुच्चंति, परिणिव्वायंति, सव्व-दुक्खाणमंतं करेंति। तं सद्दहामि, तं पत्तियामि, तं रोचेमि, तं फासेमि, इदो उत्तरं, अण्णं णत्थि, ण भूदं, ण भविस्सदि, णाणेण वा, दंसणेण वा, चरित्तेण वा, सुत्तेण वा, सीलेण वा, गुणेण वा, तवेण वा, णियमेण वा, वदेण वा, [1]विहारेण वा, [2]आलएण वा, अज्जवेण वा, लाहवेण वा, अण्णेण वा, वीरिएण वा, समणोमि, संजदोमि, उवरदोमि, उवसंतोमि, उवहि-णियडि-माण-माया-मोस-मूरण, मिच्छाणाण-मिच्छादंसण-मिच्छाचरित्तं च पडिविरदोमि। सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्तं च रोचेमि। जं जिणवरेहिं पण्णत्तो, जो मए पक्खिय/चउमासिय/संवच्छरिय इरियावहि-केस-लोचाइचारस्स, संथाराविचारस्स, पंथाविचारस्स, सव्वादिचारस्स, उत्तमट्ठस्स सम्मचरित्तं च रोचेमि।

पढमे महव्वदे पाणादिवादादो वेरमणं, उवट्ठावण-मंडले, महत्थे, महागुणे, महाणुभावे, महाजसे, महा-पुरिसाणुचिण्णे, अरहंत-सक्खियं, सिद्ध-सक्खियं, साहु-सक्खियं, अप्प-सक्खियं, पर-सक्खियं, देवता-सक्खियं,

---

१. आचरणेन २. आलपेन-निरवद्याश्रयेण।

उत्तमट्ठम्हि "इमं मे महव्वदं, सुव्वदं, विढव्वदं होदु । णित्थारयं, पारयं, तारयं, आराहियं चावि ते मे भवदु ।"

प्रथमं महाव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां सम्यक्त्व-पूर्वकं, दृढव्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु ॥१॥
प्रथमं महाव्रतं सर्वेषां .... ते मे भवतु ॥२॥
प्रथमं महाव्रतं सर्वेषां .... ते मे भवतु ॥३॥

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं । णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥१॥
णमो अरहंताणं .... णमो लोए सव्वसाहूणं ॥२॥
णमो अरहंताणं .... णमो लोए सव्वसाहूणं ॥३॥

अहावरे विदिए महव्वदे सव्वं भंते ! मुसावादं पच्चक्खामि, जावजीवेण तिविहेण मणसा-वयसा-काएण, से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, रागेण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हासेण वा, भएण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पेम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, अणादरेण वा, अणेण केण वि कारणेण जादेण वा, णेव सयं मोसं भासेज्ज, णो अण्णेहिं मोसं भासाविज्ज, णो अण्णेहिं मोसं भासिज्जंतं वि समणुमणिज्ज । तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं वोस्सरामि ।

पुव्वचिणं भंते ! जं वि मए रागस्स वा, दोसस्स वा, मोहस्स वा, वसंगदेण सयं मोसं भासियं, अण्णेहिं

मोसं भासावियं, अण्णेहिं मोसं भासिज्जंतं वि समणु-मण्णिदो तं वि ।

इमस्स णिग्गंथस्स, पवयणस्स, अणुत्तरस्स, केवलि-यस्स, केवलिपण्णत्तस्स धम्मस्स, अहिंसा - लक्खणस्स, सच्चाहिट्ठियस्स, विणय-मूलस्स, खमा-वलस्स, अट्ठा-रह-सील - सहस्स - परिमंडियस्स, चउरासीदि-गुणसय-सहस्स, विहूसियस्स, णवविह-बंभचेर-गुत्तस्स, णियदि-लक्खणस्स, परिच्चाय-फलस्स, उवसम-पहाणस्स, खंति-मग्ग - देसयस्स, मुत्ति - मग्ग - पयासयस्स, सिद्धि-मग्ग-पज्जव-साहणस्स, से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, अण्णाणेण वा, अदंसणेण वा, अवीरिएण वा, असंजमेण वा, अस्समणेण वा, अणहि-गमणेण वा, अभिमंसिदाए वा, अबोहिदाए वा, रागेण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हासेण वा, भएण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पेम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, अणादरेण वा, अणेण केण वि कारणेण जादेण वा, अलसदाए, वालिसदाए, कम्म-भारिगदाए, कम्म-गुरु-गदाए, कम्म-दुच्चरिदाए, कम्म-पुरुक्कडदाए, ति-गारव-गुरु-गदाए, अबहु-सुदवाए, अविदिद-परमट्ठ-दाए, तं सव्वं पुव्वं दुच्चरियं गरहामि ।

आगमेसिं च अपच्चक्खियं पच्चक्खामि । अणालो-चियं आलोचेमि । अणिंदियं णिंदामि । अगरहियं गरहामि । अपडिक्कंतं पडिक्कमामि । विराहणं वोस्स-रामि, आराहणं अब्भुट्ठेमि । अण्णाणं वोस्सरामि, सण्णाणं अब्भुट्ठेमि । कुदंसणं वोस्सरामि, सम्मदंसणं

अब्भुट्ठेमि। कुचरियं वोस्सरामि, सुचरियं अब्भुट्ठेमि। कुतवं वोस्सरामि, सुतवं अब्भुट्ठेमि। अकरणिज्जं वोस्सरामि, करणिज्जं अब्भुट्ठेमि। अकिरियं वोस्सरामि, किरियं अब्भुट्ठेमि। पाणादिवादं वोस्सरामि, अभयदाणं अब्भुट्ठेमि। मोसं वोस्सरामि, सच्चं अब्भुट्ठेमि। अदिण्णादाणं वोस्सरामि, दिण्णं कप्पणिज्जं अब्भुट्ठेमि। अबंभं वोस्सरामि, बंभचरियं अब्भुट्ठेमि। परिग्गहं वोस्सरामि, अपरिग्गहं अब्भुट्ठेमि। राइभोयणं वोस्सरामि, दिवाभोयणं अब्भुट्ठेमि। अणेयभत्तं वोस्सरामि, एगभत्तं पच्चुप्पणं फासुगं अब्भुट्ठेमि। अट्ट-रुद्द-ज्झाणं वोस्सरामि, धम्म-सुक्क-ज्झाणं अब्भुट्ठेमि। किण्ह-णील-काउ-लेस्सं वोस्सरामि, तेउ-पम्म-सुक्क-लेस्सं अब्भुट्ठेमि। आरंभं वोस्सरामि, अणारंभं अब्भुट्ठेमि। असंजमं वोस्सरामि, संजमं अब्भुट्ठेमि। सग्गंथं वोस्सरामि, णिग्गंथं अब्भुट्ठेमि। सचेलं वोस्सरामि, अचेलं अब्भुट्ठेमि। अलोचं वोस्सरामि, लोचं अब्भुट्ठेमि। ण्हाणं वोस्सरामि, अण्हाणं अब्भुट्ठेमि। अखिदि-सयणं वोस्सरामि, खिदि-सयणं अब्भुट्ठेमि। दंतवणं वोस्सरामि, अदंतवणं अब्भुट्ठेमि। अट्ठिदि-भोयणं वोस्सरामि, ठिदि-भोयण-मेय-भत्तं अब्भुट्ठेमि। अपाणिपत्तं वोस्सरामि, पाणि-पत्तं अब्भुट्ठेमि। कोहं वोस्सरामि, खंतिं अब्भुट्ठेमि। माणं वोस्सरामि, मद्दवं अब्भुट्ठेमि। मायं वोस्सरामि, अज्जवं अब्भुट्ठेमि। लोहं वोस्सरामि, संतोसं अब्भुट्ठेमि। अतवं वोस्सरामि, दुवादसविह-तवो-कम्मं

अब्भुट्ठेमि ।

मिच्छत्तं परिवज्जामि, सम्मत्तं उवसंपज्जामि । असीलं परिवज्जामि, सुसीलं उवसंपज्जामि । ससल्लं परिवज्जामि, णिसल्लं उवसंपज्जामि । अविणयं परिवज्जामि, विणयं उवसंपज्जामि । अणाचारं परिवज्जामि, आचारं उवसंपज्जामि । उम्मग्गं परिवज्जामि, जिणमग्गं उवसंपज्जामि । अखंतिं परिवज्जामि, खंतिं उवसंपज्जामि । अगुत्तिं परिवज्जामि, गुत्तिं उवसंपज्जामि । अमुत्तिं परिवज्जामि, सुमुत्तिं उवसंपज्जामि । असमाहिं परिवज्जामि, सुसमाहिं उवसंपज्जामि । ममत्तिं परिवज्जामि, णिम्ममत्तिं उवसंपज्जामि । अभावियं भावेमि, भावियं ण भावेमि ।

इमं णिग्गंथं पव्वयणं, अणुत्तरं केवलियं पडिपुण्णं, णेगाइयं, सामाइयं, संसुद्धं, सल्लघट्टाण-सल्लघत्ताणं, सिद्धि-मग्गं, सेढि-मग्गं, खंति-मग्गं, मुत्ति-मग्गं, पमुत्ति-मग्गं, मोक्ख-मग्गं, पमोक्ख-मग्गं, णिज्जाण-मग्गं, णिव्वाण-मग्गं, सव्व-दुक्ख-परिहाणि-मग्गं, सुचरिय-परिणिव्वाण-मग्गं, जत्थ ठिया जीवा, सिज्झंति, बुज्झंति, मुच्चंति, परिणिव्वायंति, सव्व-दुक्खाणमंतं करेंति । तं सद्दहामि, तं पत्तियामि, तं रोचेमि, तं फासेमि, इदो उत्तरं, अण्णं णत्थि, ण भूदं, ण भविस्सदि, णाणेण वा, दंसणेण वा, चरित्तेण वा, सुत्तेण वा, सीलेण वा, गुणेण वा, तवेण वा, णियमेण वा, वदेण वा, विहारेण वा, आलएण वा, अज्जवेण वा, लाहवेण वा, अण्णेण वा, वीरिएण वा, समणोमि, संजदोमि, उवरदोमि, उव-

संतोमि, उवहि-णियडि-माण-माया-मोस-मूरण, मिच्छा-णाण-मिच्छादंसण-मिच्छाचरित्तं च पडिविरदोमि। सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्तं च रोचेमि। जं जिणवरेहिं पण्णत्तो, जो मए पक्खिय/चउमासिय/संवच्छरिय इरियावहि-केस-लोचाइचारस्स, संथाराबिचारस्स, पंथादिचारस्स, सव्वादिचारस्स, उत्तमट्ठस्स सम्मचरित्तं च रोचेमि।

विदिए महव्वदे मुसावादादो वेरमणं उवट्ठावण-मंडले, महत्थे, महागुणे, महाणुभावे, महाजसे, महापुरिसाणुचिण्णे, अरहंत-सक्खियं, सिद्ध-सक्खियं, साहु-सक्खियं, अप्प-सक्खियं, पर-सक्खियं, देवता-सक्खियं, उत्तमट्ठम्हि "इमं मे महव्वदं, सुव्वदं, दिढव्वदं होदु। णित्थारयं, पारयं, तारयं, आराहियं चावि ते मे भवदु"।

द्वितीयं महाव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां सम्यक्त्व-पूर्वकं, दृढव्रतं, सुव्रतं समारूढं ते मे भवतु ॥१॥
द्वितीयं महाव्रतं सर्वेषां .... ते मे भवतु ॥२॥
द्वितीयं महाव्रतं सर्वेषां .... ते मे भवतु ॥३॥

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥१॥
णमो अरहंताणं .... णमो लोए सव्वसाहूणं ॥२॥
णमो अरहंताणं .... णमो लोए सव्वसाहूणं ॥३॥

अहावरे तदिए महव्वदे सव्वं भंते! अदिण्णादाणं पच्चक्खामि जावजीवं, तिविहेण मणसा-वयसा-काएण,

से देसे वा, गामे वा, णयरे वा, खेडे वा, कव्वडे वा, मडंवे वा, मंडले वा, पट्टणे वा, दोणमुहे वा, घोसे वा, आसणे वा, सहाए वा, संवाहे वा, सण्णिवेसे वा, तिणं वा, कट्ठं वा, वियडिं वा, मट्टियं वा, खेत्ते वा, खले वा, जले वा, थले वा, पहे वा, उप्पहे वा, रण्णे वा, अरण्णे वा, णट्ठं वा, पमुट्ठं वा, पडिदं वा, अपडिदं वा, सुणिहिदं वा, दुणिहिदं वा, अप्पं वा, बहुं वा, अणुयं वा, थूलं वा, सचित्तं वा, अचित्तं वा, मज्झत्थं वा, बहित्थं वा, अवि दंतंतर-सोहण-णिमित्तं, वि णेव सयं अदत्तं गेण्हिज्ज, णो अण्णेहिं अदत्तं गेण्हाविज्ज, णो अण्णेहिं अदत्तं गेण्हिज्जंतं वि समणुमणिज्ज, तस्स भंते ! अइचारं, पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं वोस्सरामि ।

पुव्वचिणं भंते ! जं वि मए रागस्स वा, दोसस्स वा, मोहस्स वा, वसंगदेण, सयं अदत्तं गेण्हिदं, अण्णेहिं अदत्तं गेण्हाविदं, अण्णेहिं अदत्तं गेण्हिज्जंतं, वि समणुमण्णिदो तं वि ।

इमस्स णिग्गंथस्स, पवयणस्स, अणुत्तरस्स, केवलियस्स, केवलिपण्णत्तस्स धम्मस्स, अहिंसा-लक्खणस्स, सच्चाहिट्ठियस्स, विणय-मूलस्स, खमा-बलस्स, अट्ठारह-सील-सहस्स-परिमंडियस्स, चउरासीदि-गुणसय-सहस्स, विहूसियस्स, णवविह-बंभचेर-गुत्तस्स, णियदि-लक्खणस्स, परिच्चाय-फलस्स, उवसम-पहाणस्स, खंति-मग्ग-देसयस्स, मुत्ति-मग्ग-पयासयस्स, सिद्धि-मग्ग-पज्जव-साहणस्स, से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए

वा, लोहेण वा, अण्णाणेण वा, अदंसणेण वा, अवीरिएण वा, असंजमेण वा, अस्समणेण वा, अणहि-गमणेण वा, अभिमंसिदाए वा, अबोहिदाए वा, रागेण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हासेण वा, भएण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पेम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, अणादरेण वा, अणेण केण वि कारणेण जादेण वा, अलसदाए, वालिसदाए, कम्म-भारिगदाए, कम्म-गुरु-गदाए, कम्म-दुच्चरिदाए, कम्म-पुरुक्कडदाए, ति-गारव-गुरु-गदाए, अबहु-सुददाए, अविविद-परमट्ठ-दाए, तं सव्वं पुव्वं दुच्चरियं गरहामि ।

आगमेसिं च अपच्चक्खियं पच्चक्खामि । अणालोचियं आलोचेमि । अणिंदियं णिंदामि । अगरहियं गरहामि । अपडिक्कंतं पडिक्कमामि । विराहणं वोस्सरामि, आराहणं अब्भुट्ठेमि । अण्णाणं वोस्सरामि, सण्णाणं अब्भुट्ठेमि । कुदंसणं वोस्सरामि, सम्मदंसणं अब्भुट्ठेमि । कुचरियं वोस्सरामि, सुचरियं अब्भुट्ठेमि । कुतवं वोस्सरामि, सुतवं अब्भुट्ठेमि । अकरणिज्जं वोस्सरामि, करणिज्जं अब्भुट्ठेमि । अकिरियं वोस्सरामि, किरियं अब्भुट्ठेमि । पाणादिवादं वोस्सरामि, अभयदाणं अब्भुट्ठेमि । मोसं वोस्सरामि, सच्चं अब्भुट्ठेमि । अदिण्णादाणं वोस्सरामि, दिण्णं कप्पणिज्जं अब्भुट्ठेमि । अबंभं वोस्सरामि, बंभचरियं अब्भुट्ठेमि । परिग्गहं वोस्सरामि, अपरिग्गहं अब्भुट्ठेमि । राइभोयणं वोस्सरामि, दिवाभोयणं अब्भुट्ठेमि । अणेयभत्तं वोस्सरामि, एगभत्तं पच्चुप्पणं फासुगं अब्भु-

ट्ठेमि। अट्ट - रुद्द - ज्झाणं वोस्सरामि, धम्म-सुक्क-ज्झाणं अब्भुट्ठेमि। किण्ह-णील-काउ-लेस्सं वोस्सरामि, तेउ - पम्म - सुक्क - लेस्सं अब्भुट्ठेमि। आरंभं वोस्सरामि, अणारंभं अब्भुट्ठेमि। असंजमं वोस्सरामि, संजमं अब्भुट्ठेमि। सग्गंथं वोस्सरामि,णिग्गंथं अब्भुट्ठेमि। सचेलं वोस्सरामि, अचेलं अब्भुट्ठेमि। अलोचं वोस्सरामि, लोचं अब्भुट्ठेमि। ण्हाणं वोस्सरामि, अण्हाणं अब्भुट्ठेमि। अखिदि-सयणं वोस्सरामि, खिदि-सयणं अब्भुट्ठेमि। दंतवणं वोस्सरामि, अदंतवणं अब्भुट्ठेमि। अट्ठिदि-भोयणं वोस्सरामि, ठिदि - भोयण - मेय - भत्तं अब्भुट्ठेमि। अपाणिपत्तं वोस्सरामि, पाणि-पत्तं अब्भुट्ठेमि। कोहं वोस्सरामि, खंतिं अब्भुट्ठेमि। माणं वोस्सरामि, मद्दवं अब्भुट्ठेमि। मायं वोस्सरामि, अज्जवं अब्भुट्ठेमि। लोहं वोस्सरामि, संतोसं अब्भुट्ठेमि। अतवं वोस्सरामि, दुवादसविह - तवो - कम्मं अब्भुट्ठेमि।

मिच्छत्तं परिवज्जामि, सम्मत्तं उवसंपज्जामि। असीलं परिवज्जामि, सुसीलं उवसंपज्जामि। ससल्लं परिवज्जामि, णिसल्लं उवसंपज्जामि। अविणयं परिवज्जामि, विणयं उवसंपज्जामि। अणाचारं परिवज्जामि, आचारं उवसंपज्जामि। उम्मग्गं परिवज्जामि, जिणमग्गं उवसंपज्जामि। अखंतिं परिवज्जामि, खंतिं उवसंपज्जामि। अगुत्तिं परिवज्जामि, गुत्तिं उवसंपज्जामि। अमुत्तिं परिवज्जामि, सुमुत्तिं उवसंपज्जामि। असमाहिं परिवज्जामि, सुसमाहिं उवसंपज्जामि।

ममत्ति परिवज्जामि, णिम्ममत्ति उवसंपज्जामि। अभावियं भावेमि, भावियं ण भावेमि।

इमं णिग्गंथं पव्वयणं, अणुत्तरं केवलियं पडिपुण्णं, णेयाइयं, सामाइयं, संसुद्धं, सल्लघट्टाण-सल्लघत्ताणं, सिद्धि-मग्गं, सेढि-मग्गं, खंति-मग्गं, मुत्ति-मग्गं, पमुत्ति-मग्गं, मोक्ख-मग्गं, पमोक्ख-मग्गं, णिज्जाण-मग्गं, णिव्वाण-मग्गं, सव्व-दुक्ख-परिहाणि-मग्गं, सुचरिय-परिणिव्वाण-मग्गं, जत्थ ठिया जीवा, सिज्झंति, बुज्झंति, मुच्चंति, परिणिव्वायंति, सव्व-दुक्खाणमंतं करेंति। तं सद्दहामि, तं पत्तियामि, तं रोचेमि, तं फासेमि, इदो उत्तरं, अण्णं णत्थि, ण भूदं, ण भविस्सदि, णाणेण वा, दंसणेण वा, चरित्तेण वा, सुत्तेण वा, सीलेण वा, गुणेण वा, तवेण वा, णियमेण वा, वदेण वा, विहारेण वा, आलएण वा, अज्जवेण वा, लाहवेण वा, अण्णेण वा, वीरिएण वा, समणोमि, संजदोमि, उवरदोमि, उवसंतोमि, उवहि-णियडि-माण-माया-मोस-मूरण-मिच्छा-णाण-मिच्छादंसण-मिच्छाचरित्तं च पडिविरदोमि। सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्तं च रोचेमि। जं जिणवरेहिं पण्णत्तो, जो मए पक्खिय / चउमासिय / संवच्छरिय इरियावहि-केस-लोचाइचारस्स, संथारादि-चारस्स, पंथादिचारस्स, सव्वादिचारस्स, उत्तमट्ठस्स सम्मचरित्तं च रोचेमि।

तिदिए महव्वदे अदिण्णा-दाणादो वेरमणं उवट्ठा-वणमंडले, महत्थे, महागुणे, महाणुभावे, महाजसे, महा-पुरिसाणुचिण्णे, अरहंत-सक्खियं, सिद्ध-सक्खियं, साहु-

सक्खियं, अप्प-सक्खियं, पर-सक्खियं, देवता-सक्खियं, उत्तमट्ठम्हि "इमं मे महव्वदं, सुव्वदं, दिढव्वदं होदु। णित्थारयं, पारयं, तारयं, आराहियं चावि ते मे भवदु"।

तृतीयं महाव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां सम्यक्त्व-पूर्वकं, दृढव्रतं, सुव्रतं समारूढं ते मे भवतु ॥१॥
तृतीयं महाव्रतं सर्वेषां............ ते मे भवतु ॥२॥
तृतीयं महाव्रतं सर्वेषां............ ते मे भवतु ॥३॥
णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥१॥
णमो अरहंताणं......... णमो लोए सव्वसाहूणं ॥२॥
णमो अरहंताणं......... णमो लोए सव्वसाहूणं ॥३॥

अहावरे चउत्थे महव्वदे सव्वं भंते! अबंभं पच्च-क्खामि जावजीवं तिविहेण मणसा-वचसा-काएण, से देविएसु वा, माणुसिएसु वा, तिरिच्छिएसु वा, अचेयणि-एसु वा, कट्ठ-कम्मेसु वा, चित्त-कम्मेसु वा, पोत्त-कम्मेसु वा, लेप्प-कम्मेसु वा, लय-कम्मेसु वा, सिला-कम्मेसु वा, गिह-कम्मेसु वा, भित्ति-कम्मेसु वा, भेद-कम्मेसु वा, भंड-कम्मेसु वा, धादु-कम्मेसु वा, दंत-कम्मेसु वा, हत्थ-संघट्टणदाए, पाद-संघट्टणदाए, पुग्गल-संघट्टणदाए, मणुण्णामणुण्णेसु सद्देसु, मणुण्णामणुण्णेसु रूवेसु, मणुण्णा-मणुण्णेसु गंधेसु, मणुण्णामणुण्णेसु रसेसु, मणुण्णामणुण्णेसु फासेसु, सोदिंदिय-परिणामे, चक्खिंदिय-परिणामे, घाणिंदिय-परिणामे, जिब्भिंदिय-परिणामे, फासिंदिय-

परिणामे, णो-इंदिय-परिणामे, अगुत्तेण, अगुत्तिविएण, णेव सयं अबंभं सेविज्ज, णो अण्णेहिं अबंभं सेवाविज्ज, णो अण्णेहिं अबंभ सेविज्जंतं वि समणुमणिज्ज, तस्स भंते ! अइयारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं वोस्सरामि ।

पुव्वचिणं भंते ! जं वि मए रागस्स वा, दोसस्स वा, मोहस्स वा, वसंगदेण, सयं अबंभं सेवियं, अण्णेहिं अबंभं सेवावियं, अण्णेहिं अबंभं सेविज्जंतं वि समणुमण्णिदं तं वि ।

इमस्स णिग्गंथस्स, पवयणस्स, अणुत्तरस्स, केवलियस्स, केवलिपण्णत्तस्स धम्मस्स, अहिंसा-लक्खणस्स, सच्चाहिट्ठियस्स, विणय-मूलस्स, खमा-बलस्स, अट्ठारह-सील-सहस्स-परिमंडियस्स, चउरासीदि-गुणसय-सहस्स, विहूसियस्स, णवविह-बंभचेर-गुत्तस्स, णियदि-लक्खणस्स, परिच्चाय-फलस्स, उवसम-पहाणस्स, खंति-मग्ग-देसयस्स, मुत्ति-मग्ग-पयासयस्स, सिद्धि-मग्ग-पज्जव-साहणस्स, से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, अण्णाणेण वा, अदंसणेण वा, अवीरिएण वा, असंजमेण वा, अस्समणेण वा, अणहि-गमणेण वा, अभिमंसिदाए वा, अबोहिदाए वा, रागेण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हासेण वा, भएण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पेम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, अणादरेण वा, अणेण केण वि कारणेण जादेण वा, अलसदाए, वालिसदाए, कम्म-भारिगदाए, कम्म-गुरु-गदाए, कम्म-दुच्चरिदाए, कम्म-पुरुक्कडदाए,

ति-गारव-गुरु-गदाए, अबहु-सुदाए, अविदिद-परमट्ठ-दाए, तं सव्वं पुव्वं दुच्चरियं गरहामि ।

आगमेसिं च अपच्चक्खियं पच्चक्खामि । अणालोचियं आलोचेमि । अणिंदियं णिंदामि । अगरहियं गरहामि । अपडिक्कंतं पडिक्कमामि । विराहणं वोस्सरामि, आराहणं अब्भुट्ठेमि । अण्णाणं वोस्सरामि, सण्णाणं अब्भुट्ठेमि । कुदंसणं वोस्सरामि, सम्मदंसणं अब्भुट्ठेमि। कुचरियं वोस्सरामि, सुचरियं अब्भुट्ठेमि। कुतवं वोस्सरामि, सुतवं अब्भुट्ठेमि । अकरणिज्जं वोस्सरामि, करणिज्जं अब्भुट्ठेमि । अकिरियं वोस्सरामि, किरियं अब्भुट्ठेमि । पाणादिवादं वोस्सरामि, अभयदाणं अब्भुट्ठेमि । मोसं वोस्सरामि, सच्चं अब्भुट्ठेमि । अदिण्णादाणं वोस्सरामि, दिण्णं कप्पणिज्जं अब्भुट्ठेमि । अबंभं वोस्सरामि, बंभचरियं अब्भुट्ठेमि । परिग्गहं वोस्सरामि, अपरिग्गहं अब्भुट्ठेमि । राइभोयणं वोस्सरामि,दिवाभोयणं अब्भुट्ठेमि । अणेयभत्तं वोस्सरामि, एगभत्तं पच्चुप्पणं फासुगं अब्भुट्ठेमि । अट्ट - रुद्द - ज्झाणं वोस्सरामि, धम्म-सुक्क-ज्झाणं अब्भुट्ठेमि । किण्ह-णील-काउ-लेस्सं वोस्सरामि, तेउ - पम्म - सुक्क - लेस्सं अब्भुट्ठेमि । आरंभं वोस्सरामि, अणारंभं अब्भुट्ठेमि । असंजमं वोस्सरामि, संजमं अब्भुट्ठेमि । सग्गंथं वोस्सरामि, णिग्गंथं अब्भुट्ठेमि । सचेलं वोस्सरामि, अचेलं अब्भुट्ठेमि। अलोचं वोस्सरामि, लोचं अब्भुट्ठेमि । ण्हाणं वोस्सरामि, अण्हाणं अब्भुट्ठेमि । अखिदि-सयणं वोस्सरामि, खिदि-

सयणं अब्भुट्ठेमि। दंतवणं वोस्सरामि, अदंतवणं अब्भुट्ठेमि। अट्ठिदि-भोयणं वोस्सरामि, ठिदि-भोयण-मेग-भत्तं अब्भुट्ठेमि। अपाणिपत्तं वोस्सरामि, पाणि-पत्तं अब्भुट्ठेमि। कोहं वोस्सरामि, खंति अब्भुट्ठेमि। माणं वोस्सरामि, मद्दवं अब्भुट्ठेमि। मायं वोस्सरामि, अज्जवं अब्भुट्ठेमि। लोहं वोस्सरामि, संतोसं अब्भुट्ठेमि। अतवं वोस्सरामि, दुवादसविह-तवो-कम्मं अब्भुट्ठेमि।

मिच्छत्तं परिवज्जामि, सम्मत्तं उवसंपज्जामि। असीलं परिवज्जामि, सुसीलं उवसंपज्जामि। ससल्लं परिवज्जामि, णिसल्लं उवसंपज्जामि। अविणयं परिवज्जामि, विणयं उवसंपज्जामि। अणाचारं परिवज्जामि, आचारं उवसंपज्जामि। उम्मग्गं परिवज्जामि, जिणमग्गं उवसंपज्जामि। अखंति परिवज्जामि, खंति उवसंपज्जामि। अगुत्ति परिवज्जामि, गुत्ति उवसंपज्जामि। अमुत्ति परिवज्जामि, सुमुत्ति उवसंपज्जामि। असमाहिं परिवज्जामि, सुसमाहिं उवसंपज्जामि। ममत्ति परिवज्जामि, णिम्ममत्ति उवसंपज्जामि। अभावियं भावेमि, भावियं ण भावेमि।

इमं णिग्गंथं पव्वयणं, अणुत्तरं, केवलियं पडिपुण्णं, णेयाइयं, सामाइयं, संसुद्धं, सल्लघट्टाण-सल्लघत्ताणं, सिद्धि-मग्गं, सेढि-मग्गं, खंति-मग्गं, मुत्ति-मग्गं, पमुत्ति-मग्गं, मोक्ख-मग्गं, पमोक्ख-मग्गं, णिज्जाण-मग्गं, णिव्वाण-मग्गं, सव्व-दुक्ख-परिहाणि-मग्गं, सुचरिय-परिणिव्वाण-मग्गं, जत्थ ठिया जीवा, सिज्झंति,

बुज्झंति, मुच्चंति, परिणिव्वायंति, सव्व-दुक्खाणमंतं करेंति । तं सद्दहामि, तं पत्तियामि, तं रोचेमि, तं फासेमि, इदो उत्तरं, अण्णं णत्थि, ण भूदं, ण भविस्सदि, णाणेण वा, दंसणेण वा, चरित्तेण वा, सुत्तेण वा, सीलेण वा, गुणेण वा, तवेण वा, णियमेण वा, वदेण वा, विहारेण वा, आलएण वा, अज्जवेण वा, लाहवेण वा, अण्णेण वा, वीरिएण वा, समणोमि, संजदोमि, उवरदोमि, उवसंतोमि, उवहि - णियडि - माण-माया-मोस-मूरण, मिच्छाणाण-मिच्छादंसण-मिच्छाचरित्तं च पडिविरदोमि । सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्तं च रोचेमि । जं जिणवरेहिं पण्णत्तो, जो मए पक्खिय/चउमासिय/संवच्छरिय इरियावहि-केस-लोचाइचारस्स, संथारादिचारस्स, पंथादिचारस्स, सव्वादिचारस्स, उत्तमट्ठस्स सम्मचरित्तं च रोचेमि ।

चउत्थे महव्वदे अबंभादो वेरमणं, उवट्ठावण-मंडले, महत्थे, महागुणे, महाणुभावे, महाजसे, महा-पुरिसाणुचिण्णे, अरहंत-सक्खियं, सिद्ध-सक्खियं, साहु-सक्खियं, अप्प-सक्खियं, पर-सक्खियं, देवता-सक्खियं, उत्तमट्ठम्हि "इमं मे महव्वदं, सुव्वदं, विढव्वदं होदु । णित्थारयं, पारयं, तारयं, आराहियं चावि ते मे भवदु ।"

चतुर्थं महाव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां सम्यक्त्व-पूर्वकं, दृढव्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु ॥१॥
चतुर्थं महाव्रतं सर्वेषां ………… ………ते मे भवतु ॥२॥
चतुर्थं महाव्रतं सर्वेषां …… …………………ते मे भवतु ॥३॥

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥१॥
णमो अरहंताणं .... णमो लोए सव्वसाहूणं ॥२॥
णमो अरहंताणं .... णमो लोए सव्वसाहूणं ॥३॥

अहावरे पंचमे महव्वदे सव्वं भंते ! दुविहं परिग्गहं पच्चक्खामि । तिविहेण मणसा वयसा काएण । सो परिग्गहो दुविहो अब्भंतरो बाहिरो चेदि । तत्थ अब्भंतरं परिग्गहं–

मिच्छत्त-वेय-राया तहेव हासादिया य छद्दोसा ।
चत्तारि तह कसाया चउदस अब्भंतरं गंथा ॥१॥

तत्थ बाहिरं परिग्गहं से हिरण्णं वा, सुवण्णं वा, धणं वा, खेत्तं वा, खलं वा, वत्थुं वा, पवत्थुं वा, कोसं वा, कुठारं वा, पुरं वा, अंतउरं वा, बलं वा, वाहणं वा, सयडं वा, जाणं वा, जंपाणं वा, जुगं वा, गद्दियं वा, रहं वा, संदणं वा, सिवियं वा, दासी-दास-गो-महिस-गवेडयं, मणि-मोत्तिय-संख-सिप्पि-पवालयं, मणिभाजणं वा, सुवण्णभाजणं वा, रजदभाजणं वा, कंसभाजणं वा, लोहभाजणं वा, तंबभाजणं वा, अंडजं वा, वोंडजं वा, रोमजं वा, वक्कलजं वा, चम्मजं वा, अप्पं वा, बहुं वा, अणुयं वा, थूलं वा, सचित्तं वा, अचित्तं वा, मज्झत्थं वा, बहित्थं वा, अवि-वालग्ग-कोडि-मित्तं पि णेव सयं असमण-पाउग्गं परिग्गहं गिण्हिज्ज, णो अण्णेहिं असमण-पाउग्गं परिग्गहं गेण्हाविज्ज, णो अण्णेहिं असमण-पाउग्गं परिग्गहं गिण्हज्जंतं वि समणुमणिज्ज, तस्स

भंते ! अइयारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं वोस्सरामि ।

पुव्वचिणं भंते ! जं वि मए रागस्स वा, दोसस्स वा, मोहस्स वा, वसंगदेण सयं, असमण-पाउग्गं परिग्गहं गिण्हियं, अण्णेहिं असमण-पाउग्गं परिग्गहं गेण्हावियं, अण्णेहिं असमण-पाउग्गं परिग्गहं गेण्हिज्जंतं वि समणुमण्णिदं तं वि ।

इमस्स णिग्गंथस्स, पवयणस्स, अणुत्तरस्स, केवलियस्स, केवलिपण्णत्तस्स धम्मस्स, अहिंसा-लक्खणस्स, सच्चाहिट्ठियस्स, विणय-मूलस्स, खमा-बलस्स, अट्ठारह-सील-सहस्स-परिमंडियस्स, चउरासीदि-गुणसय-सहस्स, विहूसियस्स, णवविह-बंभचेर-गुत्तस्स, णियदि-लक्खणस्स, परिच्चाय-फलस्स, उवसम-पहाणस्स, खंति-मग्ग-देसयस्स, मुत्ति-मग्ग-पयासयस्स, सिद्धि-मग्ग-पज्जव-साहणस्स, से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, अण्णाणेण वा, अदंसणेण वा, अवीरिएण वा, असंजमेण वा, अस्समणेण वा, अणाहि-गमणेण वा, अभिमंसिदाए वा, अबोहिदाए वा, रागेण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हासेण वा, भएण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पेम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, अणादरेण वा, अणेण केण वि कारणेण जावेण वा, अलसदाए, वालिसदाए, कम्म-भारिगदाए, कम्म-गुरु-गदाए, कम्म-दुच्चरिदाए, कम्म-पुरुक्कडदाए, ति-गारव-गुरु-गदाए, अबहु-सुददाए, अविदिद-परमट्ठ-दाए, तं सव्वं पुव्वं दुच्चरियं गरहामि ।

आगमेसिं च अपच्चक्खियं पच्चक्खामि । अणालोचियं आलोचेमि । अणिंदियं णिंदामि । अगरहियं गरहामि । अपडिक्कंतं पडिक्कमामि । विराहणं वोस्सरामि, आराहणं अब्भुट्ठेमि । अण्णाणं वोस्सरामि, सण्णाणं अब्भुट्ठेमि । कुदंसणं वोस्सरामि, सम्मदंसणं अब्भुट्ठेमि । कुचरियं वोस्सरामि, सुचरियं अब्भुट्ठेमि । कुतवं वोस्सरामि, सुतवं अब्भुट्ठेमि । अकरणिज्जं वोस्सरामि, करणिज्जं अब्भुट्ठेमि । अकिरियं वोस्सरामि, किरियं अब्भुट्ठेमि । पाणादिवादं वोस्सरामि, अभयदाणं अब्भुट्ठेमि । मोसं वोस्सरामि, सच्चं अब्भुट्ठेमि । अदिण्णादाणं वोस्सरामि, दिण्णं कप्पणिज्जं अब्भुट्ठेमि । अबंभं वोस्सरामि, बंभचरियं अब्भुट्ठेमि । परिग्गहं वोस्सरामि, अपरिग्गहं अब्भुट्ठेमि । राइभोयणं वोस्सरामि, दिवाभोयणं अब्भुट्ठेमि । अणेयभत्तं वोस्सरामि, एगभत्तं पच्चुप्पणं फासुगं अब्भुट्ठेमि । अट्ट - रुद्द - ज्झाणं वोस्सरामि, धम्म-सुक्क-ज्झाणं अब्भुट्ठेमि । किण्ह-णील-काउ-लेस्सं वोस्सरामि, तेउ - पम्म - सुक्क - लेस्सं अब्भुट्ठेमि । आरंभं वोस्सरामि, अणारंभं अब्भुट्ठेमि । असंजमं वोस्सरामि, संजमं अब्भुट्ठेमि । सग्गंथं वोस्सरामि, णिग्गंथं अब्भुट्ठेमि । सचेलं वोस्सरामि, अचेलं अब्भुट्ठेमि । अलोचं वोस्सरामि, लोचं अब्भुट्ठेमि । ण्हाणं वोस्सरामि, अण्हाणं अब्भुट्ठेमि । अखिदि-सयणं वोस्सरामि, खिदि-सयणं अब्भुट्ठेमि । दंतवणं वोस्सरामि, अदंतवणं अब्भुट्ठेमि । अट्ठिदि-भोयणं वोस्सरामि, ठिदि-भोयण-मेग-

भत्तं अब्भुट्ठेमि । अपाणिपत्तं वोस्सरामि, पाणि-पत्तं अब्भुट्ठेमि । कोहं वोस्सरामि, खंतिं अब्भुट्ठेमि । माणं वोस्सरामि, मद्दवं अब्भुट्ठेमि । मायं वोस्सरामि, अज्जवं अब्भुट्ठेमि । लोहं वोस्सरामि, संतोसं अब्भुट्ठेमि । अतवं वोस्सरामि, दुवादसविह-तवो-कम्मं अब्भुट्ठेमि ।

मिच्छत्तं परिवज्जामि, सम्मत्तं उवसंपज्जामि । असीलं परिवज्जामि, सुसीलं उवसंपज्जामि । ससल्लं परिवज्जामि, णिसल्लं उवसंपज्जामि । अविणयं परिवज्जामि, विणयं उवसंपज्जामि । अणाचारं परिवज्जामि, आचारं उवसंपज्जामि । उम्मग्गं परिवज्जामि, जिणमग्गं उवसंपज्जामि । अखंतिं परिवज्जामि, खंतिं उवसंपज्जामि । अगुत्तिं परिवज्जामि, गुत्तिं उवसंपज्जामि । अमुत्तिं परिवज्जामि, सुमुत्तिं उवसंपज्जामि । असमाहिं परिवज्जामि, सुसमाहिं उवसंपज्जामि । ममत्तिं परिवज्जामि, णिम्ममत्तिं उवसंपज्जामि । अभावियं भावेमि, भावियं ण भावेमि ।

इमं णिग्गंथं पव्वयणं, अणुत्तरं, केवलियं पडिपुण्णं, णेयाइयं, सामाइयं, संसुद्धं, सल्लघट्टाण-सल्लघत्ताणं, सिद्धि-मग्गं, सेढि-मग्गं, खंति-मग्गं, मुत्ति-मग्गं, पमुत्ति-मग्गं, मोक्ख-मग्गं, पमोक्ख-मग्गं, णिज्जाण-मग्गं, णिव्वाण-मग्गं, सव्व-दुक्ख-परिहाणि-मग्गं, सुचरिय-परिणिव्वाण-मग्गं, जत्थ ठिया जीवा, सिज्झंति, बुज्झंति, मुच्चंति, परिणिव्वायंति, सव्व-दुक्खाणमंतं करेंति । तं सद्दहामि, तं पत्तियामि, तं रोचेमि, तं

फासेमि, इदो उत्तरं, अण्णं णत्थि, ण भूदं, ण भविस्सदि, णाणेण वा, दंसणेण वा, चरित्तेण वा, सुत्तेण वा, सीलेण वा, गुणेण वा, तवेण वा, णियमेण वा, वदेण वा, विहारेण वा, आलएण वा, अज्जवेण वा, लाहवेण वा, अण्णेण वा, वीरिएण वा, समणोमि, संजदोमि, उवरदोमि, उवसंतोमि, उवहि-णियडि-माण-माया-मोस-मूरण, मिच्छाणाण-मिच्छादंसण-मिच्छाचरित्तं च पडिविरदोमि । सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्तं च रोचेमि । जं जिणवरेहिं पण्णत्तो, जो मए पक्खिय/चउमासिय/संवच्छरिय इरियावहि-केसलोचाइचारस्स, संथारादिचारस्स, पंथादिचारस्स, सव्वादिचारस्स, उत्तमट्ठस्स सम्मचरित्तं च रोचेमि ।

पंचमे महव्वदे परिग्गहादो वेरमणं, उवट्ठावण-मंडले, महत्थे, महागुणे, महाणुभावे, महाजसे, महा-पुरिसाणुचिण्णे, अरहंत-सक्खियं, सिद्ध-सक्खियं, साहु-सक्खियं, अप्प-सक्खियं, पर-सक्खियं, देवता-सक्खियं, उत्तमट्ठम्हि "इमं मे महव्वदं, सुव्वदं, दिढव्वदं होदु । णित्थारयं, पारयं, तारयं, आराहियं चावि ते मे भवदु ।"

पंचमं महाव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां सम्यक्त्व-पूर्वकं, दृढव्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु ॥१॥
पंचमं महाव्रतं सर्वेषां .... ते मे भवतु ॥२॥
पंचमं महाव्रतं सर्वेषां .... ते मे भवतु ॥३॥
णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥१॥

णमो अरहंताणं ………… णमो लोए सव्वसाहूणं ॥२॥

णमो अरहंताणं ………… णमो लोए सव्वसाहूणं ॥३॥

अहावरे छट्ठे अणुव्वदे सव्वं भंते ! राइ-भोयणं पच्चक्खामि जावजीवं तिविहेण मणसा वयसा काएण, से असणं वा, पाणं वा, खादियं वा, सादियं वा, कडुयं वा, कसायं वा, आमिलं वा, महुरं वा, लवणं वा, अलवणं वा, सचित्तं वा, अचित्तं वा, तं सव्वं चउव्विहं आहारं, णेव सयं रत्ति भुंजिज्ज, णो अण्णेहिं रत्ति भुंजाविज्ज, णो अण्णेहिं रत्ति भुंजिज्जंतं वि समणुमणिज्ज, तस्स भंते ! अइयारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं वोस्सरामि ।

पुव्वचिणं भंते ! जं वि मए रायस्स वा, दोसस्स वा, मोहस्स वा, वसंगदेण वा, चउव्विहो आहारो सयं रत्ति भुत्तो, अण्णेहिं रत्ति भुंजाविदो, अण्णेहिं रत्ति भुंजिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तं वि ।

इमस्स णिग्गंथस्स, पवयणस्स, अणुत्तरस्स, केवलियस्स, केवलिपण्णत्तस्स धम्मस्स, अहिंसा-लक्खणस्स, सच्चाहिट्ठियस्स, विणय-मूलस्स, खमा-बलस्स, अट्ठारह-सील-सहस्स-परिमंडियस्स, चउरासीदि-गुणसय-सहस्स, विहूसियस्स, णवविह-बंभचेर-गुत्तस्स, णियदिलक्खणस्स, परिचाय-फलस्स, उवसम-पहाणस्स, खंतिमग्ग-देसयस्स, मुत्ति-मग्ग-पयासयस्स, सिद्धि-मग्गपज्जव-साहणस्स, से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, अण्णाणेण वा, अदंसणेण वा, अवीरिएण

वा, असंजमेण वा, अस्समणेण वा, अणहि-गमणेण वा, अभिमंसिदाए वा, अबोहिदाए वा, रागेण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हासेण वा, भएण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पेम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, अणादरेण वा, अणेण केण वि कारणेण जादेण वा, अलसदाए, वालिसदाए, कम्म-भारिगदाए, कम्म-गुरु-गदाए, कम्म-दुच्चरिदाए, कम्म-पुरुक्कडदाए, ति-गारव-गुरु-गदाए, अबहु-सुददाए, अविदिद-परमट्ठ-दाए, तं सव्वं पुव्वं दुच्चरियं गरहामि ।

आगमेसिं च अपच्चक्खियं पच्चक्खामि । अणालोचियं आलोचेमि । अणिंदियं णिंदामि । अगरहियं गरहामि । अपडिक्कंतं पडिक्कमामि । विराहणं वोस्सरामि, आराहणं अब्भुट्ठेमि । अण्णाणं वोस्सरामि, सण्णाणं अब्भुट्ठेमि । कुदंसणं वोस्सरामि, सम्मदंसणं अब्भुट्ठेमि । कुचरियं वोस्सरामि, सुचरियं अब्भुट्ठेमि । कुतवं वोस्सरामि, सुतवं अब्भुट्ठेमि । अकरणिज्जं वोस्सरामि, करणिज्जं अब्भुट्ठेमि । अकिरियं वोस्सरामि, किरियं अब्भुट्ठेमि । पाणादिवादं वोस्सरामि, अभयदाणं अब्भुट्ठेमि । मोसं वोस्सरामि, सच्चं अब्भुट्ठेमि । अदिण्णादाणं वोस्सरामि, दिण्णं कप्पणिज्जं अब्भुट्ठेमि । अबंभं वोस्सरामि, बंभचरियं अब्भुट्ठेमि । परिग्गहं वोस्सरामि, अपरिग्गहं अब्भुट्ठेमि । राइभोयणं वोस्सरामि, दिवाभोयणं अब्भुट्ठेमि । अणेयभत्तं वोस्सरामि, एगभत्तं पच्चुप्पणं फासुगं अब्भुट्ठेमि । अट्ट - रुद्द - ज्झाणं वोस्सरामि, धम्म-सुक्क-

ज्झाणं अब्भुट्ठेमि। किण्ह-णील-काउ-लेस्सं वोस्सरामि, तेउ-पम्म-सुक्क-लेस्सं अब्भुट्ठेमि। आरंभं वोस्सरामि, अणारंभं अब्भुट्ठेमि। असंजमं वोस्सरामि, संजमं अब्भुट्ठेमि। सग्गंथं वोस्सरामि, णिग्गंथं अब्भुट्ठेमि। सचेलं वोस्सरामि, अचेलं अब्भुट्ठेमि। अलोचं वोस्सरामि, लोचं अब्भुट्ठेमि। ण्हाणं वोस्सरामि, अण्हाणं अब्भुट्ठेमि। अखिदि-सयणं वोस्सरामि, खिदि-सयणं अब्भुट्ठेमि। दंतवणं वोस्सरामि, अदंतवणं अब्भुट्ठेमि। अट्ठिदि-भोयणं वोस्सरामि, ठिदि-भोयण-मेय-भत्तं अब्भुट्ठेमि। अपाणिपत्तं वोस्सरामि, पाणि-पत्तं अब्भुट्ठेमि। कोहं वोस्सरामि, खंतिं अब्भुट्ठेमि। माणं वोस्सरामि, मद्दवं अब्भुट्ठेमि। मायं वोस्सरामि, अज्जवं अब्भुट्ठेमि। लोहं वोस्सरामि, संतोसं अब्भुट्ठेमि। अतवं वोस्सरामि, दुवादसविह-तवो-कम्मं अब्भुट्ठेमि।

मिच्छत्तं परिवज्जामि, सम्मत्तं उवसंपज्जामि। असीलं परिवज्जामि, सुसीलं उवसंपज्जामि। ससल्लं परिवज्जामि, णिसल्लं उवसंपज्जामि। अविणयं परिवज्जामि, विणयं उवसंपज्जामि। अणाचारं परिवज्जामि, आचारं उवसंपज्जामि। उम्मग्गं परिवज्जामि, जिणमग्गं उवसंपज्जामि। अखंतिं परिवज्जामि, खंतिं उवसंपज्जामि। अगुत्तिं परिवज्जामि, गुत्तिं उवसंपज्जामि। अमुत्तिं परिवज्जामि, सुमुत्तिं उवसंपज्जामि। असमाहिं परिवज्जामि, सुसमाहिं उवसंपज्जामि। ममत्तिं परिवज्जामि, णिम्ममत्तिं उवसंपज्जामि।

अभावियं भावेमि, भावियं ण भावेमि ।

इमं णिग्गंथं पव्वयणं, अणुत्तरं केवलियं पडिपुण्णं, णेयाइयं, सामाइयं, संसुद्धं, सल्लघट्टाण-सल्लघत्ताणं, सिद्धि-मग्गं, सेढि-मग्गं, खंति-मग्गं, मुत्ति-मग्गं, पमुत्ति-मग्गं, मोक्ख - मग्गं, पमोक्ख - मग्गं, णिज्जाण - मग्गं, णिव्वाण-मग्गं, सव्व-दुक्ख-परिहाणि-मग्गं, सुचरिय-परि-णिव्वाण-मग्गं, जत्थ ठिया जीवा, सिज्झंति, बुज्झंति, मुच्चंति, परिणिव्वायंति, सव्व-दुक्खाणमंतं करेंति । तं सद्दहामि, तं पत्तियामि, तं रोचेमि, तं फासेमि, इदो उत्तरं, अण्णं णत्थि, ण भूदं, ण भविस्सदि, णाणेण वा, दंसणेण वा, चरित्तेण वा, सुत्तेण वा, सीलेण वा, गुणेण वा, तवेण वा, णियमेण वा, वदेण वा, विहारेण वा, आलएण वा, अज्जवेण वा, लाहवेण वा, अण्णेण वा, वीरिएण वा, समणोमि, संजदोमि, उवरदोमि, उव-संतोमि, उवहि-णियडि-माण-माया-मोस-मूरण-मिच्छा-णाण - मिच्छादंसण - मिच्छाचरित्तं च पडिविरदोमि । सम्मणाण - सम्मदंसण - सम्मचरित्तं च रोचेमि । जं जिणवरेहिं पण्णत्तो, जो मए पक्खिय / चउमासिय / संवच्छरिय इरियावहि-केसलोचाइचारस्स, संथारादि-चारस्स, पंथादिचारस्स, सव्वादिचारस्स, उत्तमट्ठस्स सम्मचरित्तं च रोचेमि ।

छट्ठे अणुव्वदे राइ-भोयणादो वेरमणं उवट्ठावण-मंडले, महत्थे, महागुणे, महाणुभावे, महाजसे, महा-पुरिसाणुचिण्णे, अरहंत-सक्खियं, सिद्ध-सक्खियं, साहु-सक्खियं, अप्प-सक्खियं, पर-सक्खियं, देवता-सक्खियं,

उत्तमट्ठम्हि "इमं मे अणुव्वदं, सुव्वदं, दिढव्वदं होदु । णित्थारयं, पारयं, तारयं, आराहियं चावि ते मे भवदु" ।

षष्ठं अणुव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां सम्यक्त्वपूर्वकं दृढव्रतं सुव्रतं समारूढं ते मे भवतु ॥१॥
षष्ठं अणुव्रतं सर्वेषां ……… ते मे भवतु ॥२॥
षष्ठं अणुव्रतं सर्वेषां ……… ते मे भवतु ॥३॥

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥१॥
णमो अरहंताणं ……… णमो लोए सव्वसाहूणं ॥२॥
णमो अरहंताणं ……… णमो लोए सव्वसाहूणं ॥३॥

चूलिका

चूलियंतु पवक्खामि भावणा पंचविंसदी ।
पंच पंच अणुण्णादा एक्केक्कम्हि महव्वदे ॥१॥

अहिंसा महाव्रत की भावनाएँ

मणगुत्तो वयगुत्तो इरिया - काय - संयदो ।
एसणा - समिदि संजुत्तो पढमं वदमस्सिदो ॥२॥

सत्य महाव्रत की भावनाएँ

अकोहणो अलोहो य भय - हास - विवज्जिदो ।
अणुवीचि - भास - कुसलो विदियं वदमस्सिदो ॥३॥

अचौर्य महाव्रत की भावनाएँ

अदेहणं भावणं चावि उग्गहं य परिग्गहे ।
संतुट्ठो भत्तपाणेसु तिदियं वदमस्सिदो ॥४॥

ब्रह्मचर्य महाव्रत की भावनाएँ

इत्थिकहा इत्थि-संसग्ग-हास-खेड-पलोयणे ।
णियमम्मि ट्ठिदो णियत्तो य चउत्थं वदमस्सिदो ॥५॥

अपरिग्रह महाव्रत की भावनाएँ

सचित्ताचित्त-दव्वेसु बाहिर-मब्भंतरेसु य ।
परिग्गहादो विरदो पंचमं वदमस्सिदो ॥६॥

उत्तम व्रत का स्वामी

धिदिमंतो खमाजुत्तो, झाण-जोग-परिट्ठिदो ।
परीसहाण-उरं देंत्तो उत्तमं वदमस्सिदो ॥७॥

ध्यान की सारता

जो सारो सव्वसारेसु सो सारो एस गोयम ।
सारं झाणं ति णामेण सव्वं बुद्धेहि देसिदं ॥८॥

इच्चेदाणि पंचमहव्वदाणि, राइ-भोयणादो वेर-मणं छट्ठाणि सभावणाणि समाउग्ग-पदाणि स-उत्तर-पदाणि, सम्मं धम्मं, अणुपाल-इत्ता, समणा, भयवंता, णिग्गंथा होऊण सिज्झंति, बुज्झंति, मुच्चंति, परि-णिव्वायंति, सव्वदुक्खाणमंतं करेंति, परिविज्जाणंति । तं जहा—

पाणादिवादं जहि मोसगं च,
अदत्त-मेहुण्ण-परिग्गहं च ।
वदाणि सम्मं अणुपालइत्ता,
णिव्वाण-मग्गं विरदा उवेंति ॥१॥

निःशल्यता का उपदेश

जाणि काणि वि सल्लाणि, गरहिदाणि जिणसासणे ।
ताणि सव्वाणि वोसरित्ता णिसल्लो विहरदे सया मुणी ॥

मायात्याग—उपदेश

उप्पण्णाणुप्पण्णा, माया अणुपुव्वं सो णिहंतव्वा ।
आलोयण पडिकमणं, णिंदण - गरहणदाए ॥३॥

द्रव्य भाव प्रतिक्रमण

अब्भुट्ठिदकरणदाए अब्भुट्ठिद-दुक्कड-णिराकरणदाए ।
भवं भाव-पडिक्कमणं, सेसा पुण दव्वदो भणिदा ॥४॥

प्रतिक्रमणविधि सब तीर्थंकरों द्वारा कथित है

एसो पडिकमण-विही, पण्णत्तो जिणवरेहिं सव्वेहिं ।
संजम-तव-ट्ठिदाणं, णिग्गंथाणं महरिसीणं ॥५॥

क्षमा एवं फल याचना

अक्खर-पयत्थ-हीणं, मत्ता-हीणं च जं मए भणिदं ।
तं खमदु णाण-देवय ! देउ समाहिं च बोहिं च ॥६॥

पंच परमेष्ठियों को नमस्कार

काऊण णमोक्कारं, अरहंताणं तहेव सिद्धाणं ।
आइरिय-उवज्झायाणं, लोयम्मि य सव्वसाहूणं ॥७॥

इच्छामि भंते ! पडिक्कमणमिदं सुत्तस्स मूल-पदाणं, उत्तर-पदाण-मच्चासादणाए । तं जहा—

पदादि की अवहेलना सम्बन्धी प्रतिक्रमण

णमोक्कारपदे, अरहंतपदे, सिद्धपदे, आइरियपदे, उवज्झायपदे, साहुपदे, मंगलपदे, लोगुत्तमपदे, सरणपदे, सामाइयपदे, चउवीस-तित्थयरपदे, वंदणपदे, पडिक्क-मणपदे, पच्चक्खाणपदे, काउस्सग्गपदे, असीहियपदे, निसीहियपदे, अंगंगेसु, पुव्वंगेसु, पइण्णएसु, पाहुडेसु, पाहुड-पाहुडेसु, कदकम्मेसु वा, भूदकम्मेसु वा, णाणस्स अइक्कमणदाए, दंसणस्स अइक्कमणदाए, चरित्तस्स

अइक्कमणदाए, तवस्स अइक्कमणदाए, वीरियस्स अइक्कमणदाए, से अक्खरहीणं वा, सर-हीणं वा, विंजण-हीणं वा, पदहीणं वा, अत्थ-हीणं वा, गंथ-हीणं वा, थएसु वा, थुइसु वा, अत्थक्खाणेसु वा, अणियोगेसु वा, अणियोगद्दारेसु वा, जे भावा पण्णत्ता, अरहंतेहिं, भयवंतेहिं, तित्थयरेहिं, आदियरेहिं, तिलोय-णाहेहिं, तिलोय-बुद्धेहिं, तिलोय-दरसीहिं, ते सद्दहामि, ते पत्तियामि, ते रोचेमि, ते फासेमि, ते सद्दहंतस्स, ते पत्तियंतस्स, ते रोचयंतस्स, ते फासयंतस्स, जो मए पक्खिओ/चउमासिओ/संवच्छरिओ अदिक्कमो, वदिक्कमो, अइचारो, अणाचारो, आभोगो, अणाभोगो, अकालो, सज्झाओ कओ, काले वा परिहाविदो, अत्थाकारिदं, मिच्छामेलिदं, आमेलिदं, वामेलिदं, अण्णहादिण्णं, अण्णहा - पडिच्छदं, आवासएसु परिहीणदाए तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

अह पडिवदाए, विदियाए, तिदियाए, चउत्थीए, पंचमीए, छट्ठीए, सत्तमीए, अट्ठमीए, णवमीए, दसमीए, एयारसीए, बारसीए, तेरसीए, चउद्दसीए, पुण्णमासीए पण्णरस-दिवसाणं पण्णरस-राईणं,/चउण्हं मासाणं, अट्ठण्हं पक्खाणं, वीसुत्तरसय-दिवसाणं, वीसुत्तरसय-राईणं/बारसण्हं मासाणं, चउवीसण्हं पक्खाणं, तिण्णि-छावट्ठि-सय-दिवसाणं, तिण्णि-छावट्ठि-सय - राईणं/पंचवरिसादो/परदो, अब्भंतरादो वा, दोण्हं अट्ट-रुद्द-संकिलेस-परिणामाणं, तिण्हं अप्पसत्थ-संकिलेस-परिणामाणं, तिण्हं दंडाणं, तिण्हं लेस्साणं, तिण्हं गुत्तीणं, तिण्हं

गारवाणं, तिण्हं सल्लाणं, चउण्हं सण्णाणं, चउण्हं कसायाणं, चउण्हं उवसग्गाणं, पंचण्हं महव्वयाणं, पंचण्हं इंदियाणं, पंचण्हं समिदीणं, पंचण्हं चरित्ताणं, छण्हं आवासयाणं, सत्तण्हं भयाणं, सत्तविह संसाराणं, अट्ठण्हं मयाणं, अट्ठण्हं सुद्धीणं, अट्ठण्हं कम्माणं, अट्ठण्हं पवयण-माउयाणं, णवण्हं बंभचेर-गुत्तीणं, णवण्हं णोकसायाणं, दसविह-मुंडाणं, दसविह-समण-धम्माणं, दसविह-धम्मज्झाणाणं, बारसण्हं संजमाणं, बारसण्हं तवाणं, बारसण्हं अंगाणं, तेरसण्हं किरियाणं, चउदसण्हं पुव्वाण्हं, पण्णरसण्हं पमायाणं, सोलसण्हं कसायाणं बावीसाए परीसहेसु, पणवीसाए किरियासु, पणवीसाए भावणासु अट्ठारस-सील-सहस्सेसु, चउरासीदि-गुणसय-सहस्सेसु, मूलगुणेसु, उत्तरगुणेसु, अदिक्कमो, वदिक्कमो, अइचारो, अणाचारो, आभोगो, अणाभोगो, तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि। पडिक्कंतं कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदं, तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं वोस्सरामि, जाव अरहंताणं, भयवंताणं, णमोक्कारं करेमि, पज्जुवासं करेमि, ताव कालं, पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि।

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥१॥

श्रावक के १२ व्रतों के अन्तर्गत पाँच अणुव्रतों का वर्णन

पढमं ताव सुदं मे आउस्संतो ! इह खलु समणेण भयवदा महदि-महावीरेण, महाकस्सवेण, सव्वण्हुणा, सव्व-लोय-दरसिणा, सावयाणं, सावियाणं, खुड्डयाणं

खुड्डीयाणं कारणेण, पंचाणुव्वदाणि, तिण्णि गुणव्व-दाणि, चत्तारि सिक्खावदाणि, बारसविहं गिहत्थ-धम्मं सम्मं उवदेसिदाणि ।

तत्थ इमाणि पंचाणुव्वदाणि पढमे अणुव्वदे थूलयडे पाणादिवादादो वेरमणं; विदिए अणुव्वदे थूलयडे मुसा-वादादो वेरमणं; तिदिए अणुव्वदे थूलयडे अदिण्णा-दाणादो वेरमणं; चउत्थे अणुव्वदे थूलयडे सदार-संतोस-परदारा-गमण-वेरमणं—कस्स य पुणु सव्वदो विरदी; पंचमे अणुव्वदे थूलयडे इच्छा-कद-परिमाणं चेदि, इच्चेदाणि पंच अणुव्वदाणि ।

तीन गुणव्रतों का वर्णन

तत्थ इमाणि तिण्णि गुणव्वदाणि—तत्थ पढमे गुणव्वदे दिसि-विदिसि पच्चक्खाणं, विदिए गुणव्वदे विविहृ-अणत्थ-दंडादो वेरमणं, तिदिए गुणव्वदे भोगोप-भोग-परिसंखाणं चेदि, इच्चेदाणि तिण्णि गुणव्वदाणि ।

चार शिक्षाव्रतों का वर्णन

तत्थ इमाणि चत्तारि सिक्खावदाणि—तत्थ पढमे सामाइयं, विदिए पोसहोवासयं, तिदिए अतिथि-संवि-भागो, चउत्थे सिक्खावदे पच्छिम-सल्लेहणा-मरणं चेदि । इच्चेदाणि चत्तारि सिक्खावदाणि ।

से अभिमद-जीवाजीव-उवलद्ध-पुण्ण-पाव-आसव-बंध-संवर-णिज्जर-मोक्ख-महि-कुसले, धम्माणुराय-रत्तो, पेम्माणुराय-रत्तो, अट्ठि-मज्जाणुराय-रत्तो,

मुच्छिदट्ठे, गिहिदट्ठे, विहिदट्ठे, पालिदट्ठे, सेविदट्ठे, इणमेव णिग्गंथ-पवयणे, श्रणुत्तरे, सेग्रट्ठे, सेवणुट्ठे ।

सम्यक्त्व के आठ अंगों के नाम

णिस्संकिय णिकंक्खिय णिव्विदिगिंचछा अमूढदिट्ठी य ।
उवगूहण ठिदिकरणं वच्छल्ल-पहावणा य ते अट्ठ ॥१॥

सव्वेदाणि पंचाणुव्वदाणि, तिण्णि गुणव्वदाणि, चत्तारि सिक्खावदाणि, बारसविहं गिहत्थ-धम्ममणुपाल-इत्ता—

देशव्रत के ग्यारह स्थानों के नाम

दंसण-वय-सामाइय-पोसह-सचित्त-राइभत्ते य ।
बंभारंभ परिग्गह अणुमणमुद्दिट्ठ देसविरदो य ॥१॥

श्रावक धर्म

महु-मंस-मज्ज-जूआ वेसादि-विवज्जणा—सीलो ।
पंचाणुव्वय-जुत्तो, सत्तेहिं सिक्खावएहिं संपुण्णो ॥२॥

श्रावकव्रत निर्दोष पालने का फल

जो एदाइं वदाइं धरेइ, सावया सावियाओ वा, खुड्डय-खुड्डियाओ वा, वह-अट्ठ-पंच-भवणवासिय-वाणविंतर-जोइसिय, सोहम्मीसाण-देवीओ वदिक्कमित्तु उवरिम-अण्णदर-महड्ढियासु देवेसु उववज्जंति ।

तं जहा—सोहम्मीसाण-सणक्कुमार-माहिंद-बंभ-बंभुत्तर-लांतव-कापिट्ठ-सुक्क-महासुक्क-सतार-सहस्सार-आणत-पाणत-आरण-अच्चुत-कप्पेसु उववज्जंति ।

अडयंबर - सत्थधरा कडयंगद - बद्धमउडकय - सोहा ।
भासुरवर-बोहिधरा देवा य महड्ढिया होंति ॥१॥

समाधिमरण का फल

उक्कस्सेण दो-तिण्ण - भव-गहणाणि, जहण्णेण सत्तट्ठ - भव - गहणाणि, तदो सुमाणुसत्तादो सुदेवत्तं, सुदेवत्तादो सुमाणुसत्तं, तदो साइहत्था, पच्छा-णिग्गंथा होऊण सिज्झंति, बुज्झंति, मुच्चंति, परिणिव्वायंति, सव्वदुक्खाणमंतं करेंति । जाव अरहंताणं, भयवंताणं, णमोक्कारं करेमि, पज्जुवासं करेमि, ताव कालं पाव-कम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

वद-समिदिंदिय - रोधो, लोचावासय - मचेल - मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदंतवणं, ठिदि-भोयण-मेयभत्तं च ॥१॥
एदे खलु मूलगुणा, समणाणं जिणवरेहि पण्णत्ता ।
एत्थ पमाद - कदादो, अइचारादो णियत्तो हं ॥२॥

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं

अथ सर्वातिचार-विशुद्धयर्थं पाक्षिक/चातुर्मासिक/वार्षिक प्रतिक्रमण-क्रियायां, कृतदोष - निराकरणार्थं पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव - समेतं श्रीनिष्ठितकरण - वीरभक्ति - कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम्—

यहाँ आचार्यश्री के साथ-साथ सभी मुनिराजों को निम्न-लिखित सामायिकदण्डक, कायोत्सर्ग और 'थोस्सामि' स्तव पढ़कर वीरभक्ति आदि बोलनी चाहिए ।

श्रीवीरभक्तिः

['णमो अरहंताणं' से 'वोस्सरामि' पर्यन्त (पृष्ठ ९ और १० मे) सामायिक दण्डक बोलें । पश्चात् पाक्षिक[1] प्रतिक्रमण में ३०० श्वासोच्छ्वास[2] अर्थात् १०० बार पंचनमस्कार मंत्र का जाप, चातुर्मासिक प्रतिक्रमण में ४०० श्वासोच्छ्वास अर्थात् १३४ बार पंचनमस्कार मंत्र का जाप और वार्षिक प्रतिक्रमण में ५०० श्वासोच्छ्वास अर्थात् १६७ बार पंचनमस्कार मंत्र का जाप करना चाहिए । पश्चात् चतुर्विंशतिस्तव (पृष्ठ १०) अर्थात् 'थोस्सामि' बोलना चाहिए ।]

---

१. (अ) अट्ठसद देवसिय कल्लद्धं पक्खिय च तिण्णि सया ।
उस्सासा कायव्वा णियमते अप्पमत्तेण ।। १८५ ।।
चादुम्मासे चउरो सदाइ संवच्छरे य पचसदा ।
काओसग्गुस्सासा पचसु ठाणेसु णादव्वा ।। १८६ ।।
मूलाचार (कुन्दकुन्दाचार्य) अ० ७

(ब) उच्छ्वासा .... ।
परमेष्ठि-पदोच्चारैः शतानि-त्रीणि पाक्षिके ।। ६३ ।।
उच्छ्वासानां च चातुर्मासिके चतुःशतानि वै ।
शतानि पच सावत्सरके स्युर्नियमात्मनाम् ।। ६४ ।।
मूलाचार प्रदीप चतुर्थ अ० ।

२ (क) बाहर से भीतर की ओर प्राणवायु के खीचने को श्वास कहते हैं, तथा भीतर की ओर से बाहर प्राणवायु के निकालने को उच्छ्वास कहते है और इन दोनों के समूह को श्वासोच्छ्वास कहते है ।

(ख) श्वास लेते समय **'णमो अरहंताणं'** पद और श्वास छोडते समय **'णमो सिद्धाणं'** पद बोलें । पुनः श्वास लेते समय **'णमो आइरियाणं'** और श्वास छोडते समय **'णमो उवज्झायाणं'** पद बोलें । पुनः श्वास लेते समय पंचम पद के अर्धभाग को अर्थात् **'णमो लोए'** पद तथा श्वास छोड़ते समय शेष अर्धभाग को अर्थात् **'सव्वसाहूणं'** पद बोलें । इस प्रकार एक पच नमस्कार मंत्र के उच्चारण में तीन श्वासोच्छ्वास और नौ बार णमोकार मंत्र के उच्चारण मे २७ श्वासोच्छ्वास करना चाहिए ।

चन्द्रप्रभं चन्द्रमरीचिगौरं,
चन्द्रं द्वितीयं जगतीव कान्तम् ।
वन्देऽभिवन्द्यं महतामृषीन्द्रं,
जिनं जित-स्वान्त-कषाय-बन्धम् ॥१॥

यस्याङ्ग-लक्ष्मी-परिवेष-भिन्नं,
तमस्तमोरेरिव रश्मि - भिन्नम् ।
ननाश बाह्यं बहु-मानसं च,
ध्यान - प्रदीपातिशयेन भिन्नम् ॥२॥

स्व-पक्ष-सौस्थित्य-मदावलिप्ता,
वाक् - सिंहनादै - विमदा बभूवुः ।
प्रवादिनो यस्य मदार्द्र-गण्डा,
गजा यथा केसरिणो निनादैः ॥३॥

यः सर्व-लोके परमेष्ठितायाः,
पदं बभूवाद्भुत - कर्म - तेजाः ।
अनन्त-धामाक्षर-विश्व-चक्षुः,
समन्त - दुःख - क्षय - शासनश्च ॥४॥

स चन्द्रमा भव्य-कुमुद्वतीनां,
विपन्न - दोषाभ्र - कलङ्क - लेपः ।
व्याकोश-वाङ्-न्याय-मयूख-मालः,
पूयात् पवित्रो भगवान् मनो मे ॥५॥

यः सर्वाणि चराचराणि विधिवद्, द्रव्याणि तेषां गुणान्,
पर्यायानपि भूत-भावि-भवतः, सर्वान् सदा सर्वदा ।
जानीते युगपत् प्रतिक्षण-मतः, सर्वज्ञ इत्युच्यते,
सर्वज्ञाय जिनेश्वराय महते, वीराय तस्मै नमः ।१।

वीरः सर्व-सुरासुरेन्द्र-महितो, वीरं बुधाः संश्रिताः,
वीरेणाभिहतः स्व-कर्म-निचयो, वीराय भक्त्या नमः ।
वीरात् तीर्थमिदं प्रवृत्तमतुलं, वीरस्य घोरं तपो,
वीरे श्रीद्युति-कान्ति-कीर्ति-धृतयो,हे वीर ! भद्रं त्वयि ।२।

ये वीरपादौ प्रणमन्ति नित्यं,
ध्यानस्थिताः संयम-योगयुक्ताः ।
ते वीतशोका हि भवन्ति लोके,
संसार–दुर्गं विषमं तरन्ति ॥३॥

व्रतसमुदय - मूलः संयम - स्कन्ध - बन्धो,
यम-नियम-पयोभि-र्वर्धितः शीलशाखः ।
समिति-कलिक-भारो, गुप्ति-गुप्त-प्रवालो,
गुण-कुसुम-सुगन्धिः सत्तपश्चित्रपत्रः ॥४॥

शिवसुखफलदायी, यो दया-छाययोद्घः,
शुभजनपथिकानां, खेदनोदे समर्थः ।
दुरित - रविज - तापं, प्रापयन्नन्तभावम्,
स भव-विभव-हान्यै, नोऽस्तु चारित्रवृक्षः ॥५॥

चारित्रं सर्वजिनैश्चरितं, प्रोक्तं च सर्व-शिष्येभ्यः ।
प्रणमामि पञ्चभेदं, पञ्चम-चारित्र-लाभाय ॥६॥

धर्मः सर्वसुखाकरो हितकरो, धर्मं बुधाश्चिन्वते,
धर्मेणैव समाप्यते शिवसुखं, धर्माय तस्मै नमः ।
धर्मान्-नास्त्यपरः सुहृद्-भवभृतां, धर्मस्य मूलं दया,
धर्मे चित्तमहं दधे प्रतिदिनं, हे धर्म ! मां पालय ॥७॥

धम्मो मंगल-मुक्किट्ठं, अहिंसा संजमो तवो ।
देवा वि तं णमस्संति, जस्स धम्मे सया मणो ॥८॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! वीरभत्ति-काउसग्गो कओ तस्सालोचेउं, सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्त-तव-वीरियाचारेसु, जम-णियम-संजम-सील-मूलुत्तर-गुणेसु, सव्वमईचारं सावज्ज-जोगं पडिविरदोमि, असंखेज्ज-लोय-अज्झवसाय-ठाणाणि, अप्पसत्थ-जोग-सण्णा-इंदिय-कसाय-गारव-किरियासु, मण-वयण-काय-करण-दुप्पणिहाणाणि, परिचिंतियाणि, किण्ह-णील-काउ-लेस्साओ, विकहा-पालिकुंचिएण, उम्मग्ग-हास-रदि-अरदि-सोय-भय-दुगुंछ-वेयण-विज्जंभ-जंभाइ-आणि, अट्ट-रुद्द-संकिलेस-परिणामाणि परिणमिदाणि, अणि-हुदकर-चरण-मण-वयण-काय-करणेण, अक्खित्त-बहुल-परायणेण, अपडिपुण्णेण वा, सरक्खरावय-परिसंघाय-पडिवत्तिएण, अच्छाकारिदं मिच्छामेलिदं, आमेलिदं, वामेलिदं, अण्णहादिण्णं, अण्णहापडिच्छिदं, आवासएसु परिहीणदाए, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणु-मण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

वद-समिदिंदिय-रोधो, लोचावासय-मचेल-मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदंतवणं, ठिदि-भोयण-मेयभत्तं च ॥१॥
एदे खलु मूलगुणा, समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता ।
एत्थ पमाद-कदादो, अइचारादो णियत्तो हं ॥२॥

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं ।

शान्ति-चतुर्विंशति-स्तुतिः

अथ सर्वातिचार-विशुद्धयर्थं पाक्षिक/चातुर्मासिक/

वार्षिक प्रतिक्रमण-क्रियायां कृत-दोष-निराकरणार्थं पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तवसमेतं शान्ति-चतुर्विशति-तीर्थंकरभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(यहाँ 'णमो अरहंताणं' इत्यादि सामायिक दण्डक बोलें ।)

(२७ उच्छ्वासों में कायोत्सर्ग करें ।)

(पश्चात् 'थोस्सामि हं जिणवरे' ······ इत्यादि बोलकर निम्नलिखित भक्तियाँ पढ़ें–)

शान्ति-कीर्तना

विधाय रक्षां परतः प्रजानां,
राजा चिरं योऽप्रतिमप्रतापः ।
व्यधात् पुरस्तात् स्वत एव शान्ति-
र्मुनि-र्दया-मूर्ति-रिवाघशान्तिम् ॥१॥

चक्रेण यः शत्रु-भयङ्करेण,
जित्वा नृपः सर्व-नरेन्द्र-चक्रम् ।
समाधिचक्रेण पुन-र्जिगाय,
महोदयो दुर्जय-मोह-चक्रम् ॥२॥

राजश्रिया राजसु राजसिंहो,
रराज यो राजसुभोगतन्त्रः ।
आर्हन्त्य-लक्ष्म्या पुन-रात्मतन्त्रो,
देवासुरोदार-सभे रराज ॥३॥

यस्मिन्नभूद्राजनि राजचक्रं,
मुनौ दया-दीधिति-धर्म-चक्रम् ।
पूज्ये मुहुः प्राञ्जलि देवचक्रं,
ध्यानोन्मुखे ध्वंसि कृतान्त-चक्रम् ॥४॥

स्वदोष-शान्त्या विहितात्म-शान्तिः,
शान्ते-र्विधाता शरणं गतानाम् ।
भूयाद् भव-क्लेश-भयोपशान्त्यै,
शान्तिर्जिनो मे भगवाञ्छरण्यः ॥५॥

चतुर्विंशतितीर्थंकर-स्तुतिः

ये लोकेऽष्ट-सहस्र-लक्षण-धरा, ज्ञेयार्णवान्तर्गता,
ये सम्यग्-भवजाल-हेतु-मथनाश्चन्द्रार्क-तेजोऽधिकाः ।
ये साध्विन्द्र-सुराप्सरो-गण-शतै-र्गीत-प्रणूतार्चितास्,
तान् देवान् वृषभादिवीरचरमान्, भक्त्या नमस्याम्यहम् ।
नाभेयं देवपूज्यं, जिनवर-मजितं, सर्व-लोक-प्रदीपं,
सर्वज्ञं सम्भवाख्यं, मुनिगण-वृषभं, नन्दनं देवदेवम् ।
कर्मारिघ्नं सुबुद्धिं, वर-कमलनिभं, पद्म-पुष्पाभि-गन्धं,
क्षान्तं दान्तं सुपार्श्वं, सकल-शशिनिभं चन्द्रनामानमीडे ॥
विख्यातं पुष्पदन्तं, भव-भय-मथनं, शीतलं लोकनाथं,
श्रेयांसं शील-कोषं, प्रवर-नर-गुरुं, वासुपूज्यं सुपूज्यम् ।
मुक्तं दान्तेन्द्रियाश्वं, विमलमृषिपतिं सिंहसैन्यं मुनीन्द्रम्,
धर्मं सद्धर्मकेतुं, शमदमनिलयं, स्तौमि शान्तिं शरण्यम् ॥
कुन्थुं सिद्धालयस्थं, श्रमणपतिमरं, त्यक्तभोगेषु चक्रं,
मल्लिं विख्यातगोत्रं, खचरगणनुतं सुव्रतं सौख्यराशिम् ।
देवेन्द्रार्च्यं नमीशं, हरिकुल-तिलकं, नेमिचन्द्रं भवान्तं,
पार्श्वं नागेन्द्र-वन्द्यं, शरणमहमितो, वर्धमानं च भक्त्या ॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! चउवीसं-तित्थयर-भत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं पंचमहाकल्लाण-संपण्णाणं, अट्ठ-महापाडिहेर-सहियाणं, चउतीसातिसय-विसेस-

संजुत्ताणं, बत्तीस-देविंद-मणि-मउड-मत्थय-महियाणं, बलदेव-वासुदेव-चक्कहर-रिसि-मुणि-जइ-अणगारोव-गूढाणं, थुइ-सय-सहस्स-णिलयाणं-उसहाइ-वीर-पच्छिम-मंगल-महापुरिसाणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहि-लाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

वद-समिदिंदिय-रोधो, लोचावासय-मचेल-मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदंतवणं, ठिदि-भोयण-मेयभत्तं च ॥१॥
एदे खलु मूलगुणा, समणाणं जिणवरेहि पण्णत्ता ।
एत्थ पमाद-कदादो, अइचारादो णियत्तो हं ॥२॥

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं ।

चारित्रालोचना-सहिता वृहदाचार्यभक्तिः

अथ सर्वातिचार-विशुद्धयर्थं चारित्रालोचनाचार्य-भक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम्—

(यहाँ पूर्ववत् "णमो अरहंताणं" इत्यादि दण्डक बोलकर कायोत्सर्ग करें, पश्चात् "थोस्सामि हं जिणवरे" इत्यादि स्तव बोलकर निम्नलिखित आचार्यभक्ति एवं लघु-चारित्रालोचना पढ़ें—)

वृहद्-आचार्यभक्तिः

सिद्ध - गुण - स्तुति - निरता-
नुद्धूत-रुषाग्नि-जाल-बहुल-विशेषान् ।
गुप्तिभि - रभिसम्पूर्णान्,
मुक्तियुतः सत्य-वचन-लक्षित-भावान् ॥१॥

मुनि - माहात्म्य - विशेषान्,
  जिनशासन - सत्प्रदीप - भासुर - मूर्तीन् ।
सिद्धिं प्रपित् सुमनसो,
  बद्ध-रजो-विपुल-मूल-घातन-कुशलान् ॥२॥

गुण - मणि - विरचित - वपुषः,
  षड्द्रव्य-विनिश्चितस्य धातॄन् सततम् ।
रहित - प्रमाद - चर्यान्,
  दर्शनशुद्धान् गणस्य संतुष्टि-करान् ॥३॥

मोहच्छिदुग्र - तपसः,
  प्रशस्त-परिशुद्ध-हृदय-शोभन-व्यवहारान् ।
प्रासुक - निलया - ननघा-
  नाशाविध्वंसि - चेतसो हत-कुपथान् ॥४॥

धारित - विलसन् मुण्डान्,
  वर्जितबहुदण्ड-पिण्ड-मण्डल - निकरान् ।
सकल - परीषह - जयिनः,
  क्रियाभिरनिशं प्रमादतः परिरहितान् ॥५॥

अचलान् व्यपेत - निद्रान्,
  स्थानयुतान् कष्ट-दुष्ट-लेश्या-हीनान् ।
विधि - नानाश्रित - वासा-
  नलिप्तदेहान् विनिर्जितेन्द्रिय-करिणः ॥६॥

अतुला - नुत्कुटिकासान्,
  विविक्तचित्ता-नखण्डित-स्वाध्यायान् ।
दक्षिण - भाव - समग्रान्,
  व्यपगत-मद-राग-लोभ-शठ-मात्सर्यान् ॥७॥

भिन्नार्त - रौद्र - पक्षान्,
सम्भावित-धर्म-शुक्ल-निर्मल - हृदयान् ।
नित्यं पिनद्ध - कुगतीन्,
पुण्यान् गण्योदयान् विलीन-गारव-चर्यान् ॥८॥
तरु - मूल - योग - युक्ता-
नवकाशाताप - योग - राग - सनाथान् ।
बहुजन - हितकर - चर्या-
नभया - ननघान् महानुभाव - विधानान् ॥९॥
ईदृश - गुण - सम्पन्नान्,
युष्मान् भक्त्या विशालया स्थिर-योगान् ।
विधि - नानारत - मग्रघान्,
मुकुलीकृत-हस्त-कमल-शोभित-शिरसा ॥१०॥
अभिनौमि सकल - कलुष-
प्रभवोदय-जन्म-जरा-मरण-बन्धन - मुक्तान् ।
शिव - मचल - मनघ - मक्षय-
मव्याहत-मुक्ति-सौख्य-मस्तु मे सततम् ॥११॥

लघु-चारित्रालोचना

इच्छामि भंते! चरित्तायारो तेरसविहो परिहाविदो, पंच-महव्वदाणि, पंच-समिदीओ ति-गुत्तीओ चेदि । तत्थ पढमे महव्वदे पाणादिवादादो वेरमणं, से पुढवि-काइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, आउकाइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, तेउकाइया जीवा असंखेज्जा-संखेज्जा, वाउकाइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, वणप्फदिकाइया जीवा अणंताणंता, हरिया, बीया, अंकुरा, छिण्णा, भिण्णा, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं,

विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

वे-इंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, कुक्खि-किमि-संख-खुल्लय-वराडय-अक्ख-रिट्ठगण्डवाल-संबुक्क-सिप्पि-पुलवियाइया, एदेसिं उद्दावणं परिदावणं, विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

ते-इंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, कुंथु-द्देहिय-विच्छिय-गोभिद-गोजुव-मक्कुण-पिपीलियाइया, एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

चउ-इंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, दंस-मसय-मक्खि-पयंग-कीड-भमर-महुयर-गोमक्खियाइया, एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पंचिदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, अंडाइया, पोदाइया, जराइया, रसाइया, संसेदिमा, सम्मुच्छिमा, उब्भेदिमा, उववादिमा, अवि चउरासीदिजोणि-पमुह-सदसहस्सेसु, एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं, उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

इच्छामि भंते ! आइरियभत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं, सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं,

पंचविहाचाराणं, आइरियाणं, आयाराविसुद-णाणोव-
देसयाणं उवज्झायाणं, ति-रयण-गुणपालण-रयाणं
सव्वसाहूणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि,
णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-
गमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

वद-समिदिंदिय-रोधो, लोचावासय-मचेल-मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदंतवणं, ठिदि-भोयण-मेयभत्तं च ॥१॥

एदे खलु मूलगुणा, समणाणं जिणवरेहि पण्णत्ता ।
एत्थ पमाद-कदादो, अइचारादो णियत्तो हं ॥२॥

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं ।

वृहदालोचना-सहिता मध्यमाचार्यभक्तिः

अथ सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं वृहदालोचनाचार्य-
भक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम्—

(यहाँ "णमो अरहंताणं" इत्यादि दण्डक बोलकर कायोत्सर्ग करें। पश्चात् "थोस्सामि हं जिणवरे" इत्यादि स्तव बोलकर निम्नलिखित "देस-कुल-जाइ-सुद्धा" इत्यादि मध्यम-आचार्य-स्तुति और वृहदालोचना बोलें।)

देस-कुल-जाइ-सुद्धा, विसुद्ध-मण-वयण-काय-संजुत्ता ।
तुम्हं पाय-पयोरुह-मिह मंगल-मत्थु मे णिच्चं ॥१॥

सग-पर-समय-विदण्हू, आगम-हेदूहि चावि जाणित्ता ।
सुसमत्था जिण-वयणे, विणये सत्ताणु-रूवेण ॥२॥

बाल-गुरु-बुड्ढ-सेहे, गिलाण-थेरे य खमण-संजुत्ता ।
वट्टावयगा अण्णे दुस्सीले चावि जाणित्ता ॥३॥

वद-समिदि-गुत्ति-जुत्ता, मुत्तिपहे ठाविया पुणो अण्णे ।
अज्झावय-गुण-णिलया, साहु-गुणेणावि संजुत्ता ॥४॥

उत्तम-खमाए पुढवी, पसण्ण-भावेण अच्छ-जल-सरिसा।
कम्मिंधण-दहणादो, अगणी वाऊ असंगादो ॥५॥
गयण-मिव णिरुवलेवा, अक्खोहा सायरुव्व मुणिवसहा।
एरिस-गुणणिलयाणं, पायं पणमामि सुद्धमणो ॥६॥
संसारकाणणे पुण, बंभम-माणेहिं भव्व-जीवेहिं।
णिव्वाणस्स हु मग्गो, लद्धो तुम्हं पसाएण ॥७॥
अविसुद्ध-लेस्स-रहिया, विसुद्धलेस्साहि परिणदा सुद्धा।
रुद्दट्टे पुण चत्ता, धम्मे सुक्के य संजुत्ता ॥८॥
उग्गह-ईहावाया-धारण-गुण संपदेहिं संजुत्ता।
सुत्तत्थ-भावणाए, भाविय-माणेहिं वंदामि ॥९॥
तुम्हं गुण-गण-संथुदि, अजाण-माणेण जो मए वुत्तो।
देउ मम बोहिलाहं, गुरुभत्ति-जुदत्थओ णिच्चं ॥१०॥

अथ बृहदालोचना

प्रतिक्रमण पन्द्रह दिन, चार मास और बारह मास में होता है। जब करना हो, तब की अर्थात् उस समय की दिन-गणना बोलें।

इच्छामि भंते! पक्खियम्मि आलोचेउं, पण्णरसण्हं दिवसाणं, पण्णरसण्हं राईणं, अब्भंतरादो, पंचविहो आयारो, णाणायारो, दंसणायारो, तवायारो, वीरिया-यारो, चरित्तायारो चेदि।

[इच्छामि भंते! चउमासियम्मि आलोचेउं, चउण्हं मासाणं, अट्ठण्हं पक्खाणं, वीसुत्तर-सय-दिवसाणं वीसुत्तर-सय-राईणं, अब्भंतरादो, पंचविहो आयारो, णाणायारो, दंसणायारो, तवायारो, वीरियायारो, चरित्तायारो चेदि।]

[इच्छामि भंते! संवच्छरियम्मि आलोचेउं, बारसण्हं मासाणं, चउवीसण्हं पक्खाणं, तिण्हं - छावट्ठि - सय-दिवसाणं, तिण्हं - छावट्ठि - सय - राईणं अब्भंतरादो, पंचविहो आयारो, णाणायारो, दंसणायारो, तवायारो, वीरियायारो, चरित्तायारो चेदि ।]

तत्थ णाणायारो अट्ठविहो—काले, विणए, उवहाणे, बहुमाणे, तहेव अणिण्हवणे, विंजण-अत्थ-तदुभये चेदि । णाणायारो अट्ठविहो परिहाविदो, से अक्खरहीणं वा, सरहीणं वा, विंजणहीणं वा, पदहीणं वा, अत्थहीणं वा, गंथहीणं वा, थएसु वा, थुइसु वा, अत्थक्खाणेसु वा, अणियोगेसु वा, अणियोगद्दारेसु वा, अकाले सज्झाओ कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, काले वा परिहाविदो, अच्छाकारिदं वा, मिच्छामेलिदं वा, आमेलिदं, वामेलिदं, अण्णहादिण्हं, अण्णहापडिच्छिदं, आवासएसु परिहीणदाए तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥१॥

दंसणायारो अट्ठविहो

णिस्संकिय णिक्कंक्खिय, णिव्विदिगिंच्छा अमूढदिट्ठी य ।
उवगूहण ठिदिकरणं, वच्छल्ल - पहावणा चेदि ॥

दंसणायारो अट्ठविहो परिहाविदो, संकाए, कंखाए, विदिगिंछाए, अण्ण - दिट्ठी - पसंसणदाए, पर-पासंड-पसंसणदाए, अणायदण - सेवणाए, अवच्छल्लदाए, अपहावणाए, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥२॥

तवायारो बारहविहो अब्भंतरो छव्विहो, बाहिरो छव्विहो चेदि । तत्थ बाहिरो अणसणं, आमोदरियं,

वित्ति-परिसंखा, रस-परिच्चाओ, सरीर-परिच्चाओ, विवित्त-सयणासणं चेदि । तत्थ अब्भंतरो पायच्छित्तं-विणओ, वेज्जावच्चं, सज्झाओ, विउस्सग्गो, झाणं चेदि । अब्भंतरं बाहिरं बारहविहं तवोकम्मं, ण कदं, णिसण्णेण पडिक्कंतं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥३॥

वीरियायारो पंचविहो परिहाविदो - वर-वीरिय-परिक्कमेण, जहुत्तमाणेण, बलेण, वीरिएण, परिक्कमेण णिगूहियं, तवो-कम्मं, ण कदं, णिसण्णेण पडिक्कंतं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥४॥

चरित्तायारो तेरहविहो परिहाविदो - पंच-महव्वदाणि, पंच-समिदीओ, ति-गुत्तीओ चेदि । तत्थ पढमे महव्वदे पाणादिवादादो वेरमणं से पुढविकाइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, आउकाइया जीवा असंखेज्जा-संखेज्जा, तेउकाइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, वाउ-काइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, वणप्फदि-काइया जीवा अणंताणंता हरिया, बीआ, अंकुरा, छिण्णा, भिण्णा, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

बे-इंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा कुक्खि-किमि-संख-खुल्लय-वराडय-अक्ख-रिट्ठय-गंडवाल, संबुक्क-सिप्पि-पुलविय-आइया एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

ते-इंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा कुंथु-द्देहिय-विच्छिय-गोभिद-गोजुव-मक्कुण-पिपीलियाइया, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

चउ इंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा दंस-मसय-मक्खि-पयंग-कोड-भमर-महुयर-गोमच्छियाइया, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पंचिंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा अंडाइया, पोदाइया, जराइया, रसाइया, संसेदिमा, सम्मुच्छिमा, उब्भेदिमा, उववादिमा, अवि चउरासीदिजोणि-पमुह-सद-सहस्सेसु, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणु-मण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

वद-समिदिंदिय - रोधो, लोचावासय - मचेल-मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदंतवणं, ठिदि-भोयण-मेयभत्तं च ।।१।।

एदे खलु मूलगुणा, समणाणं जिणवरेहि पण्णत्ता ।
एत्थ पमाद - कदादो, अइचारादो णियत्तो हं ।।२।।

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं ।

क्षुल्लकालोचना-सहिता-क्षुल्लकाचार्यभक्तिः

अथ सर्वातिचार-विशुद्धयर्थं क्षुल्लकालोचनाचार्य-भक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम्—

(यहाँ पूर्ववत् 'णमो अरहंताणं' इत्यादि दण्डक बोलकर कायोत्सर्ग करें । पश्चात् 'थोस्सामि' इत्यादि दण्डक बोलकर नीचे लिखी लघु आचार्यभक्ति पढ़ें–)

लघुआचार्यभक्तिः

प्राज्ञः प्राप्त-समस्त-शास्त्र-हृदयः, प्रव्यक्त-लोक-स्थितिः,
प्रास्ताशः प्रतिभापरः प्रशमवान्, प्रागेव दृष्टोत्तरः ।
प्रायः प्रश्नसहः प्रभुः पर-मनोहारी परा-निन्दया,
ब्रूयाद् धर्मकथां गणी गुणनिधिः, प्रस्पष्टमिष्टाक्षरः ।१।

श्रुत-मविकलं, शुद्धा वृत्तिः, पर-प्रति-बोधने,
परिणतिरुरू—द्योगो मार्ग-प्रवर्तन-सद्विधौ ।
बुध-नुति-रनुत्सेको लोकज्ञता, मृदुता-स्पृहा,
यति-पति-गुणा, यस्मिन्नन्ये, च सोऽस्तु गुरुः सताम् ।२।

श्रुतजलधि-पारगेभ्यः,स्व-पर-मतविभावना-पटुमतिभ्यः ।
सुचरित-तपो-निधिभ्यो, नमो गुरुभ्यो गुण-गुरुभ्यः ।३।

छत्तीस-गुण-समग्गे, पञ्चविहाचार-करण-संदरिसे ।
सिस्साणुग्गह-कुसले, धम्मा-इरिए सया वंदे ।४।

गुरुभत्ति-संजमेण य, तरंति संसार-सायरं घोरम् ।
छिंदंति अट्ठ-कम्मं, जम्मण-मरणं ण पावेंति ।५।

ये नित्यं व्रत-मन्त्र-होम-निरता, ध्यानाग्नि-होत्राकुलाः,
षट्-कर्माभिरतास्तपोधन-धनाः, साधुक्रिया-साधवः ।
शील-प्रावरणागुण-प्रहरणाश्चन्द्रार्कतेजोऽधिकाः,
मोक्ष-द्वार-कपाट-पाटन-भटाः, प्रीणन्तु मां साधवः ।६।

गुरवः पान्तु वो नित्यं, ज्ञान-दर्शन-नायकाः ।
चारित्रार्णव-गम्भीरा, मोक्ष-मार्गोपदेशकाः ।७।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! आइरिय - भत्ति - काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण - सम्मदंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं पंचविहाचाराणं आइरियाणं, आयारादि-सुद-णाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं, ति-रयण-गुण-पालण-रयाणं सव्वसाहूणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ, बोहि-लाहो सुगइगमणं समाहि - मरणं जिणगुण - संपत्ति होदु मज्झं ।

वद-समिदिंदिय - रोधो, लोचावासय - मचेल - मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदंतवणं, ठिदि-भोयण-मेयभत्तं च ॥१॥
एदे खलु मूलगुणा, समणाणं जिणवरेहि पण्णत्ता ।
एत्थ पमाद - कदादो, अइचारादो णियत्तो हं ॥२॥

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं

अथ सर्वातिचार-विशुद्धयर्थं पाक्षिक/चातुर्मासिक/वार्षिक - प्रतिक्रमण - क्रियायां, कृतदोष - निराकरणार्थं पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं सिद्ध-चारित्र-प्रतिक्रमण-निष्ठितकरण-वीर-शान्ति-चतुर्विंशतितीर्थंकर-चारित्रालोचनाचार्य - बृहदा-लोचनाचार्य-मध्यमालोचनाचार्य - क्षुल्लकालोचनाचार्य-भक्तीः कृत्वा तद्धीनाधिकदोष-विशुद्धयर्थं आत्म-पवित्री-करणार्थं, समाधिभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम्—

(यहाँ पर आचार्यश्री सहित सर्व साधुगण पूर्ववत् दण्डक आदि बोलकर कायोत्सर्ग करें, पश्चात् चतुर्विंशति स्तव बोलकर समाधिभक्ति पढ़ें—)

समाधिभक्तिः

अथेष्टप्रार्थना

प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः ।
शास्त्राभ्यासो, जिनपति-नुतिः, सङ्गतिः सर्वदार्यैः,
सद्वृत्तानां गुण-गण-कथा, दोषवादे च मौनम् ।
सर्वस्यापि, प्रियहितवचो, भावना चात्मतत्त्वे,
सम्पद्यन्तां, मम भव-भवे, यावदेतेऽपवर्गः ॥१॥
तव पादौ मम हृदये, मम हृदयं तव पद-द्वये लीनम् ।
तिष्ठतु जिनेन्द्र ! तावद्, यावन्-निर्वाण-सम्प्राप्तिः ॥२॥
अक्खर-पयत्थ-हीणं, मत्ताहीणं च जं मए भणियम् ।
तं खमदु णाण-देवय ! मज्झ वि दुक्खक्खयं दिंतु ॥३॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! समाहिभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, रयणत्तय-सरूव-परमप्प-ज्झाण-लक्खण-समाहि-भत्तीए णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसंपत्ति होदु मज्झं ।

(यहाँ एक कायोत्सर्ग करें ।)

(इसके बाद सभी साधुगण निम्नलिखित क्रियानुसार आचार्यश्री को नमस्कार करें ।)

अथ आपराह्णिक-आचार्यवन्दना-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीसिद्धभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम्—

(यहाँ कायोत्सर्ग करें ।)

सम्मत्त-णाण-दंसण-वीरिय-सुहुमं तहेव अवगहणं ।
अगुरुलहु-मव्वावाहं, अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं ॥१॥

तव-सिद्धे णय-सिद्धे, संजम-सिद्धे चरित्त-सिद्धे य ।
णाणम्मि दंसणम्मि य, सिद्धे सिरसा णमस्सामि ॥२॥

इच्छामि भंते ! सिद्धभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं, अट्ठविह-कम्म-विप्पमुक्काणं, अट्ठगुण-संपण्णाणं, उड्ढलोय-मत्थयम्मि पयट्ठियाणं, तव-सिद्धाणं, णय-सिद्धाणं, संजम-सिद्धाणं, चरित्त-सिद्धाणं, अदीदाणागद-वट्टमाण-कालत्तय-सिद्धाणं, सव्व-सिद्धाणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

अथ आपराह्णिक-आचार्यवन्दना-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीश्रुतभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम्—

(२७ श्वासोच्छ्वास मे कायोत्सर्ग करें ।)

कोटीशतं द्वादश चैव कोट्यो,
लक्षाण्यशीति-स्त्र्यधिकानि चैव ।
पञ्चाशदष्टौ च सहस्र-संख्या-
मेतच्छ्रुतं पञ्चपदं नमामि ॥१॥

अरहंत-भासियत्थं, गणहरदेवेहि गंथियं सम्मं ।
पणमामि भत्तिजुत्तो, सुद-णाण-महोवहिं सिरसा ॥२॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! सुदभत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं अंगोवंग-पइण्णए-पाहुडय-परियम्म-सुत्त-पढमाणिओग-पुव्वगय-चूलिया चेव, सुत्तत्थय-थुइ-धम्म-कहाइयं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहिमरणं जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

अथ आपराह्णिक-आचार्यवन्दना-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीआचार्यभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम्—

(यहाँ कायोत्सर्ग करें ।)

श्रुतजलधि-पारगेभ्यः, स्वपरमत-विभावना-पटुमतिभ्यः ।
सुचरित-तपोनिधिभ्यो, नमो गुरुभ्यो गुणगुरुभ्यः ॥१॥

छत्तीस-गुण-समग्गे, पंचविहाचार-करण-संदरिसे ।
सिस्साणुग्गह-कुसले, धम्माइरिए सया वंदे ॥२॥

गुरुभत्ति-संजमेण य, तरंति संसार-सायरं घोरं ।
छिण्णंति अट्ठ-कम्मं, जम्मण-मरणं ण पावेंति ॥३॥

ये नित्यं व्रत-मन्त्र-होम-निरताः, ध्यानाग्नि-होत्राकुलाः,
षट्कर्माभिरता-स्तपोधन-धनाः, साधु-क्रियाः साधवः ।
शीलप्रावरणा-गुणप्रहरणाश्-चन्द्रार्क-तेजोऽधिका,
मोक्षद्वार-कपाट-पाटन-भटाः, प्रीणन्तु मां साधवः ॥४॥

गुरवः पान्तु नो नित्यं, ज्ञान-दर्शन-नायकाः ।
चारित्रार्णव-गम्भीराः, मोक्षमार्गोपदेशकाः ॥५॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! आइरियभत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं, सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं, पंचविहाचाराणं, आइरियाणं, आयारादिसुद-णाणोव-देसयाणं उवज्झायाणं, ति-रयण-गुणपालण-रयाणं सव्वसाहूणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

।। इति पाक्षिकादि-प्रतिक्रमणं समाप्तम् ।।

[1]प्रायश्चित्त-याचना-विधि

हे स्वामिन् ! पक्षे/चातुर्मासे/संवत्सरे अष्टाविंशति-मूलगुणेषु (आर्यिका-व्रत-क्रियायां) मनसा वचसा कर्मणा कृतकारितानुमोदनैः आहारे विहारे निहारे च रागेण द्वेषेण मोहेन भयेन लज्जया प्रमादेन वा, जागरणे स्वप्ने च ज्ञाताज्ञात-भावेन अतिक्रम-व्यतिक्रमातिचारा-नाचार इत्यादयो दोषाः लग्नाः तान् क्षमित्वा प्रायश्चित्त-दानेन शुद्धं करोतु माम् ।

१. प्रतिक्रमण के मध्य या अन्त में जहाँ भी गुरु से प्रायश्चित्त ग्रहण करना हो वहाँ यह बोलें ।

नैमित्तिक-क्रियाविधिः

अथ अष्टमीपर्व-क्रियाविधिः

अथ अष्टमीपर्व-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीसिद्धभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(यहाँ सर्वप्रथम नमस्कार करें, पश्चात् तीन आवर्त्त और एक शिरोनति कर निम्नलिखित सामायिक दण्डक पढ़ें ।)

सामायिक-दण्डक

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।

चत्तारि मंगलं—अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा—अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि—अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलि-पण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ।

अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णरस-कम्म-भूमिसु, जाव अरहंताणं, भयवंताणं, आदियराणं, तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं, सिद्धाणं, बुद्धाणं, परिणिव्वुदाणं, अंतयडाणं, पार-गयाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसयाणं, धम्म-णायगाणं, धम्म-वर-चाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहिदेवाणं, णाणाणं, दंसणाणं, चरित्ताणं, तवाणं सया करेमि, किरियम्मं ।

करेमि भंते ! सामाइयं सव्व-सावज्ज-जोगं, पच्चक्खामि, जावजीवं तिविहेण–मणसा वयसा काएण, ण करेमि, ण कारेमि, अण्णं करंतं पि ण समणुमण्णामि । तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि अप्पाणं, जाव अरहंताणं, भयवंताणं, पज्जुवासं करेमि, तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

(यहाँ तीन आवर्त्त एवं एक शिरोनति कर कायोत्सर्ग करें, पश्चात् नमस्कार कर आवर्त्त और शिरोनति करें ।)

चतुर्विंशतिस्तव पाठ

थोस्सामि हं जिणवरे, तित्थयरे केवली अणंतजिणे ।
णर-पवर-लोय-महिए, विहुय-रय-मले महप्पण्णे ॥१॥
लोयस्सुज्जोययरे, धम्मं तित्थयरे जिणे वंदे ।
अरहंते कित्तिस्से, चउवीसं चेव केवलिणो ॥२॥
उसह-मजियं च वंदे, संभव-मभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे ॥३॥
सुविहिं च पुप्फयंतं, सीयल सेयं च वासुपुज्जं च ।
विमल-मणंतं भयवं, धम्मं संतिं च वंदामि ॥४॥
कुंथुं च जिणवरिंदं, अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वंदे अरिट्ठ-णेमिं, तह पासं वड्ढमाणं च ॥५॥
एवं मए अभित्थुआ, विहुय-रय-मला पहीण-जर-मरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु ॥६॥
कित्तिय वंदिय महिया, एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा ।
आरोग्ग-णाण-लाहं, दिंतु समाहिं च मे बोहिं ॥७॥

चंदेहिं णिम्मलयरा, आइच्चेहिं अहिय-पया-संता ।
सायरमिव गंभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥८॥

(यहाँ तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करके निम्नलिखित सिद्धभक्ति पढ़ें—)

श्रीसिद्धभक्तिः

सिद्धानुद्धूत - कर्मप्रकृति-
समुदयान् साधितात्म - स्वभावान्,
वन्दे सिद्धि - प्रसिद्ध्यै
तदनुपमगुण - प्रग्रहाकृष्टि - तुष्टः ।
सिद्धिः स्वात्मोपलब्धिः
प्रगुण-गुणगणोच्छादि-दोषापहाराद्,
योग्योपादान - युक्त्या,
दृषद इह यथा हेमभावोपलब्धिः ॥१॥
नाभावः सिद्धिरिष्टा,
न निज-गुणहतिस्तत्-तपोभिर्न युक्तेः,
अस्त्यात्मानादि - बद्धः,
स्वकृतजफलभुक् तत्-क्षयान् मोक्षभागी ।
ज्ञाता द्रष्टा स्वदेह-
प्रमितिरुपसमाहार-विस्तारधर्मा,
ध्रौव्योत्पत्ति - व्ययात्मा,
स्व-गुण-युत-इतो नान्यथा साध्यसिद्धिः ॥२॥
स त्वन्तर्बाह्य - हेतु-
प्रभव-विमल-सद्दर्शन-ज्ञान-चर्या-
सम्पद्धेति - प्रघात-
क्षत-दुरिततया व्यञ्जिताचिन्त्य-सारैः ।

कैवल्यज्ञान - दृष्टि-
प्रवर-सुख-महावीर्य-सम्यक्त्व-लब्धि-
ज्योति - र्वातायनादि-
स्थिर-परम-गुणैरद्‌भुतै - र्भासमानः ॥३॥

जानन् पश्यन् समस्तं,
सम-मनुपरतं सम्प्रतृप्यन् वितन्वन्,
धुन्वन् ध्वान्तं नितान्तं,
निचित-मनुसभं प्रीणयन्-नीशभावम् ।
कुर्वन् सर्वप्रजाना-
मपरमभिभवन् ज्योतिरात्मान-मात्मा,
आत्मन्येवात्मनासौ,
क्षणमुपजनयन् सत्स्वयम्भूः प्रवृत्तः ॥४॥

छिन्दन् शेषानशेषान्,
निगलबल-कलींस्-तैरनन्त-स्वभावैः,
सूक्ष्मत्वाग्र्यावगाहागुरु-
लघुकगुणैः क्षायिकैः शोभमानः ।
अन्यैश्चान्य - व्यपोह-
प्रवणविषय-सम्प्राप्ति-लब्धि-प्रभावै-
रूर्ध्वव्रज्या - स्वभावात्,
समयमुपगतो धाम्नि सन्तिष्ठतेऽग्र्ये ॥५॥

अन्याकाराप्ति - हेतु-
र्न च भवति परो येन तेनाल्पहीनः,
प्रागात्मोपात्त - देह-
प्रतिकृतिरुचिराकार एव ह्यमूर्तः ।

क्षुत्-तृष्णा-श्वास-कास-
ज्वर-मरण-जराऽनिष्ट-योग-प्रमोह-
व्यापत्त्याद्युग्र-दुःख-
प्रभव-भवहृतेः कोऽस्य सौख्यस्य माता ॥६॥

आत्मोपादान-सिद्धं,
स्वय-मतिशयवद् वीतबाधं विशालं,
वृद्धि-ह्रास-व्यपेतं,
विषय-विरहितं निःप्रतिद्वन्द्व-भावम् ।
अन्य-द्रव्यानपेक्षं,
निरुपम-ममितं शाश्वतं सर्वकालं,
उत्कृष्टानन्त-सारं,
परम-सुख-मतस्तस्य सिद्धस्य जातम् ॥७॥

नार्थः क्षुत्-तृड्-विनाशाद्,
विविध-रस-युतै-रन्नपानैरशुच्या,
नास्पृष्टे-र्गन्धमाल्यै-
र्नहि-मृदुशयनै-र्ग्लानि-निद्राद्यभावात् ।
आतङ्कार्ते-रभावे,
तदुपशमन-सद्भेषजानर्थता-वद्,
दीपानर्थक्य-वद् वा,
व्यपगत-तिमिरे दृश्यमाने समस्ते ॥८॥

तादृक् सम्पत्-समेता,
विविध-नय-तपः संयम-ज्ञान-दृष्टि-
चर्या-सिद्धाः समन्तात्,
प्रवितत-यशसो विश्वदेवाधिदेवाः ।

भूता भव्या भवन्तः,

सकल-जगति ये स्तूयमाना विशिष्टैः,

तान् सर्वान् नौम्य-नन्तान्,

निजिगमिषु-ररं तत्स्वरूपं त्रिसन्ध्यम् ॥६॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! सिद्धभत्ति - काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं। सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं, अट्ठविह - कम्मविप्प - मुक्काणं, अट्ठगुण - संपण्णाणं, उड्ढलोय-मत्थयम्मि पयट्ठियाणं, तवसिद्धाणं, णय-सिद्धाणं, संजमसिद्धाणं, चरित्तसिद्धाणं, अदीदाणागद-वट्टमाण-कालत्तय-सिद्धाणं, सव्वसिद्धाणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

अथ अष्टमीपर्व-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीश्रुतभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम्—

(यहाँ आवर्त्त आदि पूर्णविधि सहित सामायिक दण्डक बोलकर कायोत्सर्ग करें, पश्चात् विधिवत् "थोस्सामि" इत्यादि बोलकर निम्नलिखित श्रुतभक्ति पढ़ें—)

श्रीश्रुतभक्तिः

स्तोष्ये संज्ञानानि, परोक्ष - प्रत्यक्ष - भेद - भिन्नानि ।

लोकालोक-विलोकन-लोलित-सल्लोक-लोचनानि सदा ॥१॥

मतिज्ञानस्य स्तुतिः

अभिमुख-नियमित-बोधन-
माभिनिबोधिक-मनिन्द्रियेन्द्रियजम् ।
बह्वाद्यवग्रहादिक-
कृतषट्त्रिंशत् - त्रिशत - भेदम् ॥२॥

विविधर्द्धि-बुद्धि-कोष्ठ-
स्फुटबीज-पदानुसारि-बुद्ध्यधिकम् ।
संभिन्न - श्रोतृ - तया
सार्धं श्रुतभाजनं वन्दे ॥३॥

श्रुतज्ञानस्य स्तुतिः

श्रुतमपि जिनवर-विहितं,गणधररचितं द्व्यनेक-भेदस्थम् ।
अङ्गाङ्गबाह्य-भावित-मनन्त-विषयं नमस्यामि ॥४॥

भावश्रुतज्ञानं

पर्यायाक्षर - पद - संघात - प्रतिपत्तिकानुयोग - विधीन् ।
प्राभृतक - प्राभृतकं, प्राभृतकं वस्तु पूर्वं च ॥५॥

तेषां समासतोऽपि च, विंशति-भेदान् समश्नुवानं तत् ।
वन्दे द्वादशधोक्तं, गम्भीर-वर-शास्त्र - पद्धत्या ॥६॥

श्रुतज्ञानस्य द्वादशभेदाः

आचारं सूत्रकृतं, स्थानं समवाय - नामधेयं च ।
व्याख्या - प्रज्ञप्तिं च, ज्ञातृकथोपासकाध्ययने ॥७॥

वन्देऽन्तकृद्दश - मनुत्तरोपपादिकदशं दशावस्थम् ।
प्रश्नव्याकरणं हि, विपाकसूत्रं च विनमामि ॥८॥

दृष्टिवादांगस्तुतिः

परिकर्म च सूत्रं च, स्तौमि प्रथमानुयोग-पूर्वगते ।
सार्द्धं चूलिकयापि च, पञ्चविधं दृष्टिवादं च ॥६॥
पूर्वगतं तु चतुर्दश-धोदित-मुत्पादपूर्व-माद्यमहम् ।
आग्रायणीय - मीडे, पुरु - वीर्यानुप्रवादं च ॥१०॥
संततमहमभिवन्दे, तथास्ति-नास्ति-प्रवादपूर्वं च ।
ज्ञानप्रवाद - सत्य - प्रवाद - मात्मप्रवादं च ॥११॥
कर्मप्रवाद - मीडेऽथ, प्रत्याख्यान - नामधेयं च ।
दशमं विद्याधारं, पृथु - विद्यानुप्रवादं च ॥१२॥
कल्याण - नामधेयं, प्राणावायं क्रियाविशालं च ।
अथ लोकबिन्दुसारं, वन्दे लोकाग्रसारपदम् ॥१३॥
दश च चतुर्दश चाष्टा-वष्टादश च द्वयो-र्द्विषट्कं च ।
षोडश च विंशतिं च, त्रिंशतमपि पञ्चदश च तथा ॥१४॥
वस्तूनि दश दशान्ये-ष्वनुपूर्वं भाषितानि पूर्वाणाम् ।
प्रतिवस्तु प्राभृतकानि, विंशतिं विंशतिं नौमि ॥१५॥

आग्रायणीयपूर्वस्य चतुर्दशाधिकाराः

पूर्वान्तं ह्यपरान्तं, ध्रुव-मध्रुव-च्यवनलब्धि-नामानि ।
अध्रुव-सम्प्रणिधिं चा-प्यर्थं भौमावयाद्यं च ॥१६॥
सर्वार्थ - कल्पनीयं, ज्ञानमतीतं त्वनागतं कालम् ।
सिद्धि-मुपाध्यं च तथा, चतुर्दश-वस्तूनि द्वितीयस्य ॥१७॥

कर्मप्रकृतेः चतुर्विंशति-अनुयोगनामानि

पञ्चमवस्तु - चतुर्थ - प्राभृतकस्यानुयोग - नामानि ।
कृतिवेदने तथैव, स्पर्शन - कर्मप्रकृतिमेव ॥१८॥

बन्धन - निबन्धन - प्रक्रमा-नुपक्रम - मथाभ्युदय-मोक्षौ ।
सङ्क्रमलेश्ये च तथा, लेश्यायाः कर्म-परिणामौ ॥१९॥

सात - मसातं दीर्घं, ह्रस्वं भवधारणीय - संज्ञं च ।
पुरुपुद्गलात्मनाम च, निधत्त-मनिधत्त-मभिनौमि ॥२०॥

सनिकाचितमनिकाचित-मथ कर्मस्थितिक-पश्चिम-स्कन्धौ
अल्पबहुत्वं च यजे, तद्द्वाराणां चतुर्विंशम् ॥२१॥

द्वादशाङ्गश्रुतज्ञानस्य पदसंख्या

कोटीनां द्वादशशत - मष्टापञ्चाशतं सहस्राणाम् ।
लक्षत्र्यशीति-मेव च, पञ्च च वन्दे श्रुतपदानि ॥२२॥

एकैकपदस्य अक्षरसंख्या

षोडशशतं चतुस्त्रिंशत् कोटीनां त्र्यशीति-लक्षाणि ।
शतसंख्याष्टा-सप्तति-मष्टाशीतिं च पद-वर्णान् ॥२३॥

अंगबाह्यभेदानां स्तुतिः

सामायिकं चतुर्विंशतिस्तवं वन्दना प्रतिक्रमणम् ।
वैनयिकं कृतिकर्म च, पृथु-दशवैकालिकं च तथा ॥२४॥

वर-मुत्तराध्ययन-मपि, कल्पव्यवहार-मेव-मभिवन्दे ।
कल्पाकल्पं स्तौमि, महाकल्पं पुण्डरीकं च ॥२५॥

परिपाटया प्रणिपतितोऽस्म्यहं महापुण्डरीकनामैव ।
निपुणान्यशीतिकं च, प्रकीर्णकान्यङ्ग-बाह्यानि ॥२६॥

अवधिज्ञानस्य स्तुतिः

पुद्गल - मर्यादोक्तं, प्रत्यक्षं सप्रभेद-मवधिं च ।
देशावधि - परमावधि - सर्वावधि-भेद-मभिवन्दे ॥२७॥

मनःपर्ययज्ञानस्य स्तुतिः

परमनसि स्थितमर्थं, मनसा परिविद्य मंत्रि-महित-गुणम् ।
ऋजु-विपुलमति-विकल्पं,स्तौमि मनः पर्ययज्ञानम् ।।२८।।

केवलज्ञानस्य स्तुतिः

क्षायिक-मनन्त-मेकं, त्रिकाल-सर्वार्थ-युगपदवभासम् ।
सकल-सुख-धाम सततं, वन्देऽहं केवलज्ञानम् ।।२९।।

स्तुतेः फलप्रार्थना

एवमभिष्टुवतो मे, ज्ञानानि समस्त-लोक-चक्षूंषि ।
लघु भवताज्ज्ञानर्द्धि-र्ज्ञानफलं सौख्य-मच्यवनम् ।।३०।।

इच्छामि भंते ! सुदभत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं । अंगोवंग-पइण्णए पाहुडय-परियम्म-सुत्त-पढमाणिओग-पुव्वगय-चूलिया चेव, सुत्तत्थय-थुइ-धम्म-कहाइयं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वन्दामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहिमरणं जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

अथ अष्टमीपर्व-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीचारित्र-भक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(यहाँ आवर्त्त, शिरोनति और नमस्कार सहित दण्डक का उच्चारण कर कायोत्सर्ग करें, पश्चात् निम्नलिखित चारित्रभक्ति आलोचना सहित पढ़े—)

श्रीचारित्रभक्तिः

येनेन्द्रान् भुवनत्रयस्य विलसत्, केयूरहाराङ्गदान्,
भास्वन्मौलिमणिप्रभाप्रविसरोत्,तुङ्गोत्तमाङ्गान्नतान् ।

स्वेषां पाद - पयोरुहेषु मुनयश्चक्रुः प्रकामं सदा,
वन्दे पञ्चतयं तमद्य निगदन्, आचारमभ्यर्चितम् ॥१॥

ज्ञानाचार का स्वरूप

अर्थव्यञ्जन-तद्-द्वया - विकलता, कालोपधा - प्रश्रया
स्वाचार्याद्यनपह्नवो बहुमति-श्चेत्यष्टधा व्याहृतम्
श्रीमज्ज्ञाति-कुलेन्दुना भगवता, तीर्थस्य कर्त्राऽञ्जसा
ज्ञानाचारमहं त्रिधा प्रणिपताम्युद्धूतये कर्मणाम् ॥२

दर्शनाचार का स्वरूप

शङ्का-दृष्टि-विमोह-काङ्क्षण-विधि-व्यावृत्ति-सन्नद्धतां,
वात्सल्यं विचिकित्सना-दुपरतिं, धर्मोपबृंह - क्रियाम् ।
शक्त्या शासनदीपनं हितपथाद्, भ्रष्टस्य संस्थापनं,
वन्दे दर्शनगोचरं सुचरितं, मूर्ध्ना नमन्नादरात् ॥३॥

तपाचार (बाह्यतप) का स्वरूप

एकान्ते शयनोपवेशन - कृतिः, सन्तापनं तानवं,
संख्यावृत्ति - निबन्धना - मनशनं, विष्वाणमर्द्धोदरम् ।
त्यागं चेन्द्रिय - दन्तिनो मदयतः, स्वादो रसस्यानिशं,
षोढा बाह्यमहं स्तुवे शिवगति-प्राप्त्यभ्युपायं तपः ॥४॥

अन्तरङ्ग तपों का वर्णन

स्वाध्यायः शुभ - कर्मणश्च्युतवतः, संप्रत्यवस्थापनं,
ध्यानं व्यापृति-रामयाविनि गुरौ, वृद्धे च बाले यतौ ।
कायोत्सर्जन - सत्क्रिया विनय इ-त्येवं तपः षड्-विधं,
वन्देऽभ्यन्तर-मन्तरङ्ग-बलवद्, विद्वेषि विध्वंसनम् ॥५॥

वीर्याचार का वर्णन

सम्यग्ज्ञान - विलोचनस्य दधतः, श्रद्धान - मर्हन् - मते,
वीर्यस्याविनिगूहनेन तपसि, स्वस्य प्रयत्नाद् यतेः ।
या वृत्तिस्तरणीव नौ - रविवरा, लघ्वी भवोदन्वतो,
वीर्याचारमहं तमूर्जितगुणं, वन्दे सतामर्चितम् ।।६।।

चारित्राचार का वर्णन

तिस्रः सत्तमगुप्तयस्तनु - मनो - भाषा - निमित्तोदयाः,
पञ्चेर्यादि-समाश्रयाः समितयः, पञ्च-व्रतानीत्यपि ।
चारित्रोपहितं त्रयोदशतयं, पूर्वं न दृष्टं परै-
राचारं परमेष्ठिनो जिनपते-र्वीरं नमामो वयम् ।।७।।

पञ्चाचार पालने वाले मुनिराजों की वन्दना

आचारं सह - पञ्चभेद - मुदितं, तीर्थं परं मङ्गलं,
निर्ग्रन्थानपि सच्चरित्र-महतो, वन्दे समग्रान् यतीन् ।
आत्माधीन - सुखोदया - मनुपमां, लक्ष्मीमविध्वंसिनीं,
इच्छन् केवलदर्शनावगमन-प्राज्यप्रकाशोज्ज्वलाम् ।।८।।

चारित्र-पालन में दोषों की आलोचना

अज्ञानाद्यदवीवृतं नियमिनोऽवर्तिष्यहं चान्यथा,
तस्मिन्नर्जित-मस्यति प्रतिनवं, चैनो निराकुर्वति ।
वृत्ते सप्ततयीं निधिं सुतपसा - मृद्धि नयत्यद्भुतं,
तन्मिथ्या गुरुदुष्कृतं भवतु मे, स्वं निन्दतो निन्दितम् ।९।

चारित्र धारण करने का उपदेश

संसार-व्यसना-हृति-प्रचलिता, नित्योदयप्रार्थिनः,
प्रत्यासन्नविमुक्तयः सुमतयः, शान्तैनसः प्राणिनः ।
मोक्षस्यैव कृतं विशालमतुलं, सोपान-मुच्चै-स्तरां,
आरोहन्तु चरित्र-मुत्तम-मिदं, जैनेन्द्रमोजस्विनः ।।१०।।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! चरित्तभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, सम्मणाण-जोयस्स, सम्मत्ताहिट्ठियस्स, सव्व-पहाणस्स, णिव्वाण-मग्गस्स, कम्म-णिज्जरफलस्स, खमा-हारस्स, पंच-महव्वय-संपण्णस्स, तिगुत्ति-गुत्तस्स, पंच-समिदि-जुत्तस्स, णाणज्झाण - साहणस्स, समया इव पवेसयस्स, सम्मचरित्तस्स, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

चारित्रालोचना

इच्छामि भंते ! अट्ठमियम्मि आलोचेउं, अट्ठण्हं दिवसाणं, अट्ठण्हं राईणं, अब्भंतरादो पंचविहो आयारो णाणायारो, दंसणायारो, तवायारो, वीरियायारो, चरित्तायारो चेदि ।

तत्थ णाणायारो अट्ठविहो—काले, विणए, उवहाणे, बहुमाणे, तहेव अणिण्हवणे, विंजण-अत्थ-तदुभये चेदि । णाणायारो अट्ठविहो परिहाविदो, से अक्खरहीणं वा, सरहीणं वा, विंजणहीणं वा, पदहीणं वा, अत्थहीणं वा, गंथहीणं वा, थएसु वा, थुइसु वा, अत्थक्खाणेसु वा, अणियोगेसु वा, अणियोगद्दारेसु वा, अकाले सज्झाओ कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, काले वा परिहाविदो, अच्छाकारिदं वा, मिच्छामेलिदं वा, आमेलिदं, वामेलिदं, अण्णहादिण्हं, अण्णहापडिच्छिदं, आवासएसु परिहीणदाए तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥१॥

दंसणायारो अट्ठविहो

णिस्संकिय णिकंक्खिय, णिव्विदिगिंच्छा अमूढदिट्ठी य।
उवगूहण ठिदिकरणं, वच्छल्ल-पहावणा चेदि ॥

दंसणायारो अट्ठविहो परिहाविदो, संकाए, कंखाए, विदिगिंछाए, अण्ण-दिट्ठी-पसंसणदाए, पर-पासंड-पसंसणदाए, अणायदण-सेवणाए, अवच्छल्लदाए, अपहावणाए, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥२॥

तवायारो बारहविहो अब्भंतरो छव्विहो, बाहिरो छव्विहो चेदि। तत्थ बाहिरो अणसणं, आमोदरियं, वित्ति-परिसंखा, रस-परिच्चाओ, सरीर-परिच्चाओ, विवित्त-सयणासणं चेदि। तत्थ अब्भंतरो पायच्छित्तं, विणओ, वेज्जावच्चं, सज्झाओ, विउस्सग्गो, झाणं चेदि। अब्भंतरं बाहिरं बारहविहं तवोकम्मं, ण कदं, णिसण्णेण पडिक्कंतं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥३॥

वीरियायारो पंचविहो परिहाविदो वर-वीरिय-परिक्कमेण, जहुत्तमाणेण, बलेण, वीरिएण, परिक्कमेण णिगूहियं, तवो-कम्मं, ण कदं, णिसण्णेण पडिक्कंतं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥४॥

चरित्तायारो तेरहविहो परिहाविदो पंच-महव्व-दाणि, पंच-समिदीओ, तिगुत्तीओ चेदि। तत्थ पढमे महव्वदे पाणादिवादादो वेरमणं से पुढविकाइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, आउकाइया जीवा असंखेज्जा-संखेज्जा, तेउकाइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, वाउ-काइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, वणप्फदि-काइया

जीवा अणंताणंता हरिया, बीआ, अंकुरा, छिण्णा, भिण्णा, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

बे-इंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा कुक्खि-किमि-संख-खुल्लय-वराडय-अक्ख-रिट्ठय-गंडवाल-संबुक्क-सिप्पि-पुलविय-आइया एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

ते-इंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा कुंथु-द्देहिय-विच्छिय-गोभिद-गोजुव-मक्कुण-पिपीलियाइया, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

चउ-इंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा दंस-मसय-मक्खि-पयंग-कीड-भमर-महुयर-गोमच्छियाइया, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पंचिंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा अंडाइया, पोदाइया, जराइया, रसाइया, संसेदिमा, सम्मुच्छिमा, उब्भेदिमा, उववादिमा, अवि चउरासीदिजोणि-पमुह-सद-सहस्सेसु, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणु-मण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥१॥

अहावरे विदिए महव्वदे मुसावादादो वेरमणं से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, राएण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हासेण वा, भएण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पेम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, अणादरेण वा, अणेण केण वि कारणेण जादेण वा, सव्वो मुसावादो भासिओ, भासाविओ, भासिज्जंतो वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥२॥

अहावरे तिदिए महव्वदे अदिण्णादाणादो वेरमणं से गामे वा, णयरे वा, खेडे वा, कव्वडे वा, मडंवे वा, मंडले वा, पट्टणे वा, दोणमुहे वा, घोसे वा, आसमे वा, सहाए वा, संवाहे वा, सण्णिवेसे वा, तणं वा, कट्ठं वा, वियडिं वा, मणिं वा, एवमाइयं अदिण्णं गिण्हियं, गेण्हावियं, गेण्हिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥३॥

अहावरे चउत्थे महव्वदे मेहुणादो वेरमणं से देविएसु वा, माणुसिएसु वा, तेरिच्छिएसु वा, अचेयणिएसु वा, मणुण्णामणुण्णेसु रूवेसु, मणुण्णामणुण्णेसु सद्देसु, मणुण्णामणुण्णेसु गंधेसु, मणुण्णामणुण्णेसु रसेसु, मणुण्णामणुण्णेसु फासेसु, चक्खिंदिय-परिणामे, सोदिंदिय-परिणामे, घाणिंदिय-परिणामे, जिब्भिंदिय-परिणामे, फासिंदिय - परिणामे, णो-इंदिय - परिणामे, अगुत्तेण अगुत्तिदिएण, णवविहं बंभचरियं, ण रक्खियं, ण रक्खावियं, ण रक्खिज्जंतो वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥४॥

अहावरे पंचमे महव्वदे परिग्गहादो वेरमणं सो वि परिग्गहो दुविहो, अब्भंतरो बाहिरो चेदि । तत्थ अब्भंतरो परिग्गहो णाणावरणीयं, दंसणावरणीयं, वेयणीयं, मोहणीयं, आउग्गं, णामं, गोदं, अंतरायं चेदि अट्ठविहो । तत्थ बाहिरो परिग्गहो उवयरण-भंड-फलह-पीढ-कमंडलु-संथार-सेज्ज-उवसेज्ज,भत्त-पाणादि-भेएण अणेयविहो; एदेण परिग्गहेण अट्ठविहं कम्मरयं बद्धं, बद्धावियं, बज्झंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥५॥

अहावरे छट्ठे अणुव्वदे राइ-भोयणादो वेरमणं से असणं, पाणं, खाइयं, साइयं चेदि । चउव्विहो आहारो से तित्तो वा, कडुओ वा, कसाइलो वा, अमिलो वा, महुरो वा, लवणो वा, अलवणो वा, दुच्चिंतिओ, दुब्भासिओ, दुप्परिणामिओ, दुस्सुमिणिओ, रत्तीए भुत्तो, भुंजाविओ, भुंज्जिजंतो वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥६॥

पंचसमिदीओ इरियासमिदी, भासासमिदी, एसणासमिदी, आदाण-णिक्खेवण-समिदी, उच्चार-पस्सवण-खेल-सिंहाणय-वियडि-पइट्ठावण-समिदी चेदि ।

तत्थ इरियासमिदी पुव्वुत्तर - दक्खिण - पच्छिम चउदिस - विदिसासु, विहरमाणेण जुगंतर - दिट्ठिणा, भव्वेण दट्ठव्वा । डव-डव - चरियाए, पमाददोसेण, पाण-भूद-जीव-सत्ताणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥७॥

तत्थ भासासमिदी कक्कसा, कडुआ, परुसा, णिट्ठुरा, परकोहिणी, मज्झंकिसा, अइ-माणिणी, अणयंकरा, छेयंकरा, भूयाण-वहंकरा चेदि दसविहा भासा, भासिया, भासाविया, भासिज्जंता वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥८॥

तत्थ एसणासमिदी अहाकम्मेण वा, पच्छाकम्मेण वा, पुरा-कम्मेण वा, उद्दिट्ठयडेण वा, णिद्दिट्ठियडेण वा, कीडयडेण वा, साइया, रसाइया, सइंगाला, सधूमिया, अइगिद्धीए, अग्गीव, छण्हं जीवणिकायाणं विराहणं काऊण अपरिसुद्धं भिक्खं, अण्णं, पाणं, आहारियं, आहाराविय, आहारिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥९॥

तत्थ आदाण-णिक्खेवण-समिदी चक्कलं वा, फलहं वा, पोत्थयं वा, पीढं वा, कमण्डलुं वा, वियडिं वा, मणिं वा, एवमाइयं उवयरणं अप्पडिलेहिऊण-गेण्हंतेण वा, ठवंतेण वा, पाण-भूद-जीव-सत्ताणं, उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥१०॥

तत्थ उच्चार-पस्सवण-खेल-सिंहाणय-वियडि-पइट्ठावणियासमिदी रत्तीए वा, वियाले वा, अचक्खुविसए, अवत्थंडिले, अब्भोवयासे, सणिद्धे, सबीए, सहरिए, एवमाइयासु, अप्पासुग-ठाणेसु, पइट्ठावंतेण, पाण-भूद-जीव-सत्ताणं, उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥११॥

तिण्णि-गुत्तीओ मण-गुत्तीओ, वय-गुत्तीओ, काय-गुत्तीओ चेदि । तत्थ मण-गुत्ती अट्टज्झाणे, रुद्दज्झाणे, इह-लोय-सण्णाए, पर-लोय-सण्णाए, आहार-सण्णाए, भय-सण्णाए, मेहुण-सण्णाए, परिग्गह-सण्णाए, एवमाइयासु जा मण-गुत्ती, ण रक्खिया, ण रक्खाविया, ण रक्खिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥१२॥

तत्थ वय-गुत्ती इत्थि-कहाए, अत्थ-कहाए, भत्त-कहाए, राय-कहाए, चोर-कहाए, वेर-कहाए, पर-पासंड-कहाए, एवमाइयासु जा वय-गुत्ती ण रक्खिया, ण रक्खाविया, ण रक्खिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥१३॥

तत्थ कायगुत्ती चित्त-कम्मेसु वा, पोत्त-कम्मेसु वा, कट्ठ-कम्मेसु वा, लेप्प-कम्मेसु वा, लय-कम्मेसु वा, एवमाइयासु जा काय-गुत्ती, ण रक्खिया, ण रक्खाविया, ण रक्खिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥१४॥

दोसु अट्ट-रुद्द-संकिलेस-परिणामेसु, तीसु अप्प-सत्थ-संकिलेस-परिणामेसु, मिच्छाणाण-मिच्छादंसण-मिच्छा-चरित्तेसु, चउसु उवसग्गेसु, चउसु सण्णासु, चउसु पच्चएसु, पंचसु चरित्तेसु, छसु जीवणिकाएसु, छसु आवासएसु, सत्तसु भएसु, अट्ठसु मएसु, अट्ठसु सुद्धीसु, णवसु बंभचेर-गुत्तीसु, दससु समण-धम्मेसु, दससु धम्म-ज्झाणेसु, दससु मुंडेसु, दसविहेसु भत्तिसु, बारसेसु

संजमेसु, बावीसाए परीसहेसु, पणवीसाए भावणासु, पणवीसाए किरियासु, अट्ठारह-सील-सहस्सेसु, चउरासीदि - गुण - सय - सहस्सेसु, मूलगुणेसु, उत्तरगुणेसु अट्ठमियम्मि अदिक्कमो, वदिक्कमो, अइचारो, अणाचारो, आभोगो, अणाभोगो जो जादो तं पडिक्कमामि। तस्स मए पडिक्कंतं, मे सम्मत्त-मरणं, पंडिय-मरणं, वीरिय - मरणं, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं।

अथ अष्टमीपर्व-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्मक्षयार्थं, भावपूजा - वन्दना-स्तव-समेतं श्रीशान्ति-भक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(यहाँ विधिवत् कायोत्सर्ग करके निम्नलिखित शान्तिभक्ति पढ़ें ।)

श्रीशान्तिभक्तिः

शान्तिजिनं शशि-निर्मल-वक्त्रं,
शील - गुण - व्रत - संयम - पात्रम् ।
अष्ट-शतार्चित - लक्षण - गात्रं,
नौमि जिनोत्तम-मम्बुज-नेत्रम् ॥१॥

पञ्चममीप्सित - चक्रधराणां,
पूजितमिन्द्र - नरेन्द्र - गणैश्च ।
शान्तिकरं गण-शान्ति-मभीप्सुः,
षोडश - तीर्थकरं प्रणमामि ॥२॥

दिव्य-तरुः सुर-पुष्प-सुवृष्टि-
र्दुन्दुभिरासन - योजन - घोषौ ।

आतप - वारण - चामर-युग्मे,
यस्य विभाति च मण्डल-तेजः ॥३॥
तं जगदर्चित-शान्ति-जिनेन्द्रं,
शान्तिकरं शिरसा प्रणमामि ।
सर्वगणाय तु यच्छतु शान्तिं,
मह्यमरं पठते परमां च ॥४॥
येऽभ्यर्चिता मुकुट-कुण्डल-हार-रत्नैः,
शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुत-पाद-पद्माः ।
ते मे जिनाः प्रवर-वंश-जगत्-प्रदीपाः,
तीर्थंकराः सतत-शान्तिकरा भवन्तु ॥५॥
सम्पूजकानां प्रतिपालकानां,
यतीन्द्र - सामान्य - तपोधनानाम् ।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः,
करोतु शान्तिं भगवान् जिनेन्द्रः ॥६॥
क्षेमं सर्व - प्रजानां,
प्रभवतु बलवान्, धार्मिको भूमिपालः ।
काले - काले च वृष्टिं,
वर्षतु मघवा, व्याधयो यान्तु नाशम् ।
दुर्भिक्षं चौर - मारी,
क्षणमपि जगतां, मा स्म भूज्जीवलोके ।
जैनेन्द्रं धर्म - चक्रं,
प्रभवतु सततं सर्व-सौख्य-प्रदायि ॥७॥

इच्छामि भंते ! संतिभत्ति - काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, पंच-महाकल्लाण-संपण्णाणं, अट्ठ-महा-

पाडिहेर-सहियाणं, चउतीसातिसय-विसेस-संजुत्ताणं, बत्तीस-देवेन्द-मणिमय-मउड-मत्थय-महियाणं, बलदेव-वासुदेव-चक्कहर-रिसि-मुणि-जदि-अणगारोवगूढाणं, थुइ-सय-सहस्स-णिलयाणं, उसहाइ-वीर-पच्छिम-मंगल-महापुरिसाणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

अथ अष्टमीपर्व-क्रियायां, पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीसिद्धभक्ति, श्रुतभक्तिं, वृहदालोचनापूर्वक-चारित्रभक्तिं, शान्ति-भक्ति च कृत्वा तद्धीनाधिक-दोष-विशुद्धयर्थं आत्म-पवित्रीकरणार्थं, समाधिभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(विधिवत् कायोत्सर्ग करके नीचे लिखी समाधिभक्ति पढ़ें—)

समाधिभक्तिः

स्वात्माभिमुख-संवित्ति, लक्षणं श्रुत-चक्षुषा ।
पश्यन् पश्यामि देव ! त्वां, केवलज्ञान-चक्षुषा ॥१॥

शास्त्राभ्यासो, जिनपति-नुतिः, सङ्गतिः सर्वदार्यैः;
सद्वृत्तानां, गुणगण-कथा, दोषवादे च मौनम् ।
सर्वस्यापि, प्रियहितवचो, भावना चात्मतत्त्वे;
सम्पद्यन्तां, मम भव-भवे, यावदेतेऽपवर्गः ॥२॥

जैनमार्ग-रुचि-रन्यमार्ग-निर्वेगता,
जिनगुण-स्तुतौ मतिः ।
निष्कलङ्क-विमलोक्ति-भावनाः,
सम्भवन्तु मम जन्म-जन्मनि ॥३॥

गुरु-मूले यति-निचिते, चैत्य-सिद्धान्त-वार्धि-सद्घोषे ।
मम भवतु जन्म-जन्मनि, संन्यसन-समन्वितं मरणम् ।४।

जन्म - जन्म - कृतं पापं, जन्म - कोटि - समार्जितम् ।
जन्म - मृत्यु - जरा - मूलं, हन्यते जिनवन्दनात् ।।५।।

आबाल्याज्जिनदेव - देव भवतः, श्रीपादयोः सेवया,
सेवासक्त-विनेय-कल्पलतया, कालोद्य यावद्-गतः ।
त्वां तस्याः फलमर्थये तदधुना, प्राण-प्रयाण-क्षणे,
त्वन्नाम-प्रतिबद्ध-वर्ण-पठने, कण्ठोऽस्त्वकुण्ठो मम ।।६।।

तव पादौ मम हृदये, मम हृदयं तव पद-द्वये लीनम् ।
तिष्ठतु जिनेन्द्र तावद्, यावन्निर्वाण-सम्प्राप्तिः ।।७।।

एकापि समर्थेयं जिन-भक्ति-र्दुर्गतिं निवारयितुम् ।
पुण्यानि च पूरयितुं, दातुं मुक्ति-श्रियं कृतिनः ।।८।।

पंच अरिंजय-णामे, पंच य मदि-सायरे जिणे वंदे ।
पंच जसोयर - णामे, पंच य सीमंदरे वंदे ।।९।।

रयणत्तयं च वंदे, चउवीस-जिणे च सव्वदा वंदे ।
पंच गुरूणं वंदे, चारण-चरणं सदा वंदे ।।१०।।

अर्हमित्यक्षरं ब्रह्म - वाचकं परमेष्ठिनः ।
सिद्धचक्रस्य सद्बीजं, सर्वतः प्रणिदध्महे ।।११।।

कर्माष्टक - विनिर्मुक्तं, मोक्ष-लक्ष्मी - निकेतनम् ।
सम्यक्त्वादि - गुणोपेतं, सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ।।१२।।

आकृष्टिं सुर-सम्पदां विदधते, मुक्तिश्रियो वश्यता-
मुच्चाटं विपदां चतुर्गति-भुवां, विद्वेष-मात्मैनसाम् ।
स्तम्भं दुर्गमनं प्रति प्रयततो, मोहस्य सम्मोहनम्,
पायात् पञ्च-नमस्क्रियाक्षर-मयी, साराधना देवता ।१३।

अनन्तानन्त - संसार - सन्तति-च्छेद - कारणम् ।
जिनराज - पदाम्भोज - स्मरणं शरणं मम ॥१४॥
अन्यथा शरणं नास्ति, त्वमेव शरणं मम ।
तस्मात् कारुण्यभावेन, रक्ष - रक्ष जिनेश्वर ! ॥१५॥
नहि त्राता नहि त्राता, नहि त्राता जगत्-त्रये ।
वीतरागात् परो देवो, न भूतो न भविष्यति ॥१६॥
जिने भक्ति-र्जिने भक्ति - र्जिने भक्ति - र्दिने दिने ।
सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु, सदा मेऽस्तु भवे-भवे ॥१७॥
याचेऽहं याचेऽहं, जिन ! तव चरणारविन्दयो-र्भक्तिम् ।
याचेऽहं याचेऽहं, पुनरपि तामेव तामेव ॥१८॥
विघ्नौघाः प्रलयं यान्ति, शाकिनी - भूत - पन्नगाः ।
विषो निर्विषतां याति, स्तूयमाने जिनेश्वरे ॥१९॥

इच्छामि भंते ! समाहिभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं । रयणत्तय-सरूव-परमप्प-ज्झाण-लक्खणं समाहिभत्तीए णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

[1]चतुर्दशीक्रिया-विधिः

अथ चतुर्दशीपर्व-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीसिद्धभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम्—

१. चतुर्दशी की क्रिया त्रिकाल देववन्दना (सामायिक) में ही करने का विधान है ।

(यहाँ आवर्त्त, शिरोनति और नमस्कार आदि कर विधि-पूर्वक दण्डकपाठ पढ़ें ।)

(पृष्ठ ७४ से बृहद् सिद्धभक्ति पढ़ें ।)

अथ चतुर्दशीपर्व-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीचैत्यभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम्—

(यहाँ विधिवत् आवर्त्त, शिरोनति एवं नमस्कार पूर्वक सामायिक दण्डक तथा थोस्सामि पढ़ें ।)

श्रीचैत्यभक्तिः

जयति भगवान्, हेमाम्भोज-प्रचार-विजृम्भिता-
वमर-मुकुट-च्छायोद्गीर्ण-प्रभा-परिचुम्बितौ ।
कलुषहृदया, मानोद्भ्रान्ताः, परस्पर-वैरिणः,
विगतकलुषाः, पादौ यस्य, प्रपद्य-विशश्वसुः ॥१॥
तदनु जयति, श्रेयान् धर्मः, प्रवृद्ध-महोदयः,
कुगति-विपथ-क्लेशाद्योसौ, विपाशयति प्रजाः ।
परिणत-नय-स्यांगी-भावाद्, विविक्त-विकल्पितं,
भवतु भवतस्त्रातृ त्रेधा, जिनेन्द्र-वचोऽमृतम् ॥२॥
तदनु जयताज्जैनी वित्तिः, प्रभङ्ग-तरङ्गिणी,
प्रभव-विगम-ध्रौव्य-द्रव्य-स्वभाव-विभाविनी ।
निरुपम-सुखस्येदं द्वारं, विघट्य निरर्गलम्,
विगतरजसं मोक्षं देयान्, निरत्यय-मव्ययम् ॥३॥
अर्हत्-सिद्धाचार्योपाध्यायेभ्य-स्तथा च साधुभ्यः ।
सर्व-जगद्-वन्द्येभ्यो, नमोऽस्तु सर्वत्र सर्वेभ्यः ॥४॥

मोहादि-सर्व-दोषारिघातकेभ्यः सदा हत-रजोभ्यः ।
विरहित-रहस्-कृतेभ्यः, पूजार्हेभ्यो नमोऽर्हद्भ्यः ॥५॥

क्षान्त्यार्जवादि-गुणगण-सुसाधनं सकललोक-हित-हेतुम् ।
शुभ-धामनि धातारं, वन्दे धर्मं जिनेन्द्रोक्तम् ॥६॥

मिथ्याज्ञान-तमोवृत-लोकैक-ज्योति-रमित-गमयोगि- ।
साङ्गोपाङ्ग-मजेयं, जैनं वचनं सदा वन्दे ॥७॥

भवन-विमान-ज्योति-र्व्यन्तर-नरलोक-विश्वचैत्यानि ।
त्रिजगदभिवन्दितानां, त्रेधा वन्दे जिनेन्द्राणाम् ॥८॥

भुवनत्रयेऽपि भुवन-त्रयाधिपाभ्यर्च्य तीर्थकर्तॄणाम् ।
वन्दे भवाग्नि-शान्त्यै विभवानामालयालीस्ताः ॥९॥

इति पञ्च-महापुरुषाः, प्रणुता जिनधर्म-वचन-चैत्यानि ।
चैत्यालयाश्च विमलां, दिशन्तु बोधिं बुधजनेष्टाम् ॥१०॥

अकृतानि कृतानि चाप्रमेय-
द्युतिमन्ति द्युतिमत्सु मन्दिरेषु ।
मनुजामर-पूजितानि वन्दे,
प्रतिबिम्बानि जगत्त्रये जिनानाम् ॥११॥

द्युतिमण्डल-भासुराङ्ग-यष्टीः,
प्रतिमा अप्रतिमा जिनोत्तमानाम् ।
भुवनेषु विभूतये प्रवृत्ता,
वपुषा प्राञ्जलिरस्मि वन्दमानः ॥१२॥

विगतायुध-विक्रिया-विभूषाः,
प्रकृतिस्थाः कृतिनां जिनेश्वराणाम् ।
प्रतिमाः प्रतिमा-गृहेषु कान्त्या,
प्रतिमाः कल्मष-शान्तयेऽभिवन्दे ॥१३॥

कथयन्ति कषाय-मुक्ति-लक्ष्मीं,
परया शान्ततया भवान्तकानाम् ।
प्रणमाम्यभिरूप - मूर्तिमन्ति,
प्रतिरूपाणि विशुद्धये जिनानाम् ॥१४॥

यदिदं मम सिद्धभक्तिनीतं,
सुकृतं दुष्कृत - वर्त्म - रोधि तेन ।
पटुना जिनधर्म एव भक्ति-
र्भवताज्जन्मनि जन्मनि स्थिरा मे ॥१५॥

अर्हतां सर्वभावानां, दर्शन - ज्ञान—सम्पदाम् ।
कीर्तयिष्यामि चैत्यानि, यथाबुद्धि विशुद्धये ॥१६॥

श्रीमद् - भवन - वासस्थाः, स्वयं भासुरमूर्तयः ।
वन्दिता नो विधेयासुः, प्रतिमा परमां गतिम् ॥१७॥

यावन्ति सन्ति लोकेऽस्मिन्, नकृतानि कृतानि च ।
तानि सर्वाणि चैत्यानि, वन्दे भूयांसि भूतये ॥१८॥

ये व्यन्तरविमानेषु, स्थेयांसः प्रतिमा - गृहाः ।
ते च संख्यामतिक्रान्ताः, सन्तु नो दोषविच्छिदे ॥१६॥

ज्योतिषामथ लोकस्य, भूतयेऽद्भुत - सम्पदः ।
गृहाः स्वयम्भुवः सन्ति, विमानेषु नमामि तान् ॥२०॥

वन्दे सुर - किरीटाग्र - मणिच्छायाभिषेचनम् ।
याः क्रमेणैव सेवन्ते, तदर्चाः सिद्धिलब्धये ॥२१॥

इति स्तुति - पथातीत - श्रीभृता - मर्हतां मम ।
चैत्याना-मस्तु संकीर्ति, सर्वास्रव - निरोधिनी ॥२२॥

अर्हन्-महानदस्य,
त्रिभुवन-भव्यजन-तीर्थयात्रिक-दुरितम् ।
प्रक्षालनैककारण-
मतिलौकिक - कुहकतीर्थ - मुत्तमतीर्थम् ॥२३॥
लोकालोक-सुतत्त्व-
प्रत्यवबोधन - समर्थ - दिव्यज्ञान– ।
प्रत्यह-वहत्-प्रवाहं,
व्रत-शीलामल - विशाल-कूल - द्वितयम् ॥२४॥
शुक्लध्यान-स्तिमित-
स्थित-राजद् - राजहंस - राजितमसकृत्- ।
स्वाध्याय-मन्द्रघोषं,
नानागुण-समितिगुप्ति-सिकता-सुभगम् ॥२५॥
क्षान्त्यावर्त-सहस्रं,
सर्व-दया-विकच-कुसुम - विलसल् - लतिकम् ।
दुःसह-परीषहाख्य-
द्रुततर-रङ्गत्तरङ्ग - भङ्गुर - निकरम् ॥२६॥
व्यपगत-कषाय-फेनं,
रागद्वेषादि - दोष - शैवल - रहितम् ।
अत्यस्त-मोह-कर्दम-
मतिदूर-निरस्त - मरण-मकर - प्रकरम् ॥२७॥
ऋषि-वृषभ-स्तुति-मन्द्रोद्रेकित-
निर्घोष - विविध - विहग - ध्वानम् ।
विविध-तपोनिधि-पुलिनं,
सास्रव - संवरण - निर्जरा - निःस्रवणम् ॥२८॥

गणधर-चक्र-धरेन्द्र-
प्रभृति - महाभव्य - पुण्डरीकैः पुरुषैः ।
बहुभिः स्नातं भक्त्या,
कलि - कलुष - मलापकर्षणार्थ - ममेयम् ॥२९॥

अवतीर्णवतः स्नातुं,
ममापि दुस्तर - समस्त - दुरितं दूरम् ।
व्यपहरतु परम-पावन-
मनन्य-जय्य - स्वभाव-भाव - गम्भीरम् ॥३०॥

अताम्र-नयनोत्पलं, सकल-कोप-वह्ने-र्जयात्,
कटाक्ष - शर-मोक्षहीन - मविकारतोद्रेकतः ।
विषाद - मद - हानितः, प्रहसितायमानं सदा,
मुखं कथयतीव ते, हृदयशुद्धि-मात्यन्तिकीम् ॥३१॥

निराभरण - भासुरं, विगतराग - वेगोदयात्,
निरम्बर - मनोहरं, प्रकृति-रूप-निर्दोषतः ।
निरायुध-सुनिर्भयं, विगत-हिंस्य-हिंसाक्रमात्,
निरामिष-सुतृप्तिमद् विविधवेदनानां क्षयात् ॥३२॥

मित-स्थित - नखाङ्गजं, गतरजो-मल-स्पर्शनं,
नवाम्बुरुह-चन्दन-प्रतिम-दिव्य-गन्धोदयम् ।
रवीन्दु—कुलिशादि—दिव्य-बहु-लक्षणालङ्कृतं,
दिवाकर-सहस्र-भासुर-मपीक्षणानां प्रियम् ॥३३॥

हितार्थ-परिपन्थिभिः, प्रबल-राग-मोहादिभिः,
कलङ्कितमना-जनो, यदभिवीक्ष्य शोशुद्ध्यते ।
सदाभिमुखमेव यज्जगति पश्यतां सर्वतः,
शरद्-विमल-चन्द्रमण्डल-मिवोत्थितं दृश्यते ॥३४॥

तदेतदमरेश्वर-प्रचल-मौलि-माला-मणि-
स्फुरत्-किरण-चुम्बनीय-चरणारविन्दद्वयम् ।
पुनातु भगवज्जिनेन्द्र, तव रूपमन्धीकृतं,
जगत्-सकल-मन्य-तीर्थ-गुरुरूपदोषोदयैः ॥३५॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! चेइयभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं अहलोय, तिरियलोय, उड्ढलोयम्मि, किट्टिमाकिट्टिमाणि, जाणि जिण-चेइयाणि, ताणि सव्वाणि, तीसु वि लोएसु, भवणवासिय, वाणविंतर, जोइसिय, कप्पवासिय त्ति, चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गंधेण, दिव्वेण पुप्फेण, दिव्वेण धुव्वेण, दिव्वेण चुण्णेण, दिव्वेण वासेण, दिव्वेण ण्हाणेण, णिच्चकालं अच्चंति, पुज्जंति, वंदंति, णमस्संति । अहं वि इह संतो तत्थ संताइं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

अथ चतुर्दशीपर्व-क्रियायां, पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीश्रुतभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम्—

(यहाँ पर विधिवत् दण्डक पाठ बोलकर पश्चात् अञ्चलिका सहित पृ. १८८ से वृहद् श्रुतभक्ति पढ़ें ।)

अथ चतुर्दशीपर्व-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीपंचमहागुरु-भक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम्—

(यहाँ पर विधिवत् आवर्त्त, शिरोनति एवं नमस्कार आदि पूर्वक सामायिक दण्डक तथा थोस्सामि स्तव बोलें, पश्चात् निम्न-लिखित पञ्चमहागुरुभक्ति पढ़ें–)

श्रीपञ्चमहागुरुभक्तिः

श्रीमदमरेन्द्र-मुकुट-
प्रघटित-मणि-किरण-वारि-धाराभिः ।
प्रक्षालित-पद-युगलान्,
प्रणमामि जिनेश्वरान् भक्त्या ॥१॥
अष्टगुणैः समुपेतान्,
प्रणष्ट-दुष्टाष्ट-कर्मरिपु-समितीन् ।
सिद्धान् सतत-मनन्तान्,
नमस्करोमीष्ट-तुष्टि-संसिद्ध्यै ॥२॥
साचार-श्रुत-जलधीन्-
प्रतीर्य शुद्धोरुचरण-निरतानाम् ।
आचार्याणां पदयुग-
कमलानि दधे शिरसि मेऽहम् ॥३॥
मिथ्या-वादि-मदोग्र-ध्वान्त-प्रध्वन्सि-वचन-संदर्भान् ।
उपदेशकान् प्रपद्ये मम दुरितारि-प्रणाशाय ॥४॥
सम्यग्दर्शन-दीप-प्रकाशका-मेय-बोध-सम्भूताः ।
भूरि-चरित्र-पताकास्ते साधु-गणास्तु मां पान्तु ॥५॥
जिन-सिद्ध-सूरि-देशक-साधु-वरानमल-गुण-गणोपेतान् ।
पञ्च-नमस्कार-पदै-स्त्रि-सन्ध्य-मभिनौमि मोक्षलाभाय ॥

इच्छामि भंते ! पंचमहागुरुभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं अट्ठ-महापाडिहेर-संजुत्ताणं अरहंताणं,

अट्ठ-गुण-संपण्णाणं उड्ढलोय-मत्थयम्मि पइट्ठियाणं सिद्धाणं, अट्ठ-पवयण-माउया-संजुत्ताणं आइरियाणं, आयारादि-सुद-णाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं, ति-रयण-गुणपालण-रयाणं सव्वसाहूणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

अथ चतुर्दशीपर्व-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्मक्षयार्थं, भावपूजा - वन्दना - स्तव - समेतं श्रीशान्ति-भक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(यहाँ पर विधिवत् दण्डक पाठ बोलकर पश्चात् अञ्चलिका सहित पृष्ठ······ से श्रीशान्तिभक्ति पढ़ें ।)

अथ चतुर्दशीपर्व-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीसिद्धभक्ति, चैत्यभक्ति, श्रुतभक्ति, पञ्चमहागुरुभक्ति, शान्तिभक्ति च कृत्वा तद्धीनाधिक-दोष-विशुद्धयर्थं आत्मपवित्री-करणार्थं समाधिभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम्—

(यहाँ पर विधिवत् दण्डक बोलकर पश्चात् अञ्चलिका सहित पृ. २०४ से वृहद् समाधिभक्ति पढ़ें ।)

अथ पाक्षिकीक्रिया-विधिः

नोट :—यदि धर्म-व्यासंग आदि के कारण चतुर्दशी की क्रिया चतुर्दशी के दिन न कर पावें तो पूर्णिमा और अमावस्या के दिन पाक्षिकीक्रिया करनी चाहिए ।

अथ पाक्षिकी-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण............ श्रीसिद्धभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

यहाँ विधिवत् दण्डक बोलकर पश्चात् पृष्ठ ७४ से वृहद् सिद्धभक्ति बोलनी चाहिए ।

अथ पाक्षिकी-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण .... सालोचनाचारित्रभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

यहाँ विधिवत् दण्डक बोलकर पृ. १०२ से चारित्रभक्ति पढ़ें। पश्चात् वृहद् आलोचना (जो कि अष्टमी की क्रियाविधि में लिखी गई है, उसे) पढ़ें ।

अथ पाक्षिकी-क्रियायां .... श्रीचैत्यभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् दण्डक विधान बोलकर पृ. ५१ से वृहद् चैत्यभक्ति बोलनी चाहिए ।

अथ पाक्षिकी-क्रियायां .... श्रीपञ्चमहागुरु-भक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् दण्डक विधान सहित पृ. २१३ से पंचमहागुरुभक्ति बोलनी चाहिए ।

अथ पाक्षिकी-क्रियायां............ श्रीशान्तिभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् दण्डक विधान सहित पृष्ठ...... से शान्तिभक्ति बोलनी चाहिए ।

अथ पाक्षिकी-क्रियायां .... श्रीसिद्धसालोचना-चारित्र-चैत्य - पञ्चमहागुरु - शान्ति-भक्तीः च कृत्वा

तद्धीनाधिक - दोष - विशुद्ध्यर्थं आत्मपवित्रीकरणार्थं समाधिभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् दण्डक विधान सहित पृष्ठ २०४ से समाधिभक्ति बोलनी चाहिए ।

सिद्धप्रतिमा-दर्शन-क्रिया

अथ [1]सिद्धप्रतिमा-दर्शन - क्रियायां ... . श्रीसिद्धभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् दण्डक बोलकर पृष्ठ ७४ से अञ्चलिका सहित वृहद् सिद्धभक्ति बोलनी चाहिए ।

पूर्व-जिनचैत्य-वन्दना-क्रिया

अथ [2]पूर्व-जिनचैत्य-वन्दना-क्रियायां ... . श्रीसिद्धभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् दण्डकपूर्वक पृष्ठ ७४ से वृहद् सिद्धभक्ति पढ़ें ।

अथ पूर्व-जिनचैत्य-वन्दना - क्रियायां .... सालोचनाचारित्रभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् दण्डक बोलकर पहले पृष्ठ १९२ से चारित्रभक्ति पश्चात् वृहद् आलोचना पढ़नी चाहिए ।

---

१. प्रातिहार्यैर्विना-शुद्धं सिद्धं बिम्बमपीदृशः ... ... ।।७०।।
वसुनन्दि प्र० पाठ तृ० परिच्छेद ।

सिद्धेश्वराणां प्रतिमाऽपि योज्या, तत्प्रातिहार्यादि बिना तथैव ......
।।१८१।। जयसेन प्रतिष्ठा पाठ ।

अर्थात् सिद्धों की प्रतिमाएँ चिह्नों एवं प्रातिहार्यों से रहित होती हैं ।

२. विहार करते-करते छह माह से पूर्व (पहले) ही उसी प्रतिमा के दर्शन हों तो उसे पूर्व जिनचैत्य कहते हैं ।

अथ पूर्व-जिनचैत्य-वन्दना-क्रियायां .... श्रीचैत्यभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् दण्डक बोलकर पृ. २०७ से चैत्यभक्ति पढ़नी चाहिए।

अथ पूर्व-जिनचैत्य-वन्दना-क्रियायां .... श्रीपञ्चमहागुरुभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् दण्डक बोलकर पृष्ठ २१३ से पञ्चमहागुरुभक्ति पढ़नी चाहिए ।

अथ पूर्व-जिनचैत्य-वन्दना-क्रियायां .... श्रीशान्तिभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् दण्डक बोलकर पृष्ठ......से शान्तिभक्ति पढ़नी चाहिए ।

अथ पूर्व-जिनचैत्य-वन्दना-क्रियायां .... श्रीसिद्ध-सालोचनाचारित्र-चैत्य-पञ्चमहागुरु-शान्ति-भक्तीः च कृत्वा तद्धीनाधिक-दोष-विशुद्धयर्थं आत्म-पवित्रीकरणार्थं श्रीसमाधिभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् दण्डक बोलकर पृष्ठ २०४ से समाधिभक्ति पढ़नी चाहिए ।

अपूर्व-चैत्य-वन्दना-क्रियाविधिः

पूर्व जिन चैत्यवन्दना की जो विधि ऊपर लिखी है, वही विधि [१]अपूर्व चैत्य वन्दना की है, विशेष इतना है कि सिद्धभक्ति के बाद और चारित्रभक्ति के पूर्व श्रुतभक्ति पढ़नी चाहिए ।

---

१. जिस प्रतिमा के दर्शन पूर्व में कभी नहीं हुए हों उसे अपूर्व जिन चैत्य कहते हैं, अथवा व्यवहारी पुरुषों की परम्परा में एक बार दर्शन करने के बाद यदि छह माह तक दर्शन न हों, उसके बाद दर्शन हों तो उसे भी अपूर्व जिनचैत्य कहते हैं ।

अनेक-अपूर्व-चैत्य-वन्दना-क्रियाविधिः

अपूर्व चैत्य वन्दना की जो विधि है वही विधि [१]अनेक अपूर्व चैत्य वन्दना की है ।

अथ श्रुतपञ्चमी-क्रियाविधिः

अथ श्रुतस्कन्ध-प्रतिष्ठापन-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीसिद्धभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम्—

यहाँ विधिवत् सामायिक दण्डक और चतुर्विंशतिस्तव पढ़कर पृष्ठ ७४ से वृहद् सिद्धभक्ति पढ़नी चाहिए ।

अथ श्रुतस्कन्ध-प्रतिष्ठापन-क्रियायां .... श्रीश्रुतभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम्—

विधिवत् सामायिक दण्डक और चतुर्विंशतिस्तव पढ़कर पृष्ठ १८८ से वृहद् श्रुतभक्ति पढ़नी चाहिए ।

(इसके बाद श्रुतस्कन्ध की स्थापना कर श्रुतावतार का वर्णन करना चाहिए, पश्चात् नीचे लिखी विधि के अनुसार स्वाध्याय आदि करना चाहिए ।)

अथ स्वाध्याय-प्रतिष्ठापन-क्रियायां .... श्रीश्रुतभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर पृ. १८८ से वृहद् श्रुतभक्ति बोलनी चाहिए ।

---

१. यदि अनेक अपूर्व प्रतिमाओं के दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त हो जाय तो उन सब अपूर्व प्रतिमाओं मे से किसी एक अभिरुचित प्रतिमा के सम्मुख बैठकर जो क्रिया अपूर्व जिनचैत्यवन्दना विधि में की जाती है, वही क्रिया करनी चाहिए ।

**अथ स्वाध्याय-प्रतिष्ठापन-क्रियायां ....
श्रीआचार्यभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।**

(विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर पश्चात् निम्न-लिखित आचार्यभक्ति पढ़नी चाहिए ।

श्रीआचार्यभक्तिः

सिद्ध - गुण - स्तुति - निरता-
नुद्धूत-रुषाग्नि-जाल-बहुल-विशेषान् ।
गुप्तिभि - रभिसम्पूर्णान्,
मुक्तियुतः सत्य-वचन-लक्षित-भावान् ॥१॥

मुनि - माहात्म्य - विशेषान्,
जिनशासन - सत्प्रदीप - भासुर - मूर्तीन् ।
सिद्धिं प्रपित् सुमनसो,
बद्ध-रजो-विपुल-मूल-घातन-कुशलान् ॥२॥

गुण-मणि-विरचित-वपुषः,
षड्द्रव्य-विनिश्चितस्य धातॄन् सततम् ।
रहित - प्रमाद - चर्यान्,
दर्शनशुद्धान् गणस्य संतुष्टि-करान् ॥३॥

मोहच्छिदुग्र - तपसः,
प्रशस्त-परिशुद्ध-हृदय-शोभन-व्यवहारान् ।
प्रासुक - निलया - ननघा-
नाशाविध्वंसि - चेतसो हत-कुपथान् ॥४॥

धारित - विलसन् मुण्डान्,
वर्जितबहुदण्ड-पिण्ड-मण्डल - निकरान् ।

सकल - परीषह् - जयिनः,
क्रियाभिरनिशं प्रमादतः परिरहितान् ॥५॥
अचलान् व्यपेत - निद्रान्,
स्थानयुतान् कष्ट-दुष्ट-लेश्या-हीनान् ।
विधि - नानाश्रित - वासा-
नलिप्तदेहान् विनिर्जितेन्द्रिय-करिणः ॥६॥
अतुला - नुत्कुटिकासान्,
विविक्तचित्ता-नखण्डित-स्वाध्यायान् ।
दक्षिण - भाव - समग्रान्,
व्यपगत-मद - राग-लोभ - शठ-मात्सर्यान् ॥७॥
भिन्नार्त - रौद्र - पक्षान्,
सम्भावित-धर्म-शुक्ल-निर्मल - हृदयान् ।
नित्यं पिनद्ध - कुगतीन्,
पुण्यान् गण्योदयान् विलीन-गारव-चर्यान् ॥८॥
तरु - मूल - योग - युक्ता-
नवकाशाताप - योग - राग - सनाथान् ।
बहुजन - हितकर - चर्या-
नभया-ननघान् महानुभाव - विधानान् ॥९॥
ईदृश - गुण - सम्पन्नान्,
युष्मान् भक्त्या विशालया स्थिर-योगान् ।
विधि - नानारत - मग्रयान्,
मुकुलीकृत-हस्त-कमल-शोभित-शिरसा ॥१०॥
अभिनौमि सकल - कलुष-
प्रभवोदय-जन्म-जरा-मरण-बन्धन - मुक्तान् ।

शिव - मचल - मनघ - मक्षय-
मव्याहत-मुक्ति-सौख्य-मस्तु मे सततम् ॥११॥

इच्छामि भंते ! आइरियभत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं, सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं, पंचविहाचाराणं, आइरियाणं, आयारादिसुद-णाणोव-देसयाणं उवज्झायाणं, ति - रयण - गुणपालण - रयाणं सव्वसाहूणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

(पश्चात् यहाँ स्वाध्याय सम्पन्न करना चाहिए ।)

अथ स्वाध्याय-निष्ठापन-क्रियायां .... श्रीश्रुतभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर पृष्ठ १८८ से श्रुतभक्ति पढ़नी चाहिए ।

अथ श्रुतपञ्चमीपर्व - क्रियायां .... श्री-शान्तिभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर पृष्ठ ...... से शान्तिभक्ति पढ़नी चाहिए ।

अथ श्रुतपञ्चमीपर्व-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीसिद्ध-भक्ति, श्रुतभक्ति, आचार्यभक्ति, श्रुतभक्ति, शान्ति-भक्ति च कृत्वा तद्धीनाधिक-दोष-विशुद्ध्यर्थं, आत्म-पवित्रीकरणार्थं समाधिभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर पृष्ठ २०४ से वृहद् समाधिभक्ति पढ़नी चाहिए ।

अथ अष्टाह्निकपर्व-क्रियाविधिः

अष्टाह्निक पर्वों में अष्टमी के दिन सिद्धभक्ति के बाद और नन्दीश्वरभक्ति के पहले श्रुतभक्ति, चारित्रभक्ति और चारित्रालोचना करनी चाहिए तथा चतुर्दशी के दिन सिद्धभक्ति के बाद और नन्दीश्वरभक्ति के पूर्व चैत्यभक्ति एवं श्रुतभक्ति करनी चाहिए, शेष दिनों की विधि नीचे लिखी जा रही है ।

अथ अष्टाह्निकपर्व-क्रियायां .... श्री-सिद्धभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर पृष्ठ ७४ से वृहद् सिद्धभक्ति बोलनी चाहिए ।

अथ अष्टाह्निकपर्व-क्रियायां .... श्री-नन्दीश्वरभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर नीचे लिखी 'नन्दीश्वरभक्ति' पढ़नी चाहिए ।

अथ श्रीनन्दीश्वरभक्तिः

त्रिदशपति-मुकुट-तट-गत-
मणिगण-कर-निकर-सलिल-धारा-धौत-
क्रम-कमल-युगल-जिनपति-
रुचिर-प्रतिबिम्ब-विलय-विरहित-निलयान् ।१।

निलयानहमिह महसां,
सहसा-प्रणिपतन-पूर्व-मवनौम्यवनौ ।
त्रय्यां त्रय्या शुद्धया,
निसर्ग-शुद्धान् विशुद्धये घन-रजसाम् ।।२।।

भवनवासियों के विमानों के अकृत्रिम चैत्यालयों का वर्णन

भावनसुर - भवनेषु,
द्वासप्तति-शत-सहस्र-संख्याभ्यधिकाः ।
कोटयः सप्त प्रोक्ता,
भवनानां भूरि-तेजसां भुवनानाम् ॥३॥

व्यन्तर देवों के अकृत्रिम चैत्यालयों का वर्णन

त्रिभुवन - भूत - विभूनां,
संख्यातीतान्यसंख्य - गुण - युक्तानि ।
त्रिभुवन - जन - नयन-
मनःप्रियाणि भवनानि भौम-विबुध-नुतानि ।४।

ज्योतिष्क तथा वैमानिक देवों के अकृत्रिम चैत्यालयों का वर्णन

यावन्ति सन्ति कान्त-
ज्योति - र्लोकाधिदेवताभिनुतानि ।
कल्पेऽनेक - विकल्पे,
कल्पातीतेऽहमिन्द्र - कल्पानल्पे ॥५॥

विंशतिरथ त्रिसहिता,
सहस्र-गुणिता च सप्तनवतिः प्रोक्ता ।
चतुरधिकाशीतिरतः,
पञ्चक-शून्येन विनिहतान्यनघानि ॥६॥

मनुष्यक्षेत्र के अकृत्रिम चैत्यालयों की संख्या

अष्टापञ्चाशदत,
श्चतुः-शतानीह मानुषे क्षेत्रे ।
लोकालोक - विभाग-
प्रलोकनालोक-संयुजां-जयभाजाम् ॥७॥

तीनों लोकों के अकृत्रिम चैत्यालयों की संख्या

नव-नव-चतुःशतानि च,
सप्त च नवतिः सहस्रगुणिताः षट् च ।
पञ्चाशत्पञ्च - वियत्-
प्रहताः पुनरत्र कोटयोऽष्टौ प्रोक्ताः ॥८॥

एतावन्त्येव सता-
मकृत्रिमाण्यथ जिनेशिनां भवनानि ।
भुवन - त्रितये त्रिभुवन-
सुर-समिति-समर्च्यमान-सत्प्रतिमानि ॥९॥

मध्यलोक के ४५८ चैत्यालय

वक्षार - रुचक - कुण्डल-
रौप्य - नगोत्तर - कुलेषुकारनगेषु ।
कुरुषु च जिनभवनानि,
त्रिशतान्यधिकानि तानि षड्विंशत्या ॥१०॥

नन्दीश्वर द्वीप के चैत्यालय

नन्दीश्वर - सद्द्वीपे,
नन्दीश्वर-जलधि-परिवृते धृत-शोभे ।
चन्द्र-कर-निकर-सन्निभ-
रुन्द्र-यशोवितत - दिङ्मही-मण्डलके ॥११॥

तत्रत्याञ्जन-दधिमुख-
रतिकर-पुरु-नग-वराख्य - पर्वत - मुख्याः ।
प्रतिदिश-मेषा-मुपरि,
त्रयोदशेन्द्रार्चितानि जिनभवनानि ॥१२॥

आषाढ - कार्तिकाख्ये
फाल्गुनमासे च शुक्लपक्षेऽष्टम्याः ।
आरभ्याष्ट-दिनेषु च,
सौधर्म-प्रमुख-विबुधपतयो भक्त्या ॥१३॥

तेषु महामह-मुचितं,
प्रचुराक्षत - गन्ध - पुष्प - धूपै - र्दिव्यैः ।
सर्वज्ञ - प्रतिमाना-
मप्रतिमानां प्रकुर्वते सर्व - हितम् ॥१४॥

भेदेन वर्णना का,
सौधर्मः स्नपन - कर्तृता - मापन्नः ।
परिचारक-भावमिताः,
शेषेन्द्रा - रुन्द्र-चन्द्र - निर्मल - यशसः ॥१५॥

मङ्गल-पात्राणि पुनस्-
तद् देव्यो विभ्रतिस्म शुभ्र-गुणाढ्याः ।
अप्सरसो नर्तक्यः,
शेषसुरास्तत्र लोकनाव्यग्रधियः ॥१६॥

वाचस्पति - वाचामपि,
गोचरतां संव्यतीत्य यत्-क्रममाणम् ।
विबुधपति-विहित-विभवं,
मानुष-मात्रस्य कस्य शक्तिः स्तोतुम् ॥१७॥

निष्ठापित-जिन-पूजा-
श्चूर्ण-स्नपनेन दृष्ट-विकृत-विशेषाः ।
सुरपतयो नन्दीश्वर-
जिन-भवनानि प्रदक्षिणी-कृत्य पुनः ॥१८॥

पञ्चसु मन्दर-गिरिषु,
श्रीभद्रशाल - नन्दन - सौमनसम् ।
पाण्डुकवनमिति तेषु,
प्रत्येकं जिन - गृहाणि चत्वार्येव ॥१६॥

तान्यथ परीत्य तानि च,
नमसित्वा कृत - सुपूजनास्तत्रापि ।
स्वास्पदमीयुः सर्वे,
स्वास्पद-मूल्यं स्वचेष्टया संगृह्य ॥२०॥

नन्दीश्वर द्वीप के चैत्यालयों की विभूति

सहतोरण - सद्वेदी-
परीत-वन - यागवृक्ष - मानस्तम्भ- ।
ध्वज-पंक्ति-दशक-गोपुर-
चतुष्टय-त्रितय-शाल - मण्डप-वर्यैः ॥२१॥

अभिषेक-प्रेक्षणिका-क्रीडन-
सङ्गीत - नाटकालोक - गृहैः ।
शिल्पि-विकल्पित-कल्पन-
संकल्पातीत - कल्पनैः समुपेतैः ॥२२॥

वापी-सत्पुष्करिणी-
सुदीर्घिकाद्यम्बु - संसृतैः समुपेतैः ।
विकसित-जलरुह-कुसुमै-
र्नभस्यमानैः शशि-ग्रहर्क्षैः शरदि ॥२३॥

भृङ्गाराब्दक-कलशा-
द्युपकरणै - रष्टशतक - परिसंख्यानैः ।

प्रत्येकं चित्रगुणैः कृत-
झण-झण-निनद-वितत-घण्टाजालैः ॥२४॥

प्रभ्राजन्ते नित्यं,
हिरण्मयानीश्वरेशिनां भवनानि ।
गन्धकुटीगत-मृगपति,
विष्टर-रुचिराणि विविध-विभव-युतानि ।२५।

नन्दीश्वर के चैत्यालयों में स्थित प्रतिमाओं का वर्णन

येषु जिनानां प्रतिमाः,
पञ्चशत-शरासनोच्छ्रिताः सत्प्रतिमाः ।
मणि-कनक-रजत-विकृता,
दिनकर-कोटि-प्रभाधिक-प्रभ-देहाः ॥२६॥

तानि सदा वन्देऽहं,
भानु-प्रतिमानि यानि कानि च तानि ।
यशसां महसां प्रतिदिश-
मतिशय-शोभा-विभाञ्जि पाप-विभञ्जि ।२७।

तीर्थंकरों की स्तुति

सप्तत्यधिकशत-प्रिय-
धर्म-क्षेत्रगत-तीर्थंकर-वर-वृषभान् ।
भूत-भविष्यत्-संप्रति-
काल-भवान् भव-विहानये विनतोऽस्मि ॥२८॥

भगवान वृषभदेव का वर्णन

अस्यामवसर्पिण्यां वृषभजिनः,
प्रथम - तीर्थकर्ता भर्ता ।

अष्टापद-गिरि-मस्तक-
गत-स्थितो मुक्तिमाप पापान्मुक्तः ॥२६॥

भगवान वासुपूज्य की स्तुति

श्रीवासुपूज्य - भगवान्,
शिवासु पूजासु पूजितस्त्रिदशानाम् ।
चम्पायां दुरित-हरः,
परम - पदं प्रापदापदामन्तगतः ॥३०॥

नेमिनाथ स्वामी की स्तुति

मुदित-मति-बल-मुरारि-
प्रपूजितो जित-कषाय-रिपुरथ जातः ।
बृहदूर्जयन्तशिखरे शिखामणि-
स्त्रिभुवनस्य नेमि - र्भगवान् ॥३१॥

श्री महावीर स्वामी की स्तुति

पावापुर-वर-सरसां,
मध्यगतः सिद्धि-वृद्धि - तपसां महसाम् ।
वीरो नीरदनादो,
भूरि-गुणश्चारु-शोभमास्पद-मगमत् ॥३२॥

अवशेष बीस तीर्थंकरों का वर्णन

सम्मव-करि-वन-परिवृत-
सम्मेद - गिरीन्द्र - मस्तके विस्तीर्णे ।
शेषा ये तीर्थकराः,
कीर्तिभृतः प्रार्थितार्थ-सिद्धि-मवापन् ॥३३॥

अन्य सिद्ध स्थानों से मंगल प्रार्थना

शेषाणां केवलिनां,
अशेष-मतवेदि-गणभृतां साधूनाम् ।
गिरितल-विवर-दरी-सरि-
दुरुवन-तरु-विटपि-जलधि-दहन-शिखासु ।३४।
मोक्षगति-हेतु-भूत-
स्थानानि सुरेन्द्र-रुन्द्र-भक्ति-नुतानि ।
मङ्गल-भूतान्येता-
न्यङ्गीकृत-धर्म-कर्मणा-मस्माकम् ।।३५।।
जिनपतयस्तत्-प्रतिमाः,
तदालयास्तन्निषद्यका - स्थानानि ।
ते ताश्च ते च तानि च,
भवन्तु भव-घात-हेतवो भव्यानाम् ।।३६।।

तीनों समय नन्दीश्वरभक्ति करने का फल

सन्ध्यासु तिसृषु नित्यं,
पठेद्यदि स्तोत्र-मेतदुत्तम-यशसाम् ।
सर्वज्ञानां सार्वं,
लघु लभते श्रुतधरेडितं पदममितम् ।।३७।।

अरहंतों के शरीर सम्बन्धी दस अतिशय

नित्यं निःस्वेदत्वं,
निर्मलता क्षीर-गौर-रुधिरत्वं च ।
स्वाद्याकृति-संहनने,
सौरूप्यं सौरभं च सौलक्ष्म्यम् ।।१।।
अप्रमित-वीर्यता च,
प्रियहित-वादित्व-मन्यदमित-गुणस्य ।

प्रथिता दश-संख्याताः,
स्वतिशय-धर्माः स्वयंभुवो देहस्य ॥२॥

केवलज्ञान के दस अतिशय

गव्यूति-शत-चतुष्टय-
सुभिक्षता-गगन-गमन - मप्राणिवधः ।
भुक्त्युपसर्गाभाव-
श्चतुरास्यत्वं च सर्व-विद्येश्वरता ॥३॥
अच्छायत्व - मपक्ष्म-
स्पन्दश्च सम-प्रसिद्ध-नख - केशत्वम् ।
स्वतिशय-गुणा भगवतो,
घातिक्षयजा भवन्ति तेऽपि दशैव ॥४॥

देवकृत चौदह अतिशय

सार्वार्ध - मागधीया,
भाषा मैत्री च सर्व-जनता-विषया ।
सर्वर्तु - फल - स्तबक-
प्रवाल-कुसुमोपशोभित-तरु-परिणामा ॥५॥
आदर्शतल - प्रतिमा,
रत्नमयी जायते मही च मनोज्ञा ।
विहरण - मन्वेत्यनिलः,
परमानन्दश्च भवति सर्व-जनस्य ॥६॥
मरुतोऽपि सुरभि-गन्ध-
व्यामिश्रा योजनान्तरं भूभागम् ।
व्युपशमित-धूलि-कण्टक-
तृण - कीटक - शर्करोपलं प्रकुर्वन्ति ॥७॥

तदनु स्तनितकुमारा,
　　विद्युन्माला - विलास-हास - विभूषाः ।
प्रकिरन्ति सुरभि-गन्धि,
　　गन्धोदक-वृष्टि - माज्ञया त्रिदशपतेः ॥८॥

वर - पद्मराग - केसर-
　　मतुल - सुख-स्पर्श-हेम-मय-दल-निचयम् ।
पादन्यासे पद्मं,
　　सप्त पुरः पृष्ठतश्च सप्त भवन्ति ॥९॥

फलभार - नम्र - शालि-
　　व्रीह्यादि-समस्त-सस्य-धृत-रोमाञ्चा ।
परिहृषितेव च भूमि-
　　स्त्रिभुवननाथस्य वैभवं पश्यन्ती ॥१०॥

शरदुदय-विमल-सलिलं,
　　सर इव गगनं विराजते विगतमलम् ।
जहति च दिशस्तिमिरिकां,
　　विगतरजः प्रभृति-जिह्मताभावं सद्यः ॥११॥

एतेतेति त्वरितं,
　　ज्योति-र्व्यन्तर-दिवौकसा-ममृतभुजः ।
कुलिशभृदाज्ञापनया,
　　कुर्वन्त्यन्ये समन्ततो व्याह्वानम् ॥१२॥

स्फुरदरसहस्र-रुचिरं,
　　विमल-महारत्न - किरण-निकर-परीतम् ।
प्रहसित-किरण-सहस्र-
　　द्युति-मण्डल-मग्रगामि धर्म-सुचक्रम् ॥१३॥

इत्यष्ट-मङ्गलं च,
स्वादर्शप्रभृति भक्ति-राग-परीतैः ।
उपकल्प्यन्ते त्रिदशै-
रेतेऽपि निरुपमातिविशेषाः ॥१४॥

आठ प्रातिहार्यों का वर्णन

अशोक वृक्ष

वैडूर्य-रुचिर-विटप-
प्रवाल-मृदु-पल्लवोपशोभित-शाखः ।
श्रीमानशोक-वृक्षो,
वर-मरकत-पत्र-गहन-बहलच्छायः ॥१५॥

पुष्पवृष्टि

मन्दार-कुन्द-कुवलय-
नीलोत्पल-कमल-मालती-बकुलाद्यैः ।
समद-भ्रमर-परीतै-
र्व्यामिश्रा पतति कुसुम-वृष्टि-र्नभसः ॥१६॥

चामर

कटक-कटि-सूत्र-कुण्डल-
केयूर-प्रभृति-भूषिताङ्गौ स्वङ्गौ ।
यक्षौ कमल-दलाक्षौ,
परिनिक्षिपतः सलील-चामर-युगलम् ॥१७॥

भामण्डल

आकस्मिक-मिव युगपद्-
दिवसकर-सहस्र-मपगत-व्यवधानम् ।

भामण्डल - मविभावित-
रात्रि-दिव - भेद - मतितरामाभाति ॥१८॥

दुन्दुभिवाद्य

प्रबल-पवनाभिघात-
प्रक्षुभित - समुद्र - घोष-मन्द्र-ध्वानम् ।
दन्ध्वन्यते सुवीणा-
वंशादि-सुवाद्य - दुन्दुभिस्तालसमम् ॥१६॥

तीनछत्र

त्रिभुवन-पतिता-लाञ्छन-
मिन्दुत्रय-तुल्य-मतुल-मुक्ता-जालम् ।
छत्रत्रयं च सुबृहद्-
वैडूर्य-विक्लृप्त-दण्ड-मधिक-मनोज्ञम् ॥२०॥

दिव्यध्वनि

ध्वनिरपि योजनमेकं,
प्रजायते श्रोत्र - हृदयहारि - गभीरः ।
ससलिल-जलधर-पटल-
ध्वनितमिव प्रविततान्त-राशावलयम् ॥२१॥

सिंहासन

स्फुरितांशु-रत्न-दीधिति-
परिविच्छुरिता-मरेन्द्र-चापच्छायम् ।
ध्रियते मृगेन्द्रवर्यैः,
स्फटिकशिला-घटित-सिंह-विष्टर-मतुलम् ।२२।
यस्येह चतुस्त्रिंशत-
प्रवर-गुणा प्रातिहार्य-लक्ष्म्यश्चाष्टौ ।

तस्मै नमो भगवते,

त्रिभुवन-परमेश्वरार्हते गुण-महते ॥२३॥

इच्छामि भंते ! णंदीसरभत्ति-काउस्सग्गो कम्रो तस्सालोचेउं । णंदीसरदीवम्मि, चउदिसविदिसासु, अंजण-दधिमुह-रदिकर-पुरु-णगवरेसु, जाणि जिण-चेइयाणि ताणि सव्वाणि तीसु वि लोएसु भवणवासिय-वाणविंतर-जोइसिय-कप्पवासियत्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेहि गंधेहि, दिव्वेहि पुप्फेहि, दिव्वेहि धुव्वेहि, दिव्वेहि चुण्णेहि, दिव्वेहि वासेहि, दिव्वेहि ण्हाणेहि, आसाढ-कत्तिय-फागुण-मासाणं अट्ठमिमाइं काउण जाव पुण्णिमंति णिच्चकालं अच्चंति, पुज्जंति, वंदंति, णमस्संति, णंदीसर-महाकल्लाणं करंति । अहं वि इह संतो तत्थसंताइं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

अथ अष्टाह्निकपर्व-क्रियायां .... श्री-पञ्चमहागुरुभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर पृष्ठ २१३ से पञ्चमहागुरुभक्ति पढ़नी चाहिए ।

अथ अष्टाह्निकपर्व-क्रियायां .... श्री-शान्तिभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर पृष्ठ ...... से शान्तिभक्ति पढ़नी चाहिए ।

अथ अष्टाह्निकपर्व-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण,

सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं, श्रीसिद्ध-भक्ति, नन्दीश्वरभक्ति, पञ्चमहागुरुभक्ति, शान्ति-भक्ति च कृत्वा तद्धीनाधिक-दोष-विशुद्ध्यर्थं आत्म-पवित्रीकरणार्थं समाधिभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक एवं चतुर्विशतिस्तव बोलकर पृष्ठ २०४ से वृहद् समाधिभक्ति पढ़नी चाहिए ।

मंगल-गोचर-मध्याह्न-वन्दना-क्रियाविधिः

नोट :–वर्षायोग धारण और समापन के प्रथम दिन अर्थात् आषाढ़शुक्ला और कार्तिककृष्णा त्रयोदशी के दिन मध्याह्न देव-वन्दना निम्नलिखित विधि के अनुसार करनी चाहिए ।

अथ मङ्गलगोचर-मध्याह्नवन्दना-क्रियायां पूर्वा-चार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीसिद्धभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम्–

विधिवत् सामायिक-दण्डक एवं चतुर्विशतिस्तव पढ़कर पृष्ठ १८५ से वृहद् सिद्धभक्ति पढ़नी चाहिए ।

अथ मङ्गलगोचर-मध्याह्नवन्दना-क्रियायां…… …… श्रीचैत्यभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर पृष्ठ २०७ से वृहद् चैत्यभक्ति पढ़नी चाहिए ।

अथ मङ्गलगोचर-मध्याह्नवन्दना-क्रियायां …… श्रीपञ्चमहागुरुभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर पृष्ठ २१३ से पञ्चमहागुरुभक्ति पढ़नी चाहिए ।

अथ मङ्गलगोचर - मध्याह्न - वन्दना - क्रियायां ....श्रीशान्तिभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर पृष्ठ .... से शान्तिभक्ति पढ़नी चाहिए ।

अथ मङ्गलगोचर-मध्याह्न-वन्दना-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीसिद्धभक्ति, चैत्यभक्ति, पञ्चमहागुरुभक्ति, शान्तिभक्ति च कृत्वा तद्धीनाधिक - दोष - विशुद्धयर्थं आत्मपवित्रीकरणार्थं समाधिभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् दण्डक बोलकर पृष्ठ २०४ से समाधिभक्ति पढ़नी चाहिए ।

अथ मंगलगोचर-भक्तप्रत्याख्यान-क्रियाविधिः

(नोट :– मङ्गलगोचर-मध्याह्न-देववन्दना क्रिया के बाद सभी साधुओं को गुरु (आचार्य) के पास जाकर वर्षायोग धारण या समापन हेतु चतुर्दशी का उपवास ग्रहण करने के लिए निम्न-लिखित वृहत् (बड़ी) प्रत्याख्यानविधि करनी चाहिए ।)

अथ मङ्गलगोचर-भक्तप्रत्याख्यान-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीसिद्धभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् सामायिक-दण्डक, नौ जाप्य और 'थोस्सामि' करके पृष्ठ १८५ से वृहत् सिद्धभक्ति पढ़नी चाहिए ।

अथ मङ्गलगोचर-भक्तप्रत्याख्यान-क्रियायां .... श्रीयोगिभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् दण्डक बोलकर एवं कायोत्सर्ग कर पृष्ठ २३८ से

वृहद् योगिभक्ति पढ़ें । पश्चात् गुरुसाक्षीपूर्वक चतुर्विध आहार का त्याग करें ।

अथ मङ्गलगोचर - भक्तप्रत्याख्यान - क्रियायां आचार्य-वन्दना - क्रियायां .... श्रीआचार्यभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक, नौ जाप्य और थोस्सामि बोलकर पृष्ठ २१९ से वृहद् आचार्यभक्ति पढ़ें ।

अथ मङ्गलगोचर-भक्तप्रत्याख्यान-क्रियायां .... श्रीशान्तिभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर पृष्ठ .... से शान्तिभक्ति पढ़नी चाहिए ।

अथ मङ्गलगोचर-भक्तप्रत्याख्यान-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीसिद्धभक्ति, योगिभक्ति, आचार्यभक्ति, शान्ति-भक्ति च कृत्वा तद्धीनाधिक-दोष-विशुद्धयर्थं, आत्म-पवित्रीकरणार्थं श्रीसमाधिभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् सामायिक-दण्डक, कायोत्सर्ग और 'थोस्सामि' करके पृष्ठ २०४ से बड़ी समाधिभक्ति पढ़ें ।

नोट :—यह सब उपर्युक्त क्रिया त्रयोदशी को की जाएगी, पश्चात् सभी साधुओं को मिलकर आषाढ़ शुक्ला चतुर्दशी की पूर्वरात्रि में वर्षायोग-प्रतिष्ठापन (धारण) हेतु तथा कार्तिक कृष्णा चतुर्दशी की अपर (पिछली) रात्रि में वर्षायोग-निष्ठापन (समापन) हेतु निम्नलिखित क्रिया करनी चाहिए—

वर्षायोग-धारण/समापन-क्रियाविधिः

अथ वर्षायोग-प्रतिष्ठापन/निष्ठापन-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीसिद्धभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक, कायोत्सर्ग और 'थोस्सामि' बोलकर पृष्ठ १८५ से बड़ी सिद्धभक्ति पढ़ें ।

अथ वर्षायोग - प्रतिष्ठापन / निष्ठापन - क्रियायां .... श्रीयोगिभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक, कायोत्सर्ग और 'थोस्सामि' करने के पश्चात् नीचे लिखी योगिभक्ति पढ़ें—

श्रीयोगिभक्तिः

कैसे साधु, वन का आश्रय लेते हैं—

जाति-जरोरु-रोग - मरणातुर - शोक-सहस्र - दीपिताः,
दुःसह - नरक-पतन - संत्रस्त-धियः प्रतिबुद्ध - चेतसः ।
जीवितमम्बुबिन्दु - चपलं तडिदभ्रसमा विभूतयः,
सकलमिदं विचिन्त्य मुनयः,प्रशमाय वनान्तमाश्रिताः ।१।

वन में जाकर साधु क्या करते हैं ?

व्रत-समिति-गुप्ति-संयुताः,
शम-सुखमाधाय मनसि वीतमोहाः ।
ध्यानाध्ययन-वशङ्गताः,
विशुद्धये कर्मणां तपश्चरन्ति ।।२।।

ग्रीष्म ऋतु में मुनिराज क्या करते हैं ?

दिनकर-किरण-निकर-
संतप्त - शिला - निचयेषु निस्पृहाः,

मल-पटलावलिप्त-तनवः,
शिथिलीकृत - कर्मबन्धनाः ।
व्यपगत-मदन-दर्प-रति-
दोष-कषाय - विरक्त-मत्सराः,
गिरि-शिखरेषु चण्ड-
किरणाभिमुख - स्थितयो-दिगम्बराः ॥३॥

भयंकर आतप की वेदना को मुनिराज कैसे सहन करते हैं ?

सज्ज्ञानामृत-पायिभिः,
क्षान्ति-पयः सिञ्च्यमान-पुण्य-कायैः ।
धृत-सन्तोष-च्छत्रकै-
स्ताप-स्तीव्रोऽपि सह्यते मुनीन्द्रैः ॥४॥

वर्षा ऋतु में मुनिराज क्या करते हैं ?

शिखिगल - कज्जलालि-
मलिनै-र्विबुधाधिप-चाप-चित्रितैः,
भीम-रवै-र्विसृष्ट-चण्डा-
शनि - शीतल - वायु - वृष्टिभिः ।
गगनतलं विलोक्य जलदैः,
स्थगितं सहसा तपोधनाः ।
पुनरपि तरु-तलेषु,
विषमासु निशासु विशङ्कमासते ॥५॥

जलधारा की असह्य वेदना सहते हुए भी वे साधु चारित्र से चलायमान नहीं होते—

जलधारा - शर - ताडिता,
न चलन्ति चरित्रतः सदा नृसिंहाः ।

संसार - दुःखभीरवः,
परीषहाराति - घातिनः प्रवीराः ॥६॥

शीतकाल में वे मुनिराज क्या करते हैं ?

अविरत-बहल-तुहिन-
कण - वारिभि - रङ्घ्रिप - पत्र-पातनै-
रनवरत-प्रमुक्त-झङ्कार-रवैः,
परुषै-रथानिलैः शोषित-गात्रयष्टयः ।
इह श्रमणा धृति - कम्बलावृताः शिशिर - निशाम्,
तुषार - विषमां गमयन्ति चतुःपथे स्थिताः ॥७॥

स्तुतिफल की याचना

इति योग-त्रय-धारिणः,
सकल-तपःशालिनः प्रवृद्ध-पुण्य-कायाः ।
परमानन्द - सुखैषिणः,
समाधिमग्र्यं दिशन्तु नो भदन्ताः ॥८॥

इच्छामि भंते ! योगिभत्ति - काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं । अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णरस-कम्म-भूमिसु, आदावण-रुक्खमूल-अब्भोवास-ठाण-मोण-वीरासणेक्कपास - कुक्कुडासण-चउ-छ-पक्ख-खवणादि-जोग-जुत्ताणं, सव्वसाहूणं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

पूर्व दिशा में

यावन्ति जिनचैत्यानि, विद्यन्ते भुवनत्रये ।
तावन्ति सततं भक्त्या, त्रिःपरीत्य नमाम्यहम् ॥

अथ वृषभजिनस्तोत्रम्

स्वयम्भुवा भूतहितेन भूतले,
समञ्जस - ज्ञान - विभूति - चक्षुषा ।
विराजितं येन विधुन्वता तमः,
क्षपाकरेणेव गुणोत्करैः करैः ॥१॥

प्रजापति-र्यः प्रथमं जिजीविषूः,
शशास कृष्यादिषु कर्मसु प्रजाः ।
प्रबुद्धतत्त्वः पुनरद्भुतोदयो,
ममत्वतो निर्विविदे विदांवरः ॥२॥

विहाय यः सागर-वारि-वाससं,
वधू - मिवेमां वसुधा - वधूं सतीम् ।
मुमुक्षु-रिक्ष्वाकु-कुलादि-रात्मवान्,
प्रभुः प्रवव्राज सहिष्णु - रच्युतः ॥३॥

स्वदोष-मूलं स्वसमाधि-तेजसा,
निनाय यो निर्दय-भस्मसात्-क्रियाम् ।
जगाद तत्त्वं जगतेऽर्थिनेऽञ्जसा,
बभूव च ब्रह्मपदामृतेश्वरः ॥४॥

स विश्व-चक्षु-र्वृषभोऽर्चितः सतां,
समग्र - विद्यात्म - वपु - र्निरञ्जनः ।
पुनातु चेतो मम नाभिनन्दनो,
जिनो जित-क्षुल्लक-वादि-शासनः ॥५॥

श्रीअजितजिनस्तवनम्

यस्य प्रभावात् त्रिदिवच्युतस्य,
क्रीडास्वपि क्षीव - मुखारविन्दः ।

अजेय-शक्ति-र्भुवि बन्धुवर्ग-
श्चकार नामाजित इत्यबन्ध्यम् ॥६॥

अद्यापि यस्याजित-शासनस्य,
सतां प्रणेतुः प्रति - मङ्गलार्थम् ।
प्रगृह्यते नाम परं पवित्रं,
स्व - सिद्धि - कामेन जनेन लोके ॥७॥

यः प्रादु-रासीत्प्रभु-शक्ति-भूम्ना,
भव्याशयालीन - कलङ्कशान्त्यै ।
महामुनि-र्मुक्त-घनोपदेहो,
यथारविन्दाभ्युदयाय भास्वान् ॥८॥

येन प्रणीतं पृथुधर्मतीर्थं,
ज्येष्ठं जनाः प्राप्य जयन्ति दुःखम् ।
गाङ्गं ह्रनदं चन्दन-पङ्क-शीतं,
गज - प्रवेका इव घर्मतप्ताः ॥९॥

स ब्रह्मनिष्ठः सममित्रशत्रु-
विद्या - विनिर्वान्त - कषाय - दोषः ।
लब्धात्म-लक्ष्मी-रजितोऽजितात्मा,
जिनश्रियं मे भगवान् विधत्ताम् ॥१०॥

अथ वर्षायोग - प्रतिष्ठापन / निष्ठापन - क्रियायां
.... श्रीलघुचैत्यभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक, कायोत्सर्ग और 'थोस्सामि' स्तव बोलकर निम्नलिखित चैत्यभक्ति पढ़ें—

अथ लघुचैत्यभक्तिः

वर्षेषु वर्षान्तर-पर्वतेषु,
नन्दीश्वरे यानि च मन्दरेषु ।

यावन्ति चैत्यायतनानि लोके,
सर्वाणि वन्दे जिनपुङ्गवानाम् ॥१॥
अवनितल-गतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां,
वन-भवन-गतानां दिव्य-वैमानिकानाम् ।
इह मनुजकृतानां देवराजार्चितानां,
जिनवरनिलयानां भावतोऽहं स्मरामि ॥२॥

जम्बू-धातकि-पुष्करार्ध-वसुधा-क्षेत्र-त्रये ये भवाः,
चन्द्राम्भोज-शिखण्डि-कण्ठ-कनक-प्रावृड्घनाभा-जिनाः।
सम्यग्ज्ञान-चरित्र-लक्षणधराः, दग्धार्ध-कर्मेन्धनाः,
भूतानागत-वर्तमान-समये, तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ॥३॥
श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ, रजतगिरिवरे, शाल्मलौ जम्बुवृक्षे,
वक्षारे चैत्यवृक्षे, रतिकर-रुचके, कुण्डले मानुषाङ्के ।
इष्वाकारेऽञ्जनाद्रौ, दधिमुखशिखरे, व्यन्तरे स्वर्गलोके,
ज्योतिर्लोकेऽभिवन्दे भुवन-महितले यानि चैत्यालयानि ॥

द्वौ कुन्देन्दु-तुषार-हार-धवलौ, द्वाविन्द्रनील-प्रभौ,
द्वौ बन्धूक-समप्रभौ जिनवृषौ, द्वौ च प्रियङ्गु-प्रभौ ।
शेषाः षोडश जन्म-मृत्यु-रहिताः, सन्तप्त-हेम-प्रभाः,
ते संज्ञानदिवाकराः सुरनुताः, सिद्धिं प्रयच्छन्तु नः ॥५॥

इच्छामि भंते ! चेइयभत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं । अहलोय-तिरियलोय-उड्ढलोयम्मि किट्टिमाकिट्टिमाणि जाणि जिण-चेइयाणि ताणि सव्वाणि तीसु वि लोएसु भवणवासिय-वाणविंतर-जोइसिय-कप्पवासिय त्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गंधेण, दिव्वेण पुप्फेण, दिव्वेण धुव्वेण, दिव्वेण चुण्णेण,

दिव्वेण वासेण, दिव्वेण ण्हाणेण, णिच्चकालं अच्चंति, पुज्जंति, वंदंति, णमस्संति । अहं वि इह संतो तत्थ संताइ णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

प्राग्दिग्-विदिगन्तरे, केवलिजिन-सिद्ध-साधुगणदेवाः ।
ये सर्वर्द्धि-समृद्धा, योगिगणाँस्तानऽहं वन्दे ॥१॥

इति पूर्वदिक्वन्दना ।

दक्षिण दिशा में—

यावन्ति जिन-चैत्यानि, विद्यन्ते भुवनत्रये ।
तावन्ति सततं भक्त्या, त्रिःपरीत्य नमाम्यहम् ॥

श्रीसम्भवजिनस्तोत्रम्

त्वं सम्भवः सम्भव-तर्ष-रोगैः,
सन्तप्यमानस्य जनस्य लोके ।
आसीरिहाकस्मिक एव वैद्यो,
वैद्यो यथाऽनाथ-रुजां प्रशान्त्यै ॥१॥

अनित्य-मत्राण-महंक्रियाभिः,
प्रसक्त-मिथ्याध्यवसाय-दोषम् ।
इदं जगज्जन्म-जरान्तकार्तं,
निरञ्जनां शान्तिमजीगमस्त्वम् ॥२॥

शतह्रदोन्मेष-चलं हि सौख्यं,
तृष्णामयाप्यायनमात्र-हेतुः ।
तृष्णाभिवृद्धिश्च तपत्यजस्रं,
तापस्तदायासयतीत्यवादीः ॥३॥

बन्धश्च मोक्षश्च तयोश्च हेतु-
बंद्धश्च मुक्तश्च फलं च मुक्तेः ।
स्याद्वादिनो नाथ तवैव युक्तं,
नैकान्त-दृष्टेस्त्वमतोऽसि शास्ता ॥४॥

शक्र ऽप्यशक्तस्तव पुण्यकीर्तेः,
स्तुत्यां प्रवृत्तः किमु मादृशोऽज्ञः ।
तथापि भक्त्या स्तुत-पाद-पद्मो,
ममार्य देयाः शिवताति-मुच्चैः ॥५॥

श्रीअभिनन्दनजिनस्तोत्रम्

गुणाभिनन्दादभिनन्दनो भवान्,
दयावधूं क्षान्ति-सखी-मशिश्रियत् ।
समाधितन्त्रस्तदुपोपपत्तये,
द्वयेन नैर्ग्रन्थ्यगुणेन चायुजत् ॥६॥

अचेतने तत्कृत-बन्धजेऽपि च,
ममेदमित्याभिनिवेशिकग्रहात् ।
प्रभङ्गुरे स्थावर-निश्चयेन च,
क्षतं जगत्तत्त्व-मजिग्रहद्-भवान् ॥७॥

क्षुधादि-दुःख-प्रतिकारतः स्थिति-
र्न चेन्द्रियार्थ-प्रभवाल्प-सौख्यतः ।
ततो गुणो नास्ति च देह-देहिनो-
रितीदमित्थं भगवान् व्यजिज्ञपत् ॥८॥

जनोऽतिलोलोप्यनुबन्ध-दोषतो,
भयादकार्येष्विह न प्रवर्तते ।

इहाप्यमुत्राप्यनुबन्ध-दोषवित्,
कथं सुखे संसजतीति चाब्रवीत् ॥९॥

स चानुबन्धोऽस्य जनस्य तापकृत्,
तृषोऽभिवृद्धिः सुखतो न च स्थितिः ।
इति प्रभो ! लोकहितं यतो मतं,
ततो भवानेव गतिः सतां मतः ॥१०॥

अथ वर्षायोग - प्रतिष्ठापन / निष्ठापन - क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीलघुचैत्यभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक, कायोत्सर्ग और 'थोस्सामि' स्तव बोलकर पृष्ठ २४२ से 'वर्षेषु वर्षान्तरपर्वतेषु' इत्यादि लघुचैत्यभक्ति अञ्चलिका सहित पढ़नी चाहिए ।

दक्षिणदिग्-विदिगन्तरे, केवलिजिन-सिद्धसाधुगणदेवाः ।
ये सर्वर्द्धि-समृद्धा, योगिगणाँस्तानऽहं वन्दे ॥२॥

इति दक्षिणदिग्-वन्दना ।

पश्चिम दिशा में–

यावन्ति जिन-चैत्यानि, विद्यन्ते भुवनत्रये ।
तावन्ति सततं भक्त्या, त्रिःपरीत्य नमाम्यहम् ॥

श्रीसुमतिनाथजिनस्तोत्रम्

अन्वर्थ-संज्ञः सुमति-र्मुनिस्त्वं,
स्वयं मतं येन सुयुक्ति-नीतम् ।
यतश्च शेषेषु मतेषु नास्ति,
सर्वक्रियाकारक - तत्त्व - सिद्धिः ॥१॥

अनेकमेकं च तदेव तत्त्वं,
भेदान्वय-ज्ञानमिदं हि सत्यम् ।
मृषोपचारोऽन्यतरस्य लोपे,
तच्छेष-लोपोऽपि ततोनुपाख्यम् ॥२॥

सतः कथञ्चित्तदसत्व-शक्तिः,
खे नास्ति पुष्पं तरुषु प्रसिद्धम् ।
सर्वस्वभाव-च्युतमप्रमाणं,
स्ववाग्-विरुद्धं तव दृष्टितोऽन्यत् ॥३॥

न सर्वथा नित्य-मुदेत्यपैति,
न च क्रियाकारक-मंत्रयुक्तम् ।
नैवासतो जन्म सतो न नाशो,
दीपस्तमः पुद्गल-भावतोऽस्ति ॥४॥

विधि-र्निषेधश्च कथञ्चिदिष्टौ,
विवक्षया मुख्य-गुण-व्यवस्था ।
इति प्रणीतिः सुमतेस्तवेयं,
मति-प्रवेकः स्तुवतोऽस्तु नाथ ! ॥५॥

श्रीपद्मप्रभजिनस्तोत्रम्

पद्मप्रभः पद्म-पलाश-लेश्यः,
पद्मालयालिङ्गित-चारु-मूर्तिः ।
बभौ भवान् भव्य-पयोरुहाणां,
पद्माकराणामिव पद्मबन्धुः ॥६॥

बभार पद्मां च सरस्वतीं च,
भवान् पुरस्तात् प्रतिमुक्ति-लक्ष्म्याः ।

सरस्वतीमेव समग्र-शोभां,
सर्वज्ञलक्ष्मीं ज्वलितां विमुक्तः ॥७॥

शरीर-रश्मि-प्रसरः प्रभोस्ते,
बालार्करश्मि - च्छविरालिलेप ।
नरामराकीर्ण-सभां प्रभाव-
च्छैलस्य पद्माभमणेः स्वसानुम् ॥८॥

नभस्तलं पल्लव-यन्निव त्वं,
सहस्र - पत्राम्बुज - गर्भचारैः ।
पादाम्बुजैः पातित-मोह-दर्पो,
भूमौ प्रजानां विजहर्ष भूत्यै ॥९॥

गुणाम्बुधे-र्विप्रुष-मप्यजस्रं,
नाखण्डलः स्तोतुमलं तवर्षेः ।
प्रागेव मादृक् किमुतातिभक्ति-
र्मां बाल - मालापयतीदमित्थम् ॥१०॥

अथ वर्षायोग-प्रतिष्ठापन/निष्ठापन-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीलघुचैत्यभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक, कायोत्सर्ग और 'थोस्सामि' स्तव बोलकर पृष्ठ २४२ से 'वर्षेषु वर्षान्तिरपर्वतेषु' इत्यादि लघुचैत्यभक्ति अञ्चलिका सहित पढ़नी चाहिए ।

पश्चिमदिग्-विदिगन्तरे, केवलिजिन-सिद्धसाधुगणदेवाः ।
ये सर्वर्द्धि-समृद्धा, योगिगणांस्तानऽहं वन्दे ॥३॥

इति पश्चिमदिग्वन्दना ।

उत्तर दिशा में–

यावन्ति जिनचैत्यानि, विद्यन्ते भुवनत्रये ।
तावन्ति सततं भक्त्या, त्रिःपरीत्य नमाम्यहम् ॥

श्रीसुपार्श्वजिनस्तोत्रम्

स्वास्थ्यं यदात्यन्तिकमेष पुंसां,
स्वार्थो न भोगः परिभङ्गुरात्मा ।
तृषोऽनुषङ्गान्न च ताप-शान्ति-
रितीदमाख्यद्-भगवान् सुपार्श्वः ॥१॥

अजङ्गमं जङ्गमनेययन्त्रं,
यथा तथा जीवधृतं शरीरम् ।
बीभत्सु पूति क्षयि तापकं च,
स्नेहो वृथात्रेति हितं त्वमाख्यः ॥२॥

अलंघ्य-शक्ति-र्भवितव्यतेयं,
हेतुद्वयाविष्कृत - कार्य - लिङ्गा ।
अनीश्वरो जन्तुरहं क्रियार्त्तः,
संहत्य कार्येष्विति साध्ववादीः ॥३॥

बिभेति मृत्योर्न ततोऽस्ति मोक्षो,
नित्यं शिवं वाञ्छति नास्य लाभः ।
तथापि बालो भयकामवश्यो,
वृथा स्वयं तप्यत इत्यवादीः ॥४॥

सर्वस्य तत्त्वस्य भवान् प्रमाता,
मातेव बालस्य हितानुशास्ता ।
गुणावलोकस्य जनस्य नेता,
मयापि भक्त्या परिणूयसेऽद्य ॥५॥

श्रीचन्द्रप्रभजिनस्तोत्रम्

चन्द्रप्रभं चन्द्रमरीचि-गौरं,
चन्द्रं द्वितीयं जगतीव कान्तम् ।
वन्देऽभिवन्द्यं महता-मृषीन्द्रं,
जिनं जित-स्वान्त-कषाय-बन्धम् ॥६॥

यस्याङ्गलक्ष्मीपरिवेश-भिन्नं,
तमस्तमोरेरिव रश्मि - भिन्नम् ।
ननाश बाह्यं बहुमानसं च,
ध्यान - प्रदीपातिशयेन भिन्नम् ॥७॥

स्वपक्ष-सौस्थित्य-मदाऽवलिप्ता,
वाक् - सिंहनादै - र्विमदा बभूवुः ।
प्रवादिनो यस्य मदार्द्रगण्डाः,
गजाः यथा केसरिणो निनादैः ॥८॥

यः सर्वलोके परमेष्ठितायाः,
पदं बभूवाद्भुत - कर्म - तेजाः ।
अनन्त-धामाक्षर-विश्वचक्षुः,
समन्त - दुःख - क्षय - शासनश्च ॥९॥

स चन्द्रमा भव्य-कुमुद्वतीनां,
विपन्न-दोषाऽभ्र-कलङ्क - लेपः ।
व्याकोश-वाङ्-न्याय-मयूख-मालः,
पूयात् पवित्रो भगवान् मनो मे ॥१०॥

अथ वर्षायोग - प्रतिष्ठापन / निष्ठापन - क्रियायां .... श्रीलघुचैत्यभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक, कायोत्सर्ग और 'थोस्सामि' स्तव बोलकर पृष्ठ २४२ से 'वर्षेषु वर्षान्तरपर्वतेषु' इत्यादि लघुचैत्यभक्ति अञ्चलिका सहित पढ़नी चाहिए ।

उत्तरदिग्-विदिगन्तरे, केवलिजिन-सिद्धसाधुगणदेवाः ।
ये सर्वर्द्धि-समृद्धा, योगिगणाँस्तानऽहं वन्दे ॥४॥

इति उत्तरदिग्-वन्दना ।

अथ वर्षायोग - प्रतिष्ठापन / निष्ठापन - क्रियायां ....श्रीपञ्चमहागुरुभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि पढ़कर पञ्चमहागुरुभक्ति अञ्चलिका सहित पढ़ें ।

अथ वर्षायोग - प्रतिष्ठापन / निष्ठापन - क्रियायां .... श्रीशान्तिभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि पढ़कर निम्नलिखित शान्तिभक्ति पढ़नी चाहिए ।

अथ श्रीशान्तिभक्तिः

न स्नेहाच्छरणं प्रयान्ति भगवन् !, पादद्वयं ते प्रजा,
हेतुस्तत्र विचित्र - दुःख-निचयः संसार - घोरार्णवः ।
अत्यन्त-स्फुरदुग्र - रश्मि - निकर - व्याकीर्ण - भूमण्डलो,
ग्रैष्मः कारयतीन्दुपाद-सलिल-च्छायानुरागं रविः ॥१॥

प्रणाम करने का ऐहिक फल

क्रुद्धाशीर्विष - दष्ट - दुर्जय - विष-ज्वालावली - विक्रमो,
विद्या-भेषज-मन्त्र-तोय-हवनै-र्याति प्रशान्ति यथा ।
तद्-वत्ते चरणारुणाम्बुज-युग-स्तोत्रोन्मुखानां नृणाम्,
विघ्नाः कायविनायकाश्च सहसा, शाम्यन्त्यहो विस्मयः ।२।

प्रणाम करने का फल

सन्तप्तोत्तम - काञ्चन - क्षितिधर-श्री-स्पर्द्धि - गौरद्युते,
पुंसां त्वच्चरण-प्रणाम-करणात्, पीडाः प्रयान्ति क्षयम् ।
उद्यद्-भास्कर-विस्फुरत्-कर-शतव्याघात-निष्कासिता,
नानादेहि-विलोचन-द्युतिहरा, शीघ्रं यथा शर्वरी ॥३॥

जिनेन्द्र की स्तुति ही मोक्षपद की कारण है

त्रैलोक्येश्वर-भङ्ग-लब्ध-विजयादत्यन्त - रौद्रात्मकात्,
नाना-जन्म-शतान्तरेषु पुरतो, जीवस्य संसारिणः ।
को वा प्रस्खलतीह केन विधिना, कालोग्र-दावानलान्,
न स्याच्चेत्तव पाद-पद्म-युगल-स्तुत्यापगा-वारणम् ॥४॥

स्तुति करने से असाध्य रोगों का भी नाश

लोकालोक - निरन्तर - प्रवितत - ज्ञानैक-मूर्ते विभो !,
नाना-रत्न - पिनद्ध - दण्ड - रुचिर - श्वेतातपत्र-त्रय ।
त्वत्पाद-द्वय - पूत - गीत - रवतः, शीघ्रं द्रवन्त्यामया,
दर्पाध्मात-मृगेन्द्र-भीम-निनदाद्, वन्या यथा कुञ्जराः ॥५॥

स्तुति से मोक्ष के अनन्त सुख की प्राप्ति

दिव्य-स्त्री - नयनाभिराम - विपुल - श्री-मेरु - चूडामणे,
भास्वद्-बाल-दिवाकर-द्युति-हर-प्राणीष्ट - भामण्डल ।
अव्याबाध - मचिन्त्यसार - मतुलं त्यक्तोपमं शाश्वतम्,
सौख्यं त्वच्चरणारविन्द-युगल-स्तुत्यैव सम्प्राप्यते ॥६॥

भगवान के चरण-कमलों के प्रसाद से पापों का नाश

यावन्नोदयते प्रभा - परिकरः श्रीभास्करो भासयंस्,
तावद् - धारयतीह पङ्कजवनं निद्रातिभार-श्रमम् ।

यावत्त्वच्चरणद्वयस्य भगवन् ! न स्यात् प्रसादोदयः,
तावज्जीव-निकाय एष वहति, प्रायेण पापं महत् ॥७॥

स्तुति-फलयाचना

शान्ति शान्तिजिनेन्द्र शान्त-मनस ! त्वत्पाद-पद्माश्रयात्,
संप्राप्ताः पृथिवी-तलेषु बहवः शान्त्यर्थिनः प्राणिनः ।
कारुण्यान् मम भाक्तिकस्य च विभो ! दृष्टि प्रसन्नां कुरु,
त्वत्पादद्वय-दैवतस्य गदतः शान्त्यष्टकं भक्तितः ॥८॥

शान्तिजिनं शशि-निर्मल-वक्त्रं,
शीलगुणव्रत - संयम - पात्रम् ।
अष्टशतार्चित-लक्षण-गात्रं,
नौमि जिनोत्तममम्बुज - नेत्रम् ॥९॥

पञ्चममीप्सित-चक्रधराणां,
पूजितमिन्द्र - नरेन्द्र - गणैश्च ।
शान्तिकरं गण-शान्ति-मभीप्सुः,
षोडश - तीर्थकरं प्रणमामि ॥१०॥

दिव्यतरुः सुर-पुष्प-सुवृष्टि-
र्दुन्दुभिरासन - योजन घोषौ ।
आतप-वारण-चामर-युग्मे,
यस्य विभाति च मण्डलतेजः ॥११॥

तं जगदर्चित-शान्ति-जिनेन्द्रं,
शान्तिकरं शिरसा प्रणमामि ।
सर्वगणाय तु यच्छतु शान्तिं,
मह्यमरं पठते परमां च ॥१२॥

येऽभ्यर्चिता मुकुट-कुण्डल-हार-रत्नैः,
शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुत-पादपद्माः ।
ते मे जिनाः प्रवर-वंश-जगत्प्रदीपाः,
तीर्थंकराः सतत-शान्तिकराः भवन्तु ॥१३॥

सम्पूजकानां प्रतिपालकानां,
यतीन्द्र - सामान्य - तपोधनानाम् ।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः,
करोतु शान्ति भगवान् - जिनेन्द्रः ॥१४॥

क्षेमं सर्वप्रजानां, प्रभवतु बलवान्, धार्मिको भूमिपालः,
काले-काले च वृष्टिं, वर्षतु मघवा, व्याधयो यान्तु नाशम् ।
दुर्भिक्षं चौर-मारी क्षणमपि जगतां मा स्म भूज्जीवलोके,
जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं सर्व-सौख्य-प्रदायि ॥१॥

इच्छामि भंते ! संतिभत्ति - काउस्सग्गो कम्रो, तस्सालोचेउं । पंच-महाकल्लाण - संपण्णाणं, अट्ठ-महापाडिहेर-सहियाणं, चउतीसातिसय-विसेस-संजुत्ताणं, बत्तीस-देवेंद-मणिमय-मउड-मत्थय - महियाणं, बलदेव-वासुदेव - चक्कहर-रिसि-मुणि-जदि - अणगारोवगूढाणं, थुइ-सय-सहस्स-णिलयाणं, उसहाइ-वीर-पच्छिम-मंगल-महापुरिसाणं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खश्रो, कम्मक्खश्रो, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

अथ वर्षायोग - प्रतिष्ठापन / निष्ठापन - क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीसिद्धभक्ति, योगिभक्ति, लघुचैत्यभक्ति,

पञ्चमहागुरुभक्ति, शान्तिभक्ति च कृत्वा तद्धीनाधिक-दोष-विशुद्ध्यर्थं आत्मपवित्रीकरणार्थं समाधिभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक, कायोत्सर्ग और 'थोस्सामि' स्तव बोलकर पृष्ठ २०४ से बड़ी समाधिभक्ति पढ़नी चाहिए ।

श्री वीरनिर्वाण-क्रियाविधिः

अथ श्रीवीरनिर्वाण - क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीसिद्ध-भक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक, कायोत्सर्ग और 'थोस्सामि' स्तव बोलकर पृष्ठ १८५ से वृहद् सिद्धभक्ति पढ़नी चाहिए ।

अथ श्रीवीरनिर्वाण-क्रियायां .... श्रीनिर्वाण-भक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर निम्नलिखित निर्वाणभक्ति पढ़ें–

अथ श्रीनिर्वाणभक्तिः

विबुधपति-खगपति-नरपति-
धनदोरग - भूत-यक्षपति - महितम् ।
अतुलसुख - विमल - निरुपम-
शिव-मचल-मनामयं हि सम्प्राप्तम् ॥१॥

कल्याणैः संस्तोष्ये, पञ्चभि-रनघं त्रिलोक-परम-गुरुम् ।
भव्यजन-तुष्टि-जननै-र्दुरवापैः सन्मतिं भक्त्या ॥२॥

आषाढ-सुसित-षष्ठ्यां, हस्तोत्तर-मध्य-माश्रिते शशिनि ।
आयातः स्वर्गसुखं, भुक्त्वा पुष्पोत्तराधीशः ॥३॥

सिद्धार्थनृपति-तनयो, भारत-वास्ये विदेह-कुण्डपुरे ।
देव्यां प्रियकारिण्यां, सुस्वप्नान् सम्प्रदर्श्य विभुः ॥४॥

चैत्र-सित-पक्ष-फाल्गुनि, शशाङ्कयोगे दिने त्रयोदश्याम् ।
जज्ञे स्वोच्चस्थेषु, ग्रहेषु सौम्येषु शुभ-लग्ने ॥५॥

हस्ताश्रिते शशाङ्के, चैत्र-ज्योत्स्ने चतुर्दशी-दिवसे ।
पूर्वाण्हे रत्नघटै - र्विबुधेन्द्राश्चक्रु - रभिषेकम् ॥६॥

भुक्त्वा कुमार-काले, त्रिंशद्-वर्षाण्यनन्त-गुणराशिः ।
अमरोपनीत-भोगान्, सहसाभिनिबोधितोऽन्येद्युः ॥७॥

नानाविधरूपचितां, विचित्र-कूटोच्छ्रितां मणि-विभूषाम् ।
चन्द्रप्रभाख्य-शिविका-मारुह्य पुराद्-विनिष्क्रान्तः ॥८॥

मार्गशिर-कृष्ण-दशमी, हस्तोत्तर-मध्य-माश्रिते सोमे ।
षष्ठेन त्वपराह्णे, भक्तेन जिनः प्रवव्राज ॥९॥

ग्राम-पुर-खेट-कर्वट - मटम्ब - घोषाकरान् प्रविजहार ।
उग्रैस्तपो - विधानै-र्द्वादश - वर्षाण्यमर - पूज्यः ॥१०॥

ऋजु-कूलायास्तीरे, शाल - द्रुम - संश्रिते शिलापट्टे ।
अपराह्णे षष्ठेना-स्थितस्य खलु जृम्भिका-ग्रामे ॥११॥

वैशाख-सित-दशम्यां, हस्तोत्तर-मध्य-माश्रिते चन्द्रे ।
क्षपक - श्रेण्यारूढस्योत्पन्नं केवलज्ञानम् ॥१२॥

अथ भगवान् सम्प्रापद्, दिव्यं वैभार-पर्वतं रम्यम् ।
चातुर्वर्ण्य - सुसङ्घस्तत्राभूद् गौतम - प्रभृति ॥१३॥

छत्राशोकौ घोषं, सिंहासन-दुन्दुभी कुसुम - वृष्टिम् ।
वर-चामर-भामण्डल-दिव्यान्यन्यानि चावापत् ॥१४॥

दशविध - मनगाराणा - मेकादशधोत्तरं तथा धर्मम् ।
देशयमानो व्यहरत्, त्रिंशद्-वर्षाण्यथ जिनेन्द्रः ॥१५॥
पद्मवन - दीर्घिकाकुल - विविध-द्रुम-खण्ड-मण्डिते रम्ये ।
पावानगरोद्याने, व्युत्सर्गेण स्थितः स मुनिः ॥१६॥
कार्तिक - कृष्णस्यान्ते, स्वातावृक्षे निहत्य कर्मरजः ।
अवशेषं सम्प्रापद्, व्यजरामर-मक्षयं सौख्यम् ॥१७॥
परिनिर्वृतं जिनेन्द्रं, ज्ञात्वा विबुधा ह्यथाशु चागम्य ।
देवतरु-रक्तचन्दन - कालागुरु - सुरभि - गोशीर्षैः ॥१८॥
अग्नीन्द्राज्जिनदेहं, मुकुटानल-सुरभि-धूप-वर-माल्यैः ।
अभ्यर्च्य गणधरानपि, गता दिवं खं च वन-भवने ॥१९॥

इत्येवं भगवति वर्धमानचन्द्रे,
यः स्तोत्रं पठति सुसन्ध्ययो-र्द्वयो-र्हि ।
सोऽनन्तं परमसुखं नृ-देव-लोके,
भुक्त्वान्ते शिवपद-मक्षयं प्रयाति ॥२०॥

यत्रार्हतां गणभृतां श्रुतपारगाणां,
निर्वाण-भूमिरिह भारतवर्षजानाम् ।
तामद्य शुद्ध-मनसा क्रियया वचोभिः,
संस्तोतु-मुद्यतमतिः परिणौमि भक्त्या ॥२१॥

कैलास-शैल-शिखरे परिनिर्वृतोऽसौ,
शैलेशि-भाव-मुपपद्य वृषो महात्मा ।
चम्पापुरे च वसुपूज्यसुतः सुधीमान्,
सिद्धिं परामुपगतो गतराग-बन्धः ॥२२॥

यत्प्रार्थ्यते शिवमयं विबुधेश्वराद्यैः,
पाखण्डिभिश्च परमार्थ-गवेषशीलैः ।

नष्टाष्ट-कर्म-समये तदरिष्टनेमिः,
संप्राप्तवान् क्षितिधरे बृहदूर्जयन्ते ॥२३॥
पावापुरस्य बहि-रुन्नत-भूमि-देशे,
पद्मोत्पलाकुलवतां सरसां हि मध्ये ।
श्रीवर्धमान-जिनदेव इति प्रतीतो,
निर्वाणमाप भगवान् प्रविधूतपाप्मा ॥२४॥
शेषास्तु ते जिनवरा जितमोह-मल्ला,
ज्ञानार्क-भूरि-किरणैरवभास्य लोकान् ।
स्थानं परं निरवधारित-सौख्य-निष्ठं,
सम्मेद - पर्वततले समवापुरीशाः ॥२५॥
आद्यश्चतुर्दश-दिनै-र्विनिवृत्त-योगः,
षष्ठेन निष्ठित-कृति-र्जिन-वर्द्धमानः ।
शेषा विधूत-घन-कर्म-निबद्ध-पाशा,
मासेन ते यतिवरास्त्वभवन् वियोगाः ॥२६॥
माल्यानि वाक्-स्तुति-मयैः कुसुमैः सुदृब्धा-,
न्यादाय मानस - करैरभितः किरन्तः ।
पर्येम आदृति-युता भगवन्निषद्याः,
संप्रार्थिता वयमिमे परमां गतिं ताः ॥२७॥
शत्रुञ्जये नगवरे दमितारिपक्षाः,
पण्डोः सुताः परम-निर्वृति-मभ्युपेताः ।
तुङ्ग्यां तु सङ्ग-रहितो बलभद्रनामा,
नद्यास्तटे जित-रिपुश्च सुवर्णभद्रः ॥२८॥
द्रोणीमति प्रबल-कुण्डल-मेढ्रके च,
वैभार - पर्वतनले वर - सिद्धकूटे ।

ऋष्यद्रिके च विपुलाद्रि-बलाहके च,
विन्ध्ये च पौदनपुरे वृष-दीपके च ॥२६॥

सह्याचले च हिमवत्यपि सुप्रतिष्ठे,
दण्डात्मके गजपथे पृथुसारयष्टौ ।
ये साधवो हत-मलाः सुगतिं प्रयाताः,
स्थानानि तानि जगति प्रथितान्यभूवन् ॥३०॥

इक्षो-र्विकार-रस-पृक्त-गुणेन लोके,
पिष्टोऽधिकं मधुरता-मुपयाति यद्-वत् ।
तद्वच्च पुण्यपुरुषै-रुषितानि नित्यं,
स्थानानि तानि जगतामिह पावनानि ॥३१॥

इत्यर्हतां शमवतां च महामुनीनां,
प्रोक्ता मयात्र परिनिर्वृति-भूमि-देशाः ।
ते मे जिना जितभया मुनयश्च शान्ताः,
दिश्यासु-राशु सुगतिं निरवद्य-सौख्याम् ॥३२॥

निर्वाणकांड [प्राकृत]

अट्ठावयम्मि उसहो, चंपाए वासुपुज्ज-जिणणाहो ।
उज्जंते णेमि-जिणो, पावाए णिव्वुदो महावीरो ॥१॥

वीसं तु जिण-वरिंदा, अमरासुर-वंदिदा धुद-किलेसा ।
सम्मेदे गिरि-सिहरे, णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥२॥

वरदत्तो य वरंगो, सायरदत्तो य तारवरणयरे ।
आहुट्ठयकोडीओ, णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥३॥

णेमि-सामी पज्जुण्णो, संबुकुमारो तहेव अणिरुद्धो ।
बाहत्तरि - कोडीओ, उज्जंते सत्त - सया वंदे ॥४॥

राम-सुआ बिण्णि जणा, लाड-णरिंदाण पंच कोडीओ ।
पावाए गिरि-सिहरे, णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥५॥

पंडु-सुम्रा तिण्णि जणा दविड-णरिंदाण ग्रट्ठ-कोडीम्रो ।
सत्तुंजय-गिरिसिहरे, णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥६॥

सत्तेव य बलभद्दा, जदुव-णरिंदाण ग्रट्ठ कोडीम्रो ।
गजपंथे गिरि-सिहरे, णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥७॥

रामहणू-सुग्गीवो, गवय-गवक्खो य णील-महणीलो ।
णवणवदी कोडीम्रो, तुंगीगिरि-णिव्वुदे वंदे ॥८॥

ग्रंगाणंगकुमारा, विक्खा-पंचद्ध-कोडि-रिसि सहिया ।
सुवण्णगिरि-मत्थयत्थे, णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥९॥

दहमुह-रायस्स सुम्रा, कोडी-पंचद्ध-मुणिवरें सहिया ।
रेवा-उहयम्मि तीरे, णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥१०॥

रेवा-णइए तीरे, पच्छिम-भायम्मि सिद्धवर-कूडे ।
दो चक्की दह कप्पे, ग्राहुट्ठय-कोडि-णिव्वुदे वंदे ॥११॥

वडवाणी-वर-णयरे,दक्खिण-भायम्मि चूलगिरि-सिहरे ।
इंदजिय-कुंभयण्णो, णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥१२॥

पावागिरि-वर-सिहरे, सुवण्णभद्दाइ-मुणिवरा चउरो ।
चेलणा-णई-तडग्गे, णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥१३॥

फलहोडी-वरगामे, पच्छिम-भायम्मि दोणगिरि-सिहरे ।
गुरुदत्ताइ-मुणिंदा, णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥१४॥

णायकुमार-मुणिंदो, बालि महाबालि चेव ग्रज्भेया ।
ग्रट्ठावय-गिरि-सिहरे, णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥१५॥

ग्रच्चलपुर-वरणयरे, ईसाणभाए मेढगिरि-सिहरे ।
ग्राहुट्ठय-कोडीम्रो, णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥१६॥

वंसत्थल-वण-णियरे, पच्छिम-भायम्मि कुंथुगिरि-सिहरे ।
कुल-देसभूसण-मुणी, णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥१७॥
जसरह-रायस्स सुम्रा, पंचसया कलिंग-देसम्मि ।
कोडिसिलाए कोडि-मुणी, णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥१८॥
पासस्स समवसरणे, गुरुदत्त-वरदत्त-पंच-रिसिपमुहा ।
रिस्सिंदे गिरिसिहरे, णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥१९॥
जे जिणु जित्थु तत्था, जे दु गया णिव्वुदिं परमं ।
ते वंदामि य णिच्चं, तिरयण-सुद्धो णमस्सामि ॥२०॥
सेसाणं तु रिसीणं, णिव्वाणं जम्मि-जम्मि ठाणम्मि ।
ते हं वंदे सव्वे, दुक्खक्खय-कारणट्ठाए ॥२१॥

इच्छामि भंते ! परिणिव्वाणभत्ति-काउस्सग्गो कम्रो तस्सालोचेउं । इमम्मि म्रवसप्पिणीए चउत्थ-समयस्स पच्छिमे भाए, म्राउट्ठमासहीणे वासच-उक्कम्मि सेसकालम्मि, पावाए णयरीए कत्तिय-मासस्स किण्ह-चउदसिए रत्तीए सादीए, णक्खत्ते, पच्चूसे, भयवदो महदिमहावीरो वड्ढमाणो सिद्धिं गदो । तीसु वि लोएसु भवणवासिय-वाणविंतर-जोइसिय-कप्पवासिय त्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गंधेण, दिव्वेण पुप्फेण, दिव्वेण धुव्वेण, दिव्वेण चुण्णेण, दिव्वेण वासेण, दिव्वेण ण्हाणेण, णिच्चकालं म्रच्चंति, पुज्जंति, वंदंति, णमस्संति परिणिव्वाण-महाकल्लाण-पुज्जं करेंति । म्रहं वि इह संतो तत्थ संताइ णिच्चकालं म्रच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि दुक्खक्खम्रो, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

अथ वीरनिर्वाण-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण ……… श्रीपञ्चमहागुरुभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर पृष्ठ २१३ से पञ्चमहागुरुभक्ति पढ़नी चाहिए ।

अथ वीरनिर्वाण-क्रियायां ……… श्रीशान्तिभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर पृष्ठ २०२ से शान्तिभक्ति पढ़नी चाहिए ।

अथ वीरनिर्वाण-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्मक्षयार्थं भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीसिद्धभक्ति, निर्वाणभक्ति, पञ्चमहागुरुभक्ति, शान्तिभक्ति च कृत्वा तद्धीनाधिक-दोष-विशुद्धयर्थं आत्मपवित्रीकरणार्थं श्री-समाधिभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर पृष्ठ २०४ से वृहद् समाधिभक्ति पढ़नी चाहिए ।

अथ लोचकरण-क्रियाविधिः

अथ लोच-प्रतिष्ठापन-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीलघु[1]-सिद्धभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(नौ बार णमोकार मन्त्र का जाप करें ।)

---

१. (अ) लोचो द्वि-त्रि-चतुर्मासैर्वरो मध्यमोऽधमः क्रमात् ।
लघुप्राग्भक्तिभिः कायः सोपवास-प्रतिक्रमः ॥८६॥
अनगार ध०, नवम अध्याय ।

(ब) लघुसिद्धर्षिभक्त्यान्यः……………… ।

सम्मत्त-णाण-दंसण-वीरिय-सुहुमं तहेव अवगहणं ।
अगुरुलहु-मव्वावाहं, अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं ॥१॥

तवसिद्धे णयसिद्धे, संजमसिद्धे चरित्तसिद्धे य ।
णाणम्मि दंसणम्मि य, सिद्धे सिरसा णमस्सामि ॥२॥

इच्छामि भंते ! सिद्धभत्ति - काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं । सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं, अट्ठविहकम्मविप्पमुक्काणं, अट्ठगुणसंपण्णाणं, उड्ढ-लोय-मत्थयम्मि पयट्ठियाणं, तवसिद्धाणं, णयसिद्धाणं, संजमसिद्धाणं, चरित्तसिद्धाणं, अदीदा-णागद-वट्टमाण-कालत्तय-सिद्धाणं, सव्वसिद्धाणं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि । दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

अथ लोच-प्रतिष्ठापन-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीलघु-योगिभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(नौ बार णमोकार मन्त्र का जाप करें ।)

प्रावृट्काले सविद्युत्प्रपतित - सलिले वृक्षमूलाधिवासाः,
हेमन्ते रात्रिमध्ये,प्रति-विगत-भयाः काष्ठवत्-त्यक्तदेहाः ।
ग्रीष्मे सूर्यांशुतप्ता,गिरि-शिखरगताःस्थान-कूटान्तरस्थाः
ते मे धर्मं प्रदद्युर्मुनिगण-वृषभा मोक्ष-निःश्रेणि-भूताः ।१।

गिम्हे गिरि-सिहरत्था, वरिसायाले रुक्ख-मूल-रयणीसु ।
सिसिरे बाहिर-सयणा, ते साहू वंदिमो णिच्चं ॥२॥

गिरि - कन्दर - दुर्गेषु, ये वसन्ति दिगम्बराः ।
पाणिपात्र - पुटाहारास्ते यान्ति परमां गतिम् ॥३॥

इच्छामि भंते ! योगिभत्ति - काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं । अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णरस-कम्म-भूमिसु, आदावण - रुक्ख - मूल - अब्भोवास-ठाण-मोण - वीरासणेक्कपास - कुक्कुडासण - चउ-छ-पक्ख-खवणादि-जोग-जुत्ताणं सव्वसाहूणं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

नोट :—उपर्युक्त लघुसिद्ध और लघुयोगिभक्ति पढ़कर लोच प्रारम्भ करना चाहिए तथा लोच समाप्त हो जाने पर निम्नलिखित भक्ति पढ़कर लोच-क्रिया का निष्ठापन (समापन) करना चाहिए ।

अथ लोच-निष्ठापन - क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीलघु-सिद्धभक्ति-कायोत्सर्गं कुर्वेऽहम् ।

(नौ बार णमोकार मन्त्र का जाप करना ।)

'सम्मत्तणाण-दंसण' .... इत्यादि लघुसिद्धभक्ति पढ़नी चाहिए । तत्पश्चात् लोच-सम्बन्धी प्रतिक्रमण करना चाहिए ।

नोट :—लोच के पश्चात् कौनसा प्रतिक्रमण करना चाहिए ? यह मुझे शास्त्रों में दृष्टिगत नहीं हुआ ।

✕

श्रीमाघनन्द्याचार्यविरचित

अध्यात्मध्यानसूत्राणि

णमो अरिहंताणं। णमो सिद्धाणं। णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं। णमो लोए सव्वसाहूणं।

रागद्वेषमोहरहितोऽहम् ॥१॥ क्रोधमानमायालोभरहितोऽहम् ॥२॥ पञ्चेन्द्रियविषयव्यापारशून्योऽहम् ॥३॥ मनोवचनकायक्रिया-रहितोऽहम् ॥४॥ द्रव्यकर्म-भावकर्म-नोकर्म-रहितोऽहम् ॥५॥ ख्यातिपूजालाभादि-विभावभाव-रहितोऽहम् ॥६॥ दृष्टश्रुतानुभूत-भोगकांक्षा-रहितोऽहम् ॥७॥ शल्यत्रय-रहितोऽहम् ॥८॥ गारवत्रय-रहितोऽहम् ॥९॥ दण्डत्रय-रहितोऽहम् ॥१०॥

विभावपरिणामशून्योऽहम् ॥११॥ निजनिरञ्जन-स्वरूपोऽहम् ॥१२॥ स्वशुद्धात्म-सम्यक्श्रद्धान-परिणतोऽहम् ॥१३॥ भेदज्ञानानुष्ठान-परिणतोऽहम् ॥१४॥ अभेदरत्नत्रयरूपोऽहम् ॥१५॥ निर्विकल्प-समाधि-सञ्जातोऽहम् ॥१६॥ वीतराग-सहजानन्दस्वरूपोऽहम् ॥१७॥ अत्यानन्द-स्वरूपोऽहम् ॥१८॥ स्वसंवेदनज्ञानामृत-भरितोऽहम् ॥१९॥ ज्ञायकैकस्वभावोऽहम् ॥२०॥

सहजशुद्धपारिणामिक-स्वभावरूपोऽहम् ॥२१॥ सहजशुद्धज्ञानानन्दैक-स्वभावोऽहम् ॥२२॥ महाचलनिर्भरानन्द-रूपोऽहम् ॥२३॥ चिन्मात्रमूर्ति-स्वरूपोऽहम् ॥२४॥ चैतन्यरत्नाकर-स्वरूपोऽहम् ॥२५॥ चैतन्यामरद्रुम-स्वरूपोऽहम् ॥२६॥ चैतन्यामृतआहारस्वरूपोऽहम् ॥२७॥ ज्ञानपुञ्जस्वरूपोऽहम् ॥२८॥ ज्ञानामृतप्रवाह-स्वरूपोऽहम् ।२९। चैतन्यरसरसायन-स्वरूपोऽहम् ।३०।

चैतन्यचिह्न-स्वरूपोऽहम् ।।३१।। चैतन्यकल्याणवृक्षस्वरूपोऽहम् ।।३२।। ज्ञानज्योतिःस्वरूपोऽहम् ।।३३।। ज्ञानार्णव-स्वरूपोऽहम् ।।३४।। निरुपम-निर्लेप-स्वरूपोऽहम् ।।३५।। निरवद्य-स्वरूपोऽहम् ।।३६।। शुद्धचिन्मात्र-स्वरूपोऽहम् ।।३७।। अनन्तज्ञान-स्वरूपोऽहम् ।।३८।। अनन्तदर्शन-स्वरूपोऽहम् ।।३९।। अनन्तवीर्य-स्वरूपोऽहम् ।।४०।।

अनन्तसुख-स्वरूपोऽहम् ।४१। सहजानन्द-स्वरूपोऽहम् ।४२। परमानन्द-स्वरूपोऽहम् ।।४३।। परमज्ञानानन्द-स्वरूपोऽहम् ।।४४।। सदानन्द-स्वरूपोऽहम् ।।४५।। चिदानन्द-स्वरूपोऽहम् ।।४६।। निजानन्द-स्वरूपोऽहम् ।।४७।। सहजसुखानन्द-स्वरूपोऽहम् ।।४८।। नित्यानन्द-स्वरूपोऽहम् ।।४९।। शुद्धात्म-स्वरूपोऽहम् ।।५०।।

परमज्योतिःस्वरूपोऽहम् ।।५१।। स्वात्मोपलब्धि-स्वरूपोऽहम् ।।५२।। शुद्धात्मसंवित्ति-स्वरूपोऽहम् ।।५३।। भूतार्थ-स्वरूपोऽहम् ।।५४।। परमार्थ-स्वरूपोऽहम् ।।५५।। समयसारसमूह-स्वरूपोऽहम् ।।५६।। अध्यात्मसार-स्वरूपोऽहम् ।।५७।। परममंगल-स्वरूपोऽहम् ।।५८।। परमोत्तम-स्वरूपोऽहम् ।।५९।। सकलकर्मक्षयकारण-स्वरूपोऽहम् ।।६०।।

परमाद्वैत-स्वरूपोऽहम् ।६१। शुद्धोपयोग-स्वरूपोऽहम् ।६२। निश्चयषडावश्यक-स्वरूपोऽहम् ।।६३।। परमसमाधि-स्वरूपोऽहम् ।।६४।। परमस्वास्थ्य-स्वरूपोऽहम् ।।६५।। परमस्वाध्याय-स्वरूपोऽहम् ।।६६।। परमभेदज्ञान-स्वरूपोऽहम् ।।६७।। परमसंवेदन-स्वरूपोऽहम् ।।६८।। परमसमरसीभाव-स्वरूपोऽहम् ।।६९।। केवलज्ञान-स्वरूपोऽहम् ।।७०।।

केवलदर्शन-स्वरूपोऽहम् ।७१। अनन्तवीर्य-स्वरूपोऽहम् ।७२। परमसूक्ष्म-स्वरूपोऽहम् ।।७३।। अवगाहन-स्वरूपोऽहम् ।।७४।। अगुरुलघु-स्वरूपोऽहम् ।।७५।। अव्याबाध-स्वरूपोऽहम् ।।७६।।

अष्टविधकर्म-रहितोऽहम् ॥७७॥ निरञ्जनस्वरूपोऽहम् ॥७८॥ नित्योऽहम् ॥७९॥ अष्टगुणसहितोऽहम् ॥८०॥

कृतकृत्योऽहम् ॥८१॥ लोकाग्रवासिस्वरूपोऽहम् ॥८२॥ अनुपमोऽहम् ॥८३॥ अचिन्त्योऽहम् ॥८४॥ अतर्क्योऽहम् ॥८५॥ अप्रमेयस्वरूपोऽहम् ॥८६॥ अतिशयस्वरूपोऽहम् ॥८७॥ अक्षय-स्वरूपोऽहम् ॥८८॥ शाश्वतोऽहम् ॥८९॥ शुद्धस्वरूपोऽहम् ॥९०॥

सिद्धस्वरूपोऽहम् ॥९१॥ सत्तात्मक-सिद्ध-स्वरूपोऽहम् ।९२। अनुभवात्मकसिद्धस्वरूपोऽहम् ॥९३॥ सोऽहम्, शुद्धोऽहम् ॥९४॥ चित्कलास्वरूपोऽहम् ।९५। चैतन्यपुञ्जस्वरूपोऽहम् ।९६। सदा-नन्द-स्वरूपोऽहम् ॥९७॥ परमशरण्योऽहम् ॥९८॥ स्वयम्भूरऽहम् ॥९९॥ अतिशयातिशयातीत (अतिशयातिशय) अमूर्तानन्त-सुख-स्वरूपोऽहम् ॥१००॥

□□□

श्रीमाघनन्द्याचार्यविरचितः

शास्त्रसारसमुच्चयः

(२०३ सूत्राणि)

श्रीमन्नम्रामरस्तोमं, प्राप्तानन्तचतुष्टयम् ।
नत्वा जिनाधिपं वक्ष्ये, शास्त्रसारसमुच्चयम् ॥

अथ प्रथमानुयोगवेदः

त्रिविधः कालः ॥१॥ द्विविधः ॥२॥ षड्विधो वा ॥३॥ दशविधाः कल्पद्रुमाः ॥४॥ चतुर्दश कुलकरा इति ॥५॥ षोडश-भावनाः ॥६॥ चतुर्विंशति तीर्थङ्कराः ॥७॥ चतुस्त्रिंशदतिशयाः ॥८॥ पञ्चमहाकल्याणानि ॥९॥ घातिचतुष्टयम् ॥१०॥ अष्टा-दश दोषाः ॥११॥ समवसरणैकादश भूमयः ॥१२॥ द्वादश गणाः ॥१३॥ अष्टमहाप्रातिहार्याणि ॥१४॥ अनन्तचतुष्टयमिति ॥१५॥ द्वादश चक्रवर्तिणः ॥१६॥ सप्ताङ्गानि ॥१७॥ चतुर्दश-

रत्नानि ॥१८॥ नवनिधयः ॥१६॥ दशाङ्गभोगाः ॥२०॥ नव-बलदेवाः ॥२१॥ वासुदेव-प्रतिवासुदेव-नारदाश्चेति ॥२२॥

॥ इति प्रथमोऽध्यायः ॥

□

अथ करणानुयोगवेदः

त्रिविधो लोकः ॥१॥ सप्त नरकाः ॥२॥ एकोनपञ्चाशत् पटलानि ॥३॥ इन्द्रकाणि च ॥४॥ चतुरुत्तर - षट्शत - नव - सहस्रं श्रेणिबद्धानि ॥५॥ सप्तचत्वारिंशदुत्तर - त्रिशताधिक - नवति-सहस्रालङ्कृत-त्र्यशीतिलक्ष-प्रकीर्णकानि ॥६॥ चतुरशीति-लक्षबिलानि ॥७॥ चतुर्विधं दुःखमिति ॥८॥ जम्बूद्वीप-लवण-समुद्रादयोऽसंख्यातद्वीपसमुद्राः ॥६॥ तत्रार्ध - तृतीय - द्वीपसमुद्रौ मनुष्यक्षेत्रं ॥१०॥ पञ्चदश कर्मभूमयः ॥११॥ त्रिंशद् भोगभूमयः ॥१२॥ षण्णवति कुभोगभूमयः ॥१३॥ पञ्चमन्दरगिरयः ॥१४॥ जम्बूवृक्षाः ॥१५॥ शाल्मलयश्च (पुष्कराणि च) ॥१६॥ चतुस्त्रिं-शद् वर्षधरपर्वताः ॥१७॥ त्रिंशदुत्तरशत-सरोवराः ॥१८॥ सप्त-तिर्महानद्याः ॥१६॥ विंशतिर्नाभिनगाः ॥२०॥ विंशतिर्यमक-गिरयश्च ॥२१॥ सहस्रकनकगिरयः ॥२२॥ चत्वारिंशद्दिग्गज-पर्वताः ॥२३॥ शतं वक्षारक्ष्माधराः ॥२४॥ षष्ठिर्विभङ्गनद्याः ॥२५॥ षष्ट्युत्तरशतं विदेहजनपदाः ॥२६॥ सप्तत्यधिकशतं विजयार्धपर्वताः ॥२७॥ वृषभगिरयश्चेति ॥२८॥ देवाश्चतुर्णि-कायाः ॥२६॥ भवनवासिनो दशविधाः ॥३०॥ अष्टविधाः व्यन्तराः ॥३१॥ पञ्चविधाः ज्योतिष्काः ॥३२॥ द्वादशविधाः वैमानिकाः ॥३३॥ षोडशस्वर्गाः ॥३४॥ नवग्रैवेयकाः ॥३५॥ नवानुदिशाः ॥३६॥ पञ्चानुत्तराः ॥३७॥ त्रिषष्ठीपटलानि ॥३८॥ इन्द्रकाणि च ॥३६॥ षोडशोत्तराष्टशतान्वित-सप्तसहस्र-श्रेणिबद्धानि ॥४०॥ चतुरशीतिलक्षैकोननवतिसहस्रैकशतचतुश्-चत्वारिंशत् प्रकीर्णकानि ॥४१॥ चतुरशीतिलक्ष-सप्तनवति-सहस्र-

त्रयोविंशति विमानानि ॥४२॥ ब्रह्म-लोकान्तालयाश्चतुर्विंशति लौकान्तिकाः ॥४३॥ अणिमाद्यष्टगुणाः ॥४४॥

॥ इति द्वितीयोऽध्यायः ॥

□

अथ चरणानुयोगवेदः

पञ्चलब्धयः ॥१॥ करणं त्रिविधं ॥२॥ सम्यक्त्वं द्विविधं ॥३॥ त्रिविधं ॥४॥ दशविधं वा ॥५॥ तत्र वेदकसम्यक्त्वस्य पञ्चविंशतिर्मलानि ॥६॥ अष्टाङ्गानि ॥७॥ अष्टगुणाः ॥८॥ पञ्चातिचारा इति ॥९॥ एकादश निलया ॥१०॥ त्रिविधो निर्वेगः ॥११॥ सप्तव्यसनानि ॥१२॥ शल्यत्रयं ॥१३॥ अष्टौ मूलगुणाः ॥१४॥ पञ्चाणुव्रतानि ॥१५॥ त्रीणि गुणव्रतानि ॥१६॥ शिक्षाव्रतानि चत्वारि ॥१७॥ सप्त शीलानि ॥१८॥ व्रतशीलेषु पञ्च-पञ्चातिचाराः ॥१९॥ मौनं सप्तस्थानम् ॥२०॥ अन्तरायाश्च ॥२१॥ श्रावकधर्मश्चतुर्विधः ॥२२॥ जैनाश्रमाश्च ॥२३॥ तत्र ब्रह्मचारिणः पञ्चविधाः ॥२४॥ आर्यकर्माणि षट् ॥२५॥ तत्रेज्या दशविधा ॥२६॥ अर्थोपार्जनकर्माणि षट् ॥२७॥ दत्तीश्चतुर्विधा ॥२८॥ क्षत्रियो द्विविधः ॥२९॥ भिक्षुश्चतुर्विधाः ॥३०॥ यतिर्द्विविधः ॥३१॥ मुनयस्त्रिविधाः ॥३२॥ ऋषयश्चतुर्विधाः ॥३३॥ तत्र राजर्षयो द्विविधा ॥३४॥ ब्रह्मर्षयश्च ॥३५॥ मरणं द्वित्रिचतुः पञ्चविधं वा ॥३६॥ पञ्चातिचाराः ॥३७॥ द्वादशानुप्रेक्षाः ॥३८॥ यतिधर्मो दशविधः ॥३९॥ अष्टाविंशतिर्मूलगुणाः ॥४०॥ पञ्चमहाव्रतस्थैर्यार्थं भावनाः पंच-पंच ॥४१॥ गुप्तित्रयं ॥४२॥ अष्टौ प्रवचनमातृकाः ॥४३॥ अष्टादशसहस्रशीलानि ॥४४॥ चतुरशीतिलक्ष उत्तरगुणाः ॥४५॥ द्वाविंशतिपरिषहाः ॥४६॥ द्वादशविधं तपः ॥४७॥ द्वादशविधानि प्रायश्चित्तानि ॥४८॥ आलोचनं च ॥४९॥ चतुर्विधो विनयः ॥५०॥ दशविधानि वैयावृत्यानि ॥५१॥ पञ्चविधः स्वाध्यायः ॥५२॥

द्विविधो व्युत्सर्गः ॥५३॥ ध्यानं चतुर्विधम् ॥५४॥ आर्त्त च ।५५। रौद्रमपि ॥५६॥ धर्मध्यानं दशविधं ॥५७॥ शुक्लध्यानं चतुर्विधम् ॥५८॥ अष्टौ ऋद्धयः ॥५९॥ बुद्धिरष्टादशभेदाः ॥६०॥ विक्रि-याऋद्धिर्द्विविधा (क्रियाऋद्धिर्द्विविधा) ॥६१॥ विक्रियैकादशविधा ॥६२॥ तपःसप्तविधं ॥६३॥ बलं त्रिविधं ॥६४॥ भेषजमष्ट-विधम् ॥६५॥ रसः षड्विधः ॥६६॥ अक्षीणर्द्धि-र्द्विविधश्चेति ॥६७॥ पञ्चविधाः निर्ग्रन्थाः ॥६८॥ आचारश्च ॥६९॥ समा-चारं दशविधं ॥७०॥ सप्त परमस्थानानि ॥७१॥

॥ इति तृतीयोऽध्यायः ॥

□

अथ द्रव्यानुयोगवेदः

षड्द्रव्याणि ॥१॥ पञ्चास्तिकायाः ॥२॥ सप्त तत्त्वानि ॥३॥ नव पदार्थाः ॥४॥ चतुर्विधो न्यासः ॥५॥ द्विविधं प्रमाणं ॥६॥ पञ्च सज्ञानानि ॥७॥ त्रीण्यज्ञानानि ॥८॥ मतिज्ञानं षट्-त्रिंशदुत्तरत्रिशतभेदम् ॥९॥ द्विविधं श्रुतज्ञानं ॥१०॥ द्वादशा-ङ्गानि ॥११॥ चतुर्दश प्रकीर्णकानि ॥१२॥ त्रिविधमवधिज्ञानं ॥१३॥ द्विविधो मनःपर्ययश्च ॥१४॥ केवलमेकमसहायं ॥१५॥ नव नयाः ॥१६॥ सप्तभङ्गा इति ॥१७॥ पञ्च भावाः ॥१८॥ औपशमिको द्विविधः ॥१९॥ क्षायिको नवविधः ॥२०॥ अष्टा-दशविधः क्षायोपशमिकः ॥२१॥ औदयिक एकविंशतिविधः ॥२२॥ पारिणामिकस्त्रिविधः ॥२३॥ गुणजीवमार्गणास्थानानि प्रत्येकं चतुर्दश ॥२४॥ द्विविधमेकेन्द्रियम् ॥२५॥ विकलत्रयं ॥२६॥ पञ्चेन्द्रियं द्विविधं ॥२७॥ षट् पर्याप्तयः ॥२८॥ दश प्राणाः ॥२९॥ चतस्राः संज्ञाः ॥३०॥ गतिश्चतुर्विधा ॥३१॥ पञ्चेन्द्रि-याणि ॥३२॥ षड्जीवनिकायाः ॥३३॥ त्रिविधो योगः ॥३४॥ पञ्चदशविधो वा ॥३५॥ वेदस्त्रिविधः ॥३६॥ नवविधो वा ॥३७॥ चत्वारः कषायाः ॥३८॥ अष्टौ ज्ञानानि ॥३९॥ सप्त

संयमाः ॥४०॥ चत्वारि दर्शनानि ॥४१॥ षड्लेश्याः ॥४२॥ द्विविधं भव्यत्वं ॥४३॥ षड्विधा सम्यक्त्वमार्गणा ॥४४॥ द्विविधं संज्ञित्वं ॥४५॥ आहारोपयोगश्चेति ॥४६॥ पुद्गलाकाशकालास्रवाश्च प्रत्येकं द्विविधः ॥४७॥ बन्धहेतवः पञ्चविधाः ॥४८॥ बन्धश्चतुर्विधः ॥४९॥ अष्टकर्माणि ॥५०॥ ज्ञानावरणीयं पञ्चविधं ॥५१॥ दर्शनावरणीयं नवविधं ॥५२॥ वेदनीयं द्विविधम् ॥५३॥ मोहनीयमष्टाविंशतिविधं ॥५४॥ आयुश्चतुर्विधम् ॥५५॥ द्विचत्वारिंशद्विधं नाम ॥५६॥ द्विविधं गोत्रं ॥५७॥ पञ्चविधमन्तरायं ॥५८॥ पुण्यं द्विविधम् ॥५९॥ पापं च ॥६०॥ संवरश्च ॥६१॥ एकादश निर्जरा ॥६२॥ त्रिविधो मोक्षहेतुः ॥६३॥ द्विविधो मोक्षः ॥६४॥ द्वादश सिद्धस्यानुयोगद्वाराणि ॥६५॥ अष्टौ सिद्धगुणाः ॥६६॥

॥ इति चतुर्थोऽध्यायः ॥

卐 इति शास्त्रसारसमुच्चयः 卐